राष्ट्र-निष्ठा से परिपूर्ण समाजोन्मुखी व्यक्तित्व का उत्कर्ष

युगभारती अन्तरराष्ट्रीय अधिवेशन-2026

(इंद्रप्रस्थ)

26-27 सितंबर, 2026

के

अवसर पर प्रकाशित स्मारिका

युगप्रभा

(शिक्षा विशेषांक)

प्रकाशक

युगभारती

पंजीकरण संख्या-1272

युगप्रभा
शिक्षा विशेषांक

स्मारिका संरक्षक

आचार्य श्री ओम् शङ्कर त्रिपाठी जी
आचार्य श्री दीपक राजे जी

परामर्श

श्री अनुपम त्रिवेदी
श्री वीरेंद्र त्रिपाठी
डॉ. मोहन कृष्ण मिश्र

प्रबंध संपादक

डॉ. पंकज श्रीवास्तव

प्रधान संपादक

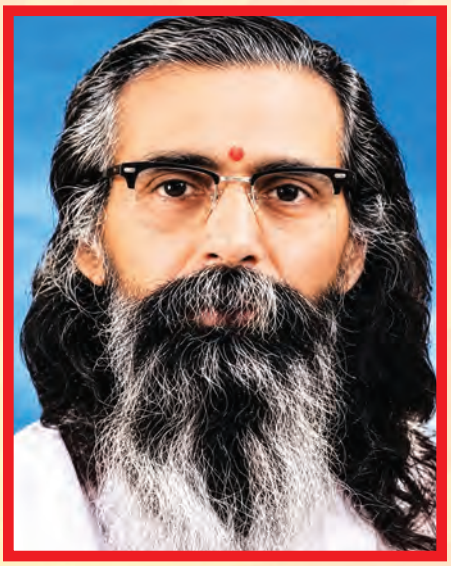
डॉ. पवन मिश्र

युगभारती अन्तरराष्ट्रीय अधिवेशन-2026
(इंद्रप्रस्थ)

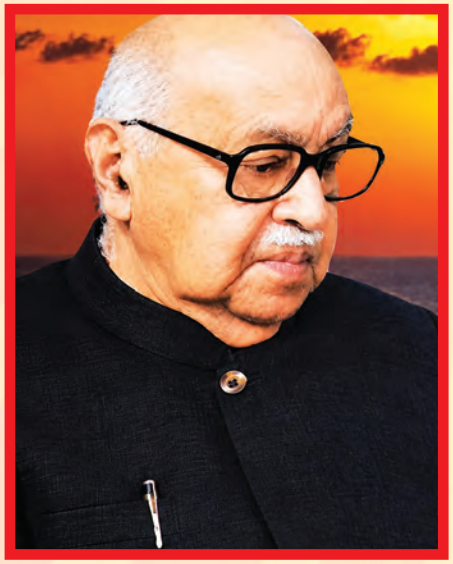
हमारे प्रेरणा स्रोत



पं. दीनदयाल उपाध्याय जी



परम पूज्य 'गुरु जी'



बैरिस्टर नरेन्द्रजीत सिंह जी



माँ सुशीला उपाख्य 'बूजी'

प्रार्थना

ॐ ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।।
न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं नापुनर्भवम्।
कामये दुःखतप्तानां प्राणिनाम् आर्तिनाशनम्।।

सर्वे भवन्तु सुखिनः।
सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु।
मा कश्चित् दुःखभाग्भवेत्।।

सतीश चन्द्र दुबे
Satish Chandra Dubey

सत्यमेव जयते

राज्य मंत्री
कोयला एवं खान
भारत सरकार
MINISTER OF STATE FOR
COAL & MINES
GOVERNMENT OF INDIA



शुभकामना संदेश

प्रिय सम्पादक मंडल एवं युगभारती परिवार,

पंडित दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय के पूर्व छात्रों के आत्मीय संगठन **'युगभारती'** द्वारा राष्ट्रीय अधिवेशन-2026 के पुनीत अवसर पर स्मारिका **'युगप्रभा' (शिक्षा विशेषांक)** के प्रकाशन का समाचार अत्यंत हर्ष का विषय है।

विद्यालय केवल पुस्तकीय ज्ञान के केंद्र नहीं होते, वे व्यक्ति के संस्कारों, चरित्र और राष्ट्रीय चेतना की आधारशिला होते हैं। मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता है कि इस विद्यालय से निकले पूर्व छात्र आज देश-विदेश के विभिन्न क्षेत्रों में अपनी प्रतिभा और कर्तव्यनिष्ठा से राष्ट्र निर्माण में अपना अमूल्य योगदान दे रहे हैं। 'युगभारती' का यह मंच आप सभी को अपनी जड़ों से जोड़े रखने और समाज के प्रति उत्तरदायित्व निभाने का एक सशक्त माध्यम है।

श्रद्धेय पंडित दीनदयाल जी के 'एकात्म मानववाद' और 'अंत्योदय' के महान दर्शन को आत्मसात करते हुए, आप सभी समाज के अंतिम व्यक्ति तक शिक्षा, स्वास्थ्य और सेवा का प्रकाश पहुँचाने का जो संकल्प ले रहे हैं, वह वंदनीय है।

मैं 'युगप्रभा' के शिक्षा विशेषांक के सफल प्रकाशन और राष्ट्रीय अधिवेशन की पूर्ण सफलता के लिए अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ। मुझे विश्वास है कि यह स्मारिका नई पीढ़ी के लिए प्रेरणा का एक सशक्त स्रोत बनेगी।

(सतीश चंद्र दुबे)

Office : Room No. 4201, 4th Floor, Zone-2, GPOA-3, Netaji Nagar, New Delhi-110023
Phone : +91-11-26773878, 20903147, 20903148, 20903149, E-mail : mos-mines@gov.in, mos-coal@gov.in
Delhi Residence : 15, Teen Murti Lane, New Delhi- 110011
Bihar Residence : Village- Harsari, P.O.- Narkatiaganj, P.S.- Shikarpur, Dist.- West Champaran, Bihar- 845455

ओम् शङ्कर
संस्थापक एवं संरक्षक युगभारती



संदेश

'युगप्रभा', 'युगभारती' का वार्षिक प्रकाशन है, विचारों का लिखित दस्तावेज है। भावनाओं का अक्षर-प्रवाह और कर्मशील अध्येताओं के व्यावहारिक देशप्रेम का एक अनुकरणीय नमूना है। हम सभी भारत माता की कोख से जन्मे सहोदर, अपने सनातनधर्मी विचारों को आधुनिक परिवेश के अनुकूल ढालते हुए, अपनी गौरवशाली परम्पराओं को सुरक्षित सहेजते हुए, जगत के भ्रमित मानस को सर्वप्रकारेण उद्‌बुद्ध करने का व्रतबंध अपनी दक्षिण भुजा पर बाँधकर आजीवन आगे से आगे बढ़ते रहें।

हमारा यह प्रयास केवल विचारों की अभिव्यक्ति तक सीमित न रहे, बल्कि समाज में चेतना, संस्कार, स्वावलम्बन और राष्ट्रभाव के जागरण का माध्यम भी बने। हमारी परम्परा की जड़ें जितनी गहरी हों, हमारे विचारों का आकाश उतना ही विस्तृत हो, यही हमारी कामना है। क्योंकि मेरा मानना है कि—

युगभारती माँ भारती के मौन का स्वर है,
ये संयम शक्ति सेवा साधना का दीप भास्वर है।
परम वैभव-समन्वित पूर्ण भारतवर्ष की वांछा,
कि जनमन स्वावलम्बी हो हमारी यही आकांक्षा॥

इन्हीं शुभेच्छाओं के साथ 'युगप्रभा' के इस नवीन अंक के सफल, सार्थक एवं व्यापक जनोपयोगी होने की मंगलकामना करता हूँ। यह प्रकाशन विचारों को दिशा दे, भावनाओं को अभिव्यक्ति दे और राष्ट्र तथा समाज के प्रति हमारे दायित्वबोध को और अधिक सुदृढ़ करे। इन्हीं हार्दिक शुभकामनाओं सहित।

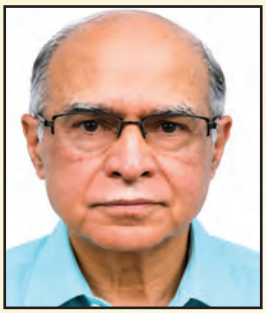
(ओम् शङ्कर)
संस्थापक एवं संरक्षक युगभारती

॥ श्री हरि ॥

श्री ब्रह्मावर्त सनातन धर्म महामण्डल

39/19 (39/8 पुराना) मेस्टन रोड, कानपुर - 208001

स्थापित सन् 1910



शुभकामना संदेश

भारत की राजधानी नई दिल्ली में दिनांक 26-27 सितम्बर को आयोजित होने वाले युग भारती के अन्तरराष्ट्रीय अधिवेशन के अवसर पर युग भारती की वैचारिक चेतना एवं रचनात्मक सरोकारों को अभिव्यक्त करने वाली पत्रिका 'युगप्रभा' के अधिवेशन विशेषांक के प्रकाशन पर ब्रह्मावर्त सनातन धर्म महामण्डल की ओर से सम्पादक-मण्डल को हार्दिक बधाई एवं मंगलमय शुभकामनाएँ।

'युगप्रभा' पं. दीनदयाल उपाध्याय जी द्वारा वंदित भारतीय संस्कृति, सनातन जीवन-मूल्यों, राष्ट्रचेतना एवं सामाजिक सरोकारों के प्रति जागरूकता का सशक्त माध्यम बने यही हमारी मंगलकामना है। यह विशेषांक विचार, संस्कार और सृजन की उस समृद्ध परम्परा को नई ऊर्जा प्रदान करे, जो भारतीय समाज को अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जोड़ते हुए उज्ज्वल भविष्य की दिशा दिखाती है।

अन्तरराष्ट्रीय अधिवेशन की सफलता एवं 'युगप्रभा' के निरन्तर यशस्वी प्रकाशन हेतु हार्दिक शुभकामनाएँ।

(वीरेन्द्रजीत सिंह)
अध्यक्ष

CA नीतू सिंह
संयुक्त सचिव / प्रबंध समिति

+91-8009336677
singhneetu1972@yahoo.com
@CANeetu_singh

संदेश

हार्दिक शुभकामनाएं



यह अत्यंत हर्ष एवं गौरव का विषय है कि युगभारती संस्था का अंतरराष्ट्रीय अधिवेशन आगामी 26 एवं 27 सितंबर, 2026 को भारत की राजधानी नई दिल्ली में आयोजित होने जा रहा है। यह आयोजन संस्था की गौरवशाली यात्रा, सुदृढ़ विचारधारा और राष्ट्र एवं समाज के प्रति उसकी निरंतर प्रतिबद्धता का महत्त्वपूर्ण प्रतीक है। इसी गरिमामयी अवसर पर संस्था की प्रतिष्ठित पत्रिका 'युगप्रभा' के अधिवेशन विशेषांक का प्रकाशन भी किया जा रहा है।

इस पावन एवं महत्त्वपूर्ण अवसर पर पंडित दीन दयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय प्रबंधतंत्र की ओर से 'युगप्रभा' के संपादक मंडल तथा समस्त युगभारती परिवार को हार्दिक बधाई, शुभकामनाएं एवं मंगलकामनाएं।

हमारे लिए यह अत्यन्त गर्व का विषय है कि आज से 55 वर्ष पूर्व पूज्य बूजी एवं बैरिस्टर साहब ने जिस महान दृष्टि, विचार और उद्देश्य के साथ इस विद्यालय की नींव रखी थी, उस पुनीत संकल्प को श्री वीरेन्द्र पराक्रमादित्य जी ने अपने कुशल नेतृत्व, दूरदृष्टि और अथक प्रयासों से निरंतर आगे बढ़ाया। आज विद्यालय उसी सुदृढ़ नींव और समृद्ध परंपरा पर निरंतर प्रगति करते हुए चरित्रवान, संस्कारवान, संवेदनशील एवं राष्ट्र के प्रति समर्पित युवाओं के निर्माण में अपने मूल उद्देश्य को पूरी निष्ठा से साकार कर रहा है।

युगभारती और हमारे विद्यालय का संबंध केवल संस्थागत नहीं, बल्कि विचार, संस्कार और आत्मीयता का संबंध है। हमें पूर्ण विश्वास है कि युगभारती के वरिष्ठ सदस्य एवं हमारे आदरणीय पूर्व छात्र आगे भी विद्यालय के विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करते रहेंगे, उन्हें अपने अनुभवों से समृद्ध करेंगे तथा जीवन में ऊंचे लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रेरित करते रहेंगे।

हमारी हार्दिक कामना है कि यह अन्तरराष्ट्रीय अधिवेशन संगठन की एकता, वैचारिक प्रतिबद्धता, सामाजिक सरोकार और राष्ट्र निर्माण के संकल्प को नई दिशा, व्यापकता और नई ऊर्जा प्रदान करेगा। यह अधिवेशन युगभारती की गौरवशाली यात्रा में एक और महत्त्वपूर्ण अध्याय जोड़ते हुए आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनेगा।

युगभारती संस्था के अन्तरराष्ट्रीय अधिवेशन के सफल एवं ऐतिहासिक आयोजन तथा 'युगप्रभा' के अधिवेशन विशेषांक के सफल एवं गरिमामयी प्रकाशन हेतु हार्दिक बधाई एवं अनंत मंगलकामनाएं।

शुभकामनाओं सहित,

नीतू सिंह
सचिव

School Code:- 70784

PT. DEEN DAYAL UPADHYAYA SANATAN DHARMA VIDYALAYA

(Governed by Shri Brahmavart Sanatan Dharma Mahamandal)

(CBSE Affiliation No. 2131647)

Nawabganj, Kanpur - 208002



शुभकामना–संदेश

प्रिय अध्यक्ष जी

सप्रेम नमस्कार।

युग भारती पं. दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय के उन पूर्व छात्रों की आत्मीय संस्था है, जिनके हृदय में आज भी अपने विद्यालय की सुखद स्मृतियाँ उसी प्रकार जीवंत हैं, जैसे अभी कल की ही बात हो। यह अत्यंत हर्ष और गौरव का विषय है कि इस विद्यालय से शिक्षा प्राप्त कर निकले विद्यार्थी आज देश–विदेश के विभिन्न क्षेत्रों में प्रतिष्ठित पदों पर आसीन होकर अपनी प्रतिभा, कर्तव्यनिष्ठा और सेवा–भाव से राष्ट्र के निर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

विद्यालय केवल पुस्तकीय ज्ञान प्रदान करने वाली संस्था नहीं होता, वह अपने विद्यार्थियों के व्यक्तित्व में जीवन–मूल्यों और संस्कारों के बीज भी रोपता है। पं. दीनदयाल उपाध्याय जी के एकात्म मानववाद, अंत्योदय, राष्ट्रनिष्ठा और समाज के अंतिम व्यक्ति के प्रति संवेदनशीलता के विचार हमारे विद्यालय की शैक्षिक चेतना का अभिन्न अंग हैं। यह संतोष का विषय है कि हमारे पूर्व छात्र इन आदर्शों को अपने जीवन और कर्म के माध्यम से निरंतर आगे बढ़ा रहे हैं। युग भारती का वार्षिक सम्मेलन इस आत्मीय परंपरा का जीवंत उत्सव है। वर्षों बाद जब विद्यालय के पूर्व छात्र एक दूसरे से मिलते हैं, तो पद, प्रतिष्ठा और भौगोलिक दूरियाँ पीछे छूट जाती हैं और सबके बीच केवल विद्यालय से जुड़ा आत्मीय रिश्ता शेष रह जाता है। ऐसे अवसर न केवल पुरानी स्मृतियों को पुनर्जीवित करते हैं, बल्कि नई पीढ़ी को अपनी गौरवशाली शैक्षिक एवं सांस्कृतिक विरासत से जोड़ने का कार्य भी करते हैं।

'युग प्रभा' का प्रकाशन इसी जीवंत परंपरा को शब्दों में सँजोने का सार्थक प्रयास है। यह पत्रिका पूर्व छात्रों के अनुभवों, उपलब्धियों और विचारों को एक साझा मंच प्रदान करने के साथ–साथ विद्यालय और उसके विशाल पूर्व छात्र परिवार के बीच संबंधों की सेतु बने, यही मेरी हार्दिक कामना है। मैं 'युग प्रभा' के प्रकाशन तथा युग भारती के वार्षिक सम्मेलन के लिए अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ। विश्वास है कि युग भारती की यह यात्रा निरंतर विस्तृत होती रहेगी और इसके सदस्य पं. दीनदयाल उपाध्याय जी तथा श्रद्धेय बैरिस्टर साहब के विचारों से प्रेरणा ग्रहण करते हुए समाज और राष्ट्र के प्रति अपने दायित्वों का निर्वहन करते रहेंगे। युग भारती का यह आत्मीय परिवार निरंतर समृद्ध हो, 'युग प्रभा' अपनी वैचारिक आभा से पाठकों को आलोकित करती रहे और विद्यालय की गौरवशाली परंपरा नई पीढ़ियों तक पहुँचती रहे, इसी मंगलकामना के साथ।

आपका शुभेच्छु

Tripathi.

राकेश राम त्रिपाठी

प्रधानाचार्य

Phone:- 9920090956, 9305463103

pddusdvkanpur@gmail.com/officepddusdv@gmail.com

www.ptdeendayal.edu.in

वीरेन्द्र त्रिपाठी
अध्यक्ष, युगभारती



शुभकामना संदेश

भाव प्रधान शैक्षिक वातावरण वाले पं. दीन दयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय से शिक्षा एवं संस्कार प्राप्त हम पूर्व छात्रों द्वारा संचालित संस्था युग भारती अपने अन्तरराष्ट्रीय अधिवेशन में 'विकसित भारत के लिये सुदृढ़ शिक्षा तंत्र' विषय पर विद्वानों और चिन्तकों के साथ विचार करने वाली है, यह अत्यंत हर्ष का विषय है।

आज देश की शिक्षा से संबंधित समस्याओं पर विचार तो किये जा रहे हैं परन्तु समाधान की दृष्टि से कोई सशक्त निर्णय लेकर कार्य करने की योजना नहीं दिखती।

युग भारती के संकल्पित राष्ट्रभक्त सदस्य, देश की वर्तमान शिक्षा पद्धति में क्या सुधार हो सकते हैं और व्यावहारिक रूप से कैसा तंत्र विकसित किया जाये, इस पर निष्कर्षात्मक विचार करने वाले हैं। अधिवेशन के अवसर पर युगप्रभा का शिक्षा विशेषांक प्रकाशित हो रहा है जिसमें विद्वान युगभारती सदस्यों तथा अन्य चिंतकों के लेख तथा युगभारती की गतिविधियों का सचित्र वर्णन भी होगा।

मैं अधिवेशन की सफलता तथा 'युगप्रभा' के शिक्षा विशेषांक हेतु संपादक मण्डल को बधाई तथा शुभकामनाएँ देता हूँ।

(वीरेन्द्र त्रिपाठी)
अध्यक्ष, युगभारती

डॉ. मोहन कृष्ण मिश्र
महामंत्री, युगभारती



शुभकामना संदेश

प्रिय संपादक मंडल,

यह अत्यंत हर्ष और गर्व का विषय है कि हमारी संस्था युगभारती की विचारधारा और रचनात्मक गतिविधियों को स्वर देने वाली पत्रिका "युगप्रभा" के नवीनांक का विमोचन इस वर्ष के अन्तरराष्ट्रीय अधिवेशन के अवसर पर हो रहा है।

"युगप्रभा" न केवल हमारे विचारों का वाहक है, बल्कि यह हमारी संस्कृति, सामाजिक सरोकारों और राष्ट्रीय चेतना को नई दिशा देने वाला सशक्त माध्यम भी है। "युगप्रभा" के माध्यम से, संस्था ने सदैव युग धर्म को केंद्र में रखकर, हमारे सदस्यों के साथ-साथ जनमानस को भी प्रेरणा, जानकारी और जागरूकता प्रदान की है।

मैं, समस्त युगभारती परिवार की ओर से, "युगप्रभा" के इस अंक के लिए हार्दिक शुभकामनाएं प्रकट करता हूं। मुझे विश्वास है कि यह अंक भी अपने पूर्ववर्ती अंकों की भांति विचारों की दृष्टि से समृद्ध, सामग्री में प्रासंगिक और प्रस्तुति में आकर्षक सिद्ध होगा।

इस अंक को साकार करने वाले सभी रचनाकारों, संपादकों एवं सहयोगियों को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएं।

आशा करता हूं कि "युगप्रभा" समाज में अपनी विशिष्ट पहचान को निरंतर सशक्त बनाए रखेगी।

सादर,

[डॉ. मोहन कृष्ण मिश्र]
महामंत्री, युगभारती

संपादक की लेखनी से...



आदरणीय पाठकवृन्द,

अत्यंत हर्ष, आत्मीयता और गौरव से भरे इस अवसर पर पं. दीन दयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय, कानपुर के पूर्व छात्रों द्वारा संचालित संस्था 'युगभारती' की वार्षिक पत्रिका 'युगप्रभा' का यह शिक्षा विशेषांक आपके सम्मुख प्रस्तुत करते हुए मन में एक सुखद संतोष का अनुभव हो रहा है। यह केवल एक पत्रिका के प्रकाशन का नहीं, बल्कि उन विचारों, अनुभूतियों, स्मृतियों और संस्कारों को शब्द देने का प्रयास है, जो वर्षों से हम सबको एक अदृश्य आत्मीय सूत्र में बांधे हुए हैं।

इस बार हमारा अधिवेशन 'शिक्षा' जैसे व्यापक और शाश्वत विषय को केंद्र में रखकर आयोजित हो रहा है। अत: स्वाभाविक ही है कि इस विशेषांक के अधिकांश लेख शिक्षा के व्यापक स्वरूप को अलग-अलग दृष्टियों से स्पर्श करते हैं। कहीं शिक्षा के उद्देश्य और उसकी दिशा पर विचार है, कहीं शिक्षक और विद्यालय की भूमिका पर मंथन, कहीं बदलते समय की चुनौतियां हैं, तो कहीं भारतीय जीवन-मूल्यों और संस्कारों के संदर्भ में शिक्षा को देखने का प्रयत्न। इन विविध विचारों के बीच शिक्षा की एक साझा आकांक्षा दिखाई देती है, जो ज्ञानवान पीढ़ी के साथ चरित्रवान और उत्तरदायी समाज का भी निर्माण करे। लेकिन 'युगप्रभा' केवल विचारों की पत्रिका नहीं है। इसके पृष्ठों में कुछ ऐसे आत्मीय संस्मरण भी हैं, जिनमें हमारे विद्यालयी जीवन की पदचाप सुनाई देती है। बीते हुए दिनों की वे स्मृतियां, जो समय के साथ और अधिक मूल्यवान होती जाती हैं, इस अंक को एक अलग संवेदना प्रदान करती हैं। अत: युगप्रभा का यह अंक मात्र लेखों और संस्मरणों का संकलन नहीं, बल्कि शिक्षा को लेकर हमारे सामूहिक चिंतन, अनुभव और सरोकारों का एक आत्मीय दस्तावेज है, व्यापक शैक्षिक विमर्श का विनम्र प्रयास है।

'युगप्रभा' के इस अंक को आकार देने में जिन लेखकों, सहयोगियों, मार्गदर्शकों और शुभेच्छुओं ने अपना समय, श्रम और स्नेह दिया है, संपादक मंडल उनके प्रति हृदय से कृतज्ञ है। विशेष रूप से विद्यालय के उन पूर्व छात्रों के प्रति, जिन्होंने अपनी स्मृतियों को शब्द देकर इस अंक को केवल पठनीय नहीं, बल्कि आत्मीय बनाया। हमें विश्वास है कि इन पृष्ठों से गुजरते हुए अनेक पाठक अपने हृदय के किसी कोने में सुरक्षित अपने विद्यालय को फिर से पा सकेंगे।

हम अपने पाठकों से भी यही अपेक्षा करते हैं कि वे 'युगप्रभा' को केवल पढ़ें नहीं, संवाद भी करें। अपने विचारों, अनुभवों और सुझावों से इसे समृद्ध करें, ताकि यह पत्रिका प्रत्येक वर्ष केवल प्रकाशित न हो, बल्कि हमारे सामूहिक चिंतन और आत्मीय जुड़ाव का जीवंत माध्यम बनती रहे।

आइए, इस अधिवेशन के अवसर पर हम शिक्षा को केवल ज्ञान अर्जन का माध्यम न मानकर मनुष्य-निर्माण और राष्ट्र-निर्माण की आधारशिला के रूप में देखें। विद्यालय से मिले ज्ञान और संस्कार को अपने जीवन में उतारें और यह प्रयास करें कि हमारी उपलब्धियां केवल हमारी व्यक्तिगत उन्नति का कारण न बनें, बल्कि समाज के लिए भी उपयोगी सिद्ध हों। क्योंकि अंतत: शिक्षा की सार्थकता उस प्रमाण-पत्र में नहीं होती, जो हमें विद्यालयी शिक्षा के उपरांत प्राप्त होता है, बल्कि उसकी सार्थकता उस व्यक्तित्व में होती है, जो हमारे भीतर आकार लेता है। यही शिक्षा की सार्थकता है, यही संस्कारों की विजय है, यही राष्ट्र-निर्माण की आधारभूमि है और यही 'युगभारती' के चिंतन तथा 'युगप्रभा' के इस विशेषांक का मूल प्रयोजन भी।

इसी विश्वास, कृतज्ञता और आत्मीयता के साथ 'युगप्रभा' का यह 'शिक्षा विशेषांक' आपको सादर समर्पित है।

सादर,

डॉ. पवन मिश्र

प्रधान संपादक, युगप्रभा

अधिवेशन गीत (भारत के कण-कण में)

ओम् शङ्कर
संस्थापक एवं संरक्षक युगभारती

भारत के कण-कण में अंकित गौरवगान हमारा है।
हम हिंदू हम हिंदीभाषी हिन्दुस्थान हमारा है॥
हम अनादि वैदिक ऋषियों की परंपरा के वाहक हैं,
सत्य शील संयम समाज-हित आदि गुणों के ग्राहक हैं।
शौर्य प्रमंडित आत्मबोध का जीवन दर्शन अपना है,
माना है हमने सदैव इस नश्वर जग को सपना है।
वसुधा भर परिवार हमारा यह ही अपना नारा है॥ 1॥
भारत के कण-कण में.....
सागर पर पत्थर तैराकर हमने राह बनायी है,
हिमनग के सर्वोच्च शिखर पर धर्मध्वजा फहरायी है।
आदितत्व के व्याख्याता हम, हम पौरुष के विग्रह हैं,
आदिशक्ति के प्रति आग्रह औ निर्बल हेतु अनुग्रह हैं।
सदाचरित संतुष्ट व्यक्ति को हमने सदा दुलारा है॥ 2॥
भारत के कण-कण में.....
तत्व सनातन अपना चिंतन और ज्ञान-जिज्ञासा है,
मन संसार-सार का खोजी चित्त अखण्डित आशा है।
भाव-संपदा अपनी अनुपम भुजबल की भी दौलत है,
समरांगण की विजय सुनिश्चित ही संगठन बदौलत है।
चक्रवर्तिता भावयुक्त सारा संसार हमारा है॥ 3॥
भारत के कण-कण में.....
हम सब हिन्दू बन्धु-बन्धु हिन्दुत्व हमारी पूजा है,
लगते हमको एकतत्व सब कोई न लगता दूजा है।
सर्वप्रेम का भाव हमारा दुष्टों को स्वीकार नहीं,
इसीलिए वे जहां कहीं हैं करते दुर्व्यवहार वहीं।
दुष्टकर्म के शमन हेतु संगठन-तंत्र स्वीकारा है॥ 4॥
भारत के कण-कण में.....
भारत मानवता का गौरव प्राणतत्व जगती का है,
सभी सुखी सब विरुज सुघड़ सब शुद्ध भाव सुगती का है ।
अत्याचार न करना हमको और न सहना आता है,
रहा विश्व के साथ हमेशा मानवता का नाता है।
जगज्जन्म से महाप्रलय तक का इतिहास हमारा है ॥ 5॥
भारत के कण-कण में.....
भारत दुनिया का भविष्य है वर्तमान मानवता का,
असहायों का सहयोगी है काल कुटिल दानवता का।
भारत ने अपना सुख तजकर पीड़ित की रक्षा की है,
भारत ने संपूर्ण जगत को संस्कृति की शिक्षा दी है।
भारत को अनुभव होता है सारा विश्व हमारा है॥ 6॥
भारत के कण-कण में.....
भारत ज्ञान ध्यान तप वाला एक अनोखा तीरथ है,
भारत का आदर्श तपस्वी राजा भक्त भगीरथ है।
भारत की तुलना केवल भारत से ही हो सकती है,
भोगभाव की भूखी दुनिया व्यर्थ जागती सोती है।
सचमुच ही भारत जगती का पथदर्शक ध्रुवतारा है॥ 7॥
भारत के कण-कण में अंकित गौरवगान हमारा है।
हम हिंदू हम हिंदीभाषी हिन्दुस्थान हमारा है॥

अनुक्रमणिका

1.	शिक्षा, अर्थात....	ओम् शङ्कर	15
2.	शिक्षा के साथ संस्कार जरूरी	राकेश राम त्रिपाठी	16
3.	संघ यात्रा के सौ वर्ष	अनुपम त्रिवेदी	19
4.	आधुनिक शिक्षा कैसी होनी चाहिए?	प्रमेन्द्र श्रीवास्तव	26
5.	गुरुकुल शिक्षा की प्रासङ्गिकता : वर्तमान समय के शिक्षा-संकट का समीचीन समाधान	प्रवीण अग्रवाल	34
6.	वर्तमान युग में शिक्षा, शिक्षक और कृत्रिम बुद्धिमत्ता	अजय कोष्टा	37
7.	भारतीय राजनीति में शिक्षा का स्थान एवं उसके दूरगामी परिणाम	डॉ. पंकज श्रीवास्तव	40
8.	शिक्षा का व्यवसायीकरण और गिरते मानक	डॉ. एस. के. अग्रवाल	45
9.	शिक्षे! तुम्हारा नाश हो, तुम नौकरी के हित बनी	डॉ. पवन मिश्र	46
10.	एआई के युग में शिक्षा: उत्तरों से अधिक जरूरी हैं सवाल	प्रभाकर बिसेन	50
11.	शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य : सोचने की क्षमता का विकास	देवर्षि मिश्र	53
12.	"एकात्म मानववाद" : भारतीयता का जीवन-दर्शन	प्रो. डॉ. मनोज अवस्थी	55
13.	शिक्षा और संस्कार	डॉ. पुरुषोत्तम नारायण वाजपेयी	59
14.	राष्ट्र के समग्र उत्थान एवं समृद्धि के लिए वित्तीय साक्षरता की महती आवश्यकता	प्रवीण कुमार द्विवेदी	60
15.	परीक्षा जीतने का विज्ञान	डॉ. उमेश्वर पांडेय	63
16.	पं. दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय, कानपुर	रवि गुप्त	66
17.	चींटी	प्रो. शुभेन्द्र सिंह परिहार	67
18.	मेरी दैनन्दिनी	हरि कान्त मिश्र	68
19.	युगभारती और मैं	अजय शंकर दीक्षित	70
20.	संस्कारों का मूर्त रूप- महाकुंभ सेवा शिविर	कुमार आनंद अग्रवाल	72
21.	विद्यालयों में स्वास्थ्य और शिक्षा में संबंध	अजय खन्ना	74
22.	विवेकानन्द समिति- शिक्षा, संस्कार और संवेदना का अभियान	विजय कुमार दीक्षित	75
23.	'मैं' से 'हम' की यात्रा	मृणाल गौड़	78
24.	शिक्षा का जीवन मूल्यों पर प्रभाव	अंकित तिवारी	81
25.	मिशन निडर	संदीप शुक्ल	84
26.	भारत को विश्वगुरु बनने के लिए अपनी जड़ों की ओर लौटना होगा	प्रतीक पांडे	86
27.	युगभारती आवासीय कार्यालय, कानपुर		87
28.	स्वस्थ भव		89
29.	युगभारती-शिव शक्ति प्राकृतिक आक्सीजन बैंक		92
30.	युगभारती चित्रमाला		94

काव्य-अनुभाग

31.	वंदना	सतीश चंद्र गुप्त	102
32.	शिक्षा	ओम् शङ्कर	103
33.	हमारा विद्यालय, हमारा अभिमान	सुनील तनेजा	104
34.	भक्ति	विवेक गुप्त	105

English Section

35.	Beyond Grades: Developing Internal Standards Through Education	Sanjay Kumar	106
36.	India's Higher Education at a Crossroads : Are We Losing Sight of Teaching in the Race for Research?	Prof. Shubhendra Singh Parihar	111
37.	हमारे विशिष्ट सहयोगी		114
38.	अधिवेशन आयोजन समिति		116
39.	युगप्रभारती प्रबन्धकारिणी समिति		117
40.	युगप्रभा सोपान		118

शिक्षा, अर्थात....

ओम् शङ्कर
संस्थापक एवं संरक्षक युगभारती



आज जब शिक्षा का विमर्श प्राय: अंकों, प्रमाण-पत्रों और व्यावसायिक उपलब्धियों तक सीमित होता जा रहा है, तब आदरणीय आचार्य श्री ओम् शंकर जी का प्रस्तुत आलेख भारतीय ज्ञान-परम्परा के उस शाश्वत आलोक की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करता है, जहां शिक्षा केवल ज्ञानार्जन नहीं, बल्कि आत्मजागरण, संस्कार-निर्माण और जीवन-दृष्टि का पर्याय है। आचार्य जी ने उपनिषदों के मर्मस्पर्शी सूत्रों के माध्यम से शिक्षा के उस व्यापक स्वरूप को उद्घाटित किया है, जो मनुष्य को बाह्य जगत् से जोड़ते हुए उसके अंतर्मन का भी परिष्कार करता है। इस आलेख में भाषा, भाव और विचार का ऐसा त्रिवेणी संगम प्रवाहित है, जो पाठक को बाह्य उपलब्धियों से आगे बढ़कर अंत:करण के आलोक में स्वयं को परखने की प्रेरणा देता है। विचारों की गरिमा, भाषा की लालित्यपूर्ण अभिव्यक्ति और भारतीय दर्शन की गहन अंतर्ध्वनि से अनुप्राणित इस लेख को हम अपने आदरणीय पाठकों के समक्ष सादर समर्पित करते हैं। हमें विश्वास है कि यह केवल पढ़ा ही नहीं जाएगा, बल्कि मनन का विषय बनेगा और शिक्षा के वास्तविक स्वरूप पर एक सार्थक विमर्श का द्वार भी उद्घाटित करेगा।

प्रिय आत्मन् !

अब आपलोग धीरे-धीरे युगभारती के बोधचिह्न, बोधवाक्य और नित्य ध्यानाभ्यास में होने वाली प्रार्थना से सुपरिचित हो गये हैं। थोड़ा सा विचार करेंगे, तो पाएंगे कि इस सबका मूलाधार है "शिक्षा"।

शिक्षा संस्कार है, शिक्षा विचार है, शिक्षा मानवीय जीवन का आधार है। तैत्तिरीय उपनिषद के प्रथम अध्याय में ऋषि कहता है "शिक्षा उच्चारण का शास्त्र है।" ध्यान देंगे, तो स्पष्ट होगा कि उच्चारण और बोलना, दोनों एक ही नहीं हैं। संसार का प्रत्येक जीव बोलता है, किन्तु उच्चरित करने की क्षमता केवल मनुष्य के पास ही है। हम सभी ने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा में स्वर और व्यञ्जन पढ़े हैं। ध्यान रहे अपने बच्चों को अंग्रेजी भाषायी संस्कार देने वाले अभिभावक मेरे इस मानवीय भावमूलक ज्ञान को समझ नहीं पायेंगे। अत: उनको मेरा यह लेख शायद व्यर्थ ही लगे। किन्तु ध्यान रहे शिक्षा के इसी मौलिक बोध के अभाव में आज की युवा पीढ़ी विकृतियों का शिकार हो रही है।

अत: भाव और भाषा एक दूसरे के पूरक होने के साथ ही व्यवहार का आधार भी हैं, यह भी ध्यान रखने की आवश्यकता है। इसी भाव और भाषा के पल्लवन से विचारों का उद्गम और निगमन होता है। इसी प्रकार के विचार से परिपोषित होकर ऋषि ईशावास्योपनिषद में सन्देश देता है कि,

"विद्यां च अविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह। अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते॥"

यह अध्यात्म अधिलोक, अधिज्योतिष, अधिविद्य, अधिप्रज का अन्तिम चरण है। संसार से लेकर आत्म तक के सिलसिलेवार इस वर्णन से हम समझ सकते हैं कि हमारे ऋषियों ने हमको किस प्रकार से शिक्षित किया है कि हम नानाविध सांसारिक झंझा-झकोरों को झेलते हुए भी लाखों वर्षों से अपने सनातनत्व को निर्मूल होने से बचाए हुए हैं।

सारांश यह है कि पाठ्यक्रम, परीक्षा, विषय-विस्तार आदि ये सब शिक्षा के साधन हैं। साध्य तो आत्मानुभूति के साथ ही परमात्मसत्ता-सृजित सृष्टि के साथ सामंजस्य बनाते हुए बिना किसी भ्रम और भय के इस जीवन को आनंदोल्लास के साथ जीना और संपूर्ण विघ्न-बाधाओं को आत्मशक्ति और आत्मनिर्भरता के साथ पार करना है। जो शिक्षा पराश्रयी बनाती हो वह शिक्षा नहीं ट्रेनिंग भर है। अस्तु॥

शिक्षा के साथ संस्कार जरूरी

राकेश राम त्रिपाठी



प्रधानाचार्य, पं. दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय, कानपुर

सर्वप्रथम यह जानना जरूरी है कि शिक्षा क्या है? शिक्षा शास्त्र में व्यक्तित्व के संतुलित एवं संपूर्ण विकास को शिक्षा माना है। शिक्षा मनुष्य के शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा के विकास की प्रणाली है। अर्थात यह कहना अच्छा होगा कि शिक्षा मनुष्य के सर्वांगीण विकास की प्रणाली है। शिक्षा का सम्बन्ध जितना व्यक्ति से है, उससे अधिक समाज से है। व्यक्ति का चरित्र, व्यक्तित्व, संस्कृति, चिंतन, सूझबूझ, कुशलताएं, आदतें तथा जीवन की छोटी से छोटी बात शिक्षा पर निर्भर हैं। शिक्षा के माध्यम से एक बालक का शारीरिक, मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास होता है। बालक इसके माध्यम से राष्ट्रीय ख्याति और संस्कृति को ग्रहण करता है। स्वामी विवेकानन्द जी ने कहा था "बालक को ऐसी शिक्षा दी जानी चाहिए जिसमें उसका चरित्र बने, बुद्धि का विकास हो, मानसिक शक्ति का विकास हो और वह अपने पैरों पर खड़ा हो सके।" व्यक्ति के साथ ही राष्ट्र का विकास शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए। व्यक्ति में श्रद्धाभाव का विकास कर उसमें ऐसे संस्कार पैदा किए जाएं कि वह देश हित को अपना हित समझे।

शिक्षा एक संस्कार प्रक्रिया है। भारतीय संस्कृति में शिक्षा को पवित्रतम् प्रक्रिया माना गया है। गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है कि "न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते" (गीता 4.38)। अर्थात ज्ञान के समान दूसरी कोई पवित्रतम चीज नहीं है। महाभारत में कहा गया है कि "नास्ति विद्या समं चक्षु" अर्थात विद्या के समान कोई दूसरा नेत्र नहीं है। स्वामी विवेकानन्द जी ने शिक्षा के आधार पर कहा है कि शिक्षा विविध जानकारियों का ढेर नहीं है, जो तुम्हारे मस्तिष्क में भर दिया जाय और जो आत्मसात् हुए बिना वहां आजन्म पड़ा रहकर गड़बड़ मचाया करता है। हमें उन विचारों की अनुभूति कर लेने की जरूरत है जो जीवन निर्माण, मनुष्य निर्माण तथा चरित्र निर्माण में सहायक हो। श्री अरविंद के अनुसार "बालक की प्रकृति में जो कुछ सर्वोत्तम, सर्वाधिक अंतर का और जीवनपूर्ण है उसको करना ही शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए। बालक की सच्ची शिक्षा वही है, जो कि बालक के समस्त पक्षों का विकास करे। उसके जीवन, मस्तिष्क और आत्मा, व्यक्तिगत और सामाजिक स्थिति सभी में उसके सर्वांगीण विकास में योगदान दे।" श्री अरविंद अंतर-राष्ट्रीयता के प्रबल समर्थक होते हुए भी कट्टर राष्ट्रवादी थे। वे यह मानते थे कि संसार में सब जगह मानव आवश्यकताएं समान हैं तथा ज्ञान एवं सत्य किसी देश की सीमा में बांधे नहीं जा सकते, किंतु फिर भी प्रत्येक देश का अपना स्वधर्म होता है, एक स्वभाव होता है। उसी के अनुसार उसका विकास करना चाहिए। अरविंद जी ने अपनी बात को जारी रखते हुए कहा है कि "हम जिस शिक्षा की खोज में हैं, वह भारतीय आत्मा, आवश्यकता स्वभाव और संस्कृति के लिए उपयुक्त शिक्षा है, केवल ऐसी शिक्षा नहीं जो भूतकाल के प्रति ही आस्था रखती हो बल्कि भारत की विकासमान आत्मा के प्रति उसकी आत्मोन्नति की महानता के प्रति और शाश्वत आत्मा के प्रति आस्था रखती है।"

संस्कार क्या है ?

एक बालक के जीवन में माता-पिता और गुरु की भूमिका बहुत ही महत्त्वपूर्ण होती है। संस्कार कोई पढ़ाने वाली चीज नहीं, यह एक सीखने की प्रक्रिया है जो बालक समाज को देखकर उसका अनुकरण करता है। यदि शिक्षा के साथ संस्कार नहीं हो पाया तो सोचिए उस बालक का भविष्य कैसा होगा? आज समाज में अराजकता है, भ्रष्टाचार के साथ-साथ मनुष्य अपने मनुष्यत्व को भी खो चुका है। तो प्रश्न उठता है कि क्या आज देश में शिक्षा में कमी है या फिर वही व्यक्ति भ्रष्टाचार में लिप्त है जो

अशिक्षित है। नहीं भ्रष्टाचार में बड़े-बड़े अधिकारी से लेकर, सामान्य क्लर्क तथा पढ़े-लिखे राजनेता भी लिप्त हैं। इसका कारण यह है कि वे उच्च शिक्षा तो ग्रहण किए हैं लेकिन उनको शिक्षा के साथ संस्कार नहीं दिए गए। ऐसे लोगों को अध्यात्म का ज्ञान नहीं दिया गया। ये केवल किताबी ज्ञान से ही बड़े पदों तक पहुंचे हैं। प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति में शिक्षित और साक्षर में अंतर होता था। साक्षर व्यक्ति भी अशिक्षित हो सकता है और निरक्षर व्यक्ति भी पूर्ण शिक्षित। काशी में बैठकर ज्ञान-विज्ञान की पोथियों में रमे पंडितों को चुनौती देने वाले कबीर निरक्षर ही तो थे। कबीर के अनुसार "मसि कागद छूयो नहीं, कलम गह्यों नहिं हाथ।" लेकिन वे पूर्ण शिक्षित थे। तुलसीदास, सूरदास एवं रहीम की बात करें तो वे सभी शिक्षित व्यक्ति थे जिनका जीवन संस्कारों से परिपूर्ण था क्योंकि इनके अंदर भारत का अध्यात्म था।

अब प्रश्न उठता है कि संस्कार कैसे दिए जाएँ? मां को बालक का प्रथम गुरु माना गया है। बालक मां के गर्भ से ही सीखना शुरू कर देता है। इसलिए गर्भावस्था के दौरान मां का भोजन, आचार-विचार तथा उसके मस्तिष्क का स्वस्थ होना बालक के लिए बहुत मायने रखता है। हमारे शास्त्रों में उल्लेख है कि गर्भावस्था के दौरान मां को अच्छे साहित्य जैसे रामायण, गीता एवं महाभारत जैसी धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन कराना चाहिए, इससे गर्भ में पल रहे बालक के अंदर संस्कार रूपी बीज पड़ते हैं। मां के शुद्ध सात्विक भोजन करने के साथ ही साथ उनकी सकारात्मक सोच बालक के स्वस्थ मस्तिष्क का निर्माण करती है। लेकिन आज के युग में मां अपनी इन जिम्मेदारियों से च्युत होती नजर आ रही है। इस प्रकार बालक की प्रथम गुरु मां से ही जो मिलना चाहिए वह नहीं मिल पा रहा है।

पंडित दीन दयाल उपाध्याय ने कहा है कि "यदि हम बड़ों में संस्कार होंगे तो वे बच्चों को सहज ही मिलेंगे, गुलाब में सुगंध होगी तो वही स्वत: ही लोगों की नाक में घुस जायेगी।" बच्चों पर अच्छे संस्कार डालने के लिए माता का भक्त, पिता का योगी और आचार्य का ज्ञानी होना अत्यंत आवश्यक है। उनका कहना था कि यदि माता अवगुणों से मुक्त होगी तो निश्चित रूप से मंदिररूपी गर्भ में पल रहा बालक, आध्यात्मिक होगा। बालक अपने परिवार के रहन-सहन एवं बड़ों से बहुत कुछ सीखता है। बालक की शिक्षा में स्वयं बालक, उसके अभिभावक, अध्यापक, शिक्षा देने वाली संस्था, शासन समाज और आधुनिक काल के प्रसार माध्यम आदि सभी घटक व्यक्ति और समाज की सामूहिक शिक्षा का स्वस्थ पर्यावरण बनाते हैं।

बालक जब बड़ा होता है तथा विद्यालय में शिक्षा ग्रहण करने के लिए अपने कदम विद्यारूपी मंदिर में रखता है तो वहां शिक्षक की बहुत महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी हो जाती है उस बालक के सर्वांगीण विकास में शिक्षक का आचार-विचार, व्यवहार बोलने का तरीका, कपड़े पहनने का तरीका ये सब कुछ बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। शिक्षक वह पथ प्रदर्शक होता है जो हमें केवल किताबी ज्ञान नहीं बल्कि जीवन जीने की कला सिखाता है। देश के द्वितीय राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने कहा था कि शिक्षक वह नहीं जो बच्चों के दिमाग में तथ्यों को जबरन ठूंसे, बल्कि वास्तविक शिक्षक वह है जो उसे आने वाले कल की चुनौतियों के लिए तैयार करे। डाक्टर संपूर्णानंद ने कहा कि साधारणत: शिक्षक योगी नहीं होता, पर उसका भाव वही होना चाहिए जो किसी योगी का अपने शिष्य के प्रति होता है। अनेक शरीरों में भ्रमते हुए आज इसने नर देह पाई है और मेरे पास छात्र के रूप में आया है। यदि मैं इसको ठीक मार्ग पर ला सकता हूं तथा मैं इसके चरित्र के यथोचित विकास प्राप्त करने में बल लगा सका तो समाज का भला होगा। ऐसा भाव शिक्षक के मन में होना चाहिए।

वर्तमान युग के बदलते सामाजिक, आर्थिक समीकरण के बीच लोगों में आई नैतिक मूल्यों में गिरावट जैसे गंभीर समय में शिक्षकों की भूमिका बहुत ही महत्त्वपूर्ण होती है। यदि देखा जाए तो कई महान उदाहरण हमारे सामने आते हैं, क्या शिवाजी वास्तव में छत्रपति शिवाजी बन पाते यदि उन्हें समर्थ गुरु रामदास जैसे गुरु न मिलते? स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने भारतीय संस्कृति का वैश्विक शंखनाद करने वाले विवेकानन्द को दिशा दी। क्या अर्जुन गुरु द्रोणाचार्य के आशीर्वाद के बिना एक महान धनुर्धर बन पाते। या फिर स्वामी हरिदास के सान्निध्य के बिना तानसेन की तान में मिठास संभव थी। यह सब उनके गुरुओं का ही प्रताप था। इतिहास में ऐसे करोड़ों पन्ने रोशन हो रहे हैं जो उनको गुरुओं की ही देन हैं। यदि देखा जाए तो लोग गुरु और

शिक्षक में भेद समझते हैं। गुरु का तात्पर्य आध्यात्मिक गुरु से है जबकि शिक्षक का तात्पर्य शिक्षा देने से है। मतलब शिक्षक पढ़ाने का काम करता है और गुरु अध्यात्म की कड़ी को जोड़ कर परमात्मा से साक्षात्कार करवाता है। ये कुछ हद तक सही है, लेकिन शिक्षक का भी आध्यात्मिक होना जरूरी है। प्राचीन समय में जितने भी शिक्षक शिक्षा देने का कार्य करते थे वे सभी अध्यात्म की ऊंची सीढ़ियों पर आसीन थे। इसलिए प्राचीन समय के शिष्य ज्ञानार्जन के साथ ही साथ शिष्टाचार और अनुशासन में कुशल थे। आज लोग शिक्षित हो रहे हैं लेकिन जीवन में अनुशासन नहीं है। इस लड़खड़ाई व्यवस्था के लिए शिक्षक जिम्मेदार हैं। शिक्षक और शिष्य का सम्बन्ध अच्छा होना भी एक महत्त्वपूर्ण पहलू है। आज के समय में जहां बच्चे शुरू से ही फिल्म/फ़ैशन एवं आधुनिकता से प्रभावित हैं वहीं शिक्षक भी इससे वंचित नहीं हैं। इसलिए समाज को अच्छी दिशा देने के लिए अच्छे लोगों का शिक्षण कार्य में आना जरूरी है। शिक्षक का काम है वह अपने शिष्यों को सही और गलत का ज्ञान कराएं। लेकिन सर्वप्रथम शिक्षक को खुद भी इन रास्तों पर चलना होगा। प्राचीन समय में एक शिक्षक को अपने बेटे से ज्यादा शिष्य पर भरोसा होता था। एक उदाहरण मैं द्रोणाचार्य का देना चाहता हूं। एक बार राजा द्रुपद ने द्रोणाचार्य को यह कहकर अपमानित किया था कि मित्रता बराबरी के लोगों के बीच ही होती है। द्रोणाचार्य ने कभी अपने पुत्र अश्वत्थामा से अपेक्षा नहीं की कि वह इस अपमान का बदला ले, उन्होंने अपने शिष्य पांडवों से इस अपमान का बदला लेने को कहा। फिर अर्जुन ने युद्ध जीतकर द्रुपद को बंदी बनाकर गुरु चरणों में लाकर रख दिया। शिक्षक अपने अनुकरणीय और पवित्र आचरण के कारण विद्यार्थी के लिए आदर्श बनता है। वह अपनी आत्मा के प्रकाश से विद्यार्थी के अंत:करण को प्रकाशित करता है। शिक्षक और विद्यार्थी के आध्यात्मिक सम्बन्धों की भूमि पर ही यह प्रक्रिया संपन्न होती है। भारतीय शिक्षा के इतिहास में शिक्षक के पद को गौरवान्वित करने वाले महान तपस्वी ऋषियों की परंपरा रही है, जिनके सम्मान में सम्राट भी अपना सिंहासन छोड़कर खड़े हो जाते थे। वर्तमान काल में भी भारतीय संस्कृति एवं आदर्शों के अनुरूप शिक्षा के स्वरूप को यदि विकसित करना है तो शिक्षकों को हमें वही प्रतिष्ठा प्रदान करनी होगी। भले ही भावना की अभिव्यक्ति के रूप में भिन्न हो। शिक्षकों को भी अपना जीवन इस पद की गरिमा के अनुरूप ढालना होगा। इस प्रकार माता-पिता और गुरु मिलकर आदर्श व्यक्ति, आदर्श समाज एवं चैतन्य राष्ट्र का निर्माण कर सकते हैं।

सत्यं वद। धर्मं चर। (तैत्तिरीय उपनिषद् 1.11.1) सत्य बोलो और धर्म का आचरण करो। यह दीक्षांत का उपदेश है।

❖❖❖

(स्वाध्यायान्मा प्रमदः। (तैत्तिरीय उपनिषद् 1.11.1) स्वयं अध्ययन करने में कभी लापरवाही मत करो।)

संघ यात्रा के सौ वर्ष

अनुपम त्रिवेदी (1982 बैच)



(यह लेख पुस्तक "RSS@100-एक सदी संकल्प की" से प्रेरित है जिसका विमोचन भारत के माननीय उप-राष्ट्रपति द्वारा जुलाई, 2026 में किया गया था। इसमें संघ की 100 वर्षों की गौरवशाली यात्रा को संक्षेप में प्रस्तुत करने और समझने का प्रयास किया गया है। साथ ही, चूंकि इस वर्ष युगभारती शिक्षा पर विशेष चर्चा का आयोजन कर रही है, इस लेख में संघ के शिक्षा कार्य पर विस्तार से चर्चा की गयी है।)

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) की स्थापना के सौ वर्ष पूरे होने का अवसर मात्र समय का एक पड़ाव नहीं, बल्कि उस मौन क्रांति पर चिंतन करने का क्षण भी है, जिसने आधुनिक भारत की चेतना को भीतर ही भीतर गढ़ा है। 1925 में नागपुर से शुरू हुई एक छोटी-सी पहल ने एक शताब्दी में जिस व्यापक सामाजिक यात्रा का रूप लिया, वह केवल किसी संगठन के विस्तार की कहानी नहीं है। यह एक विचार, एक साधना और एक सामाजिक प्रयोग की कहानी है, जिसने व्यक्ति के चरित्र, समाज की एकता और राष्ट्र के प्रति कर्तव्यबोध को अपने कार्य का केंद्र बनाया।

डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार ने ऐसे समय में संघ की स्थापना की, जब भारत राजनीतिक पराधीनता के साथ-साथ सामाजिक और सांस्कृतिक विखंडन से भी जूझ रहा था। स्वतंत्रता का संघर्ष अनेक धाराओं में आगे बढ़ रहा था। क्रांतिकारी आंदोलन, कांग्रेस का राजनीतिक संघर्ष, गांधीजी का असहयोग आंदोलन और विभिन्न सामाजिक सुधार प्रयास अपने-अपने ढंग से देश को जाग्रत कर रहे थे। डॉ. हेडगेवार ने इन धाराओं को निकट से देखा था। उनके सामने धीरे-धीरे एक अधिक बुनियादी प्रश्न आकार लेने लगा था—क्या केवल सत्ता परिवर्तन भारत की समस्या का समाधान कर सकता है? क्या राजनीतिक स्वतंत्रता तब स्थायी हो सकती है, जब समाज भीतर से कमजोर, विभाजित और आत्मविश्वासहीन हो?

उनके अनुभव ने उन्हें इस निष्कर्ष की ओर पहुंचाया कि राष्ट्र की स्थायी शक्ति समाज के भीतर से निर्मित होती है। राष्ट्रीय पुनर्जागरण का आधार ऐसे नागरिकों का निर्माण होना चाहिए, जो अनुशासित, निस्स्वार्थ, आत्मविश्वासी और समाज के प्रति उत्तरदायी हों। इसी सोच ने 27 सितंबर 1925, विजयादशमी के दिन नागपुर में संगठनात्मक रूप लिया।

शुरुआत छोटी थी, लेकिन लक्ष्य दीर्घकालिक। संघ ने किसी तात्कालिक राजनीतिक अभियान के बजाय नियमित शाखा के माध्यम से व्यक्ति-निर्माण को अपनी कार्यपद्धति बनाया। खेल, व्यायाम, अनुशासन, प्रार्थना, बौद्धिक चर्चा और सामूहिक अभ्यास के माध्यम से स्वयंसेवक के भीतर समयपालन, सहयोग, साहस, आत्मसंयम और कर्तव्यबोध विकसित करने का प्रयास किया गया। शाखा में सामाजिक भेदों को पीछे छोड़कर साथ खड़े होने और साथ काम करने का अभ्यास भी इसी प्रक्रिया का हिस्सा था। सामाजिक एकता केवल वैचारिक घोषणा न रहे, बल्कि दैनिक व्यवहार का हिस्सा बने, यह संघ की कार्यशैली का आरंभिक आधार था।

इसका सूत्र सरल था—व्यक्ति से समाज और समाज से राष्ट्र।

यही सूत्र आगे चलकर संघ की पूरी यात्रा को समझने की एक कुंजी बन गया। शाखा व्यक्ति को तैयार करती थी; तैयार व्यक्ति समाज में जाता था और समाज के विभिन्न क्षेत्रों में काम करते हुए वही व्यक्ति राष्ट्र-निर्माण की व्यापक प्रक्रिया का हिस्सा बनता गया।

एक विचार से एक विस्तृत सामाजिक तंत्र तक

धीरे-धीरे शाखाएं नागपुर से बाहर पहुंचीं। प्रचारक व्यवस्था विकसित हुई और व्यक्ति से व्यक्ति तथा स्थान से स्थान तक संगठन का विस्तार होता गया। डॉ. हेडगेवार के बाद माधव सदाशिव गोलवलकर 'गुरुजी' के नेतृत्व में संघ का व्यापक विस्तार हुआ और उसका वैचारिक आधार भी अधिक स्पष्ट हुआ।

स्वतंत्रता के अंतिम वर्षों ने संघ की कार्यपद्धति की एक दूसरी विशेषता सामने रखी। संघ ने स्वयं को राजनीतिक आंदोलन के रूप में विकसित नहीं किया, लेकिन समाज के संगठन और राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण को अपना मूल कार्य बनाए रखा। 1947 में देश स्वतंत्र हुआ, लेकिन विभाजन की त्रासदी ने स्वतंत्रता के उत्सव को गहरे मानवीय संकट में बदल दिया। लाखों लोग विस्थापित हुए। शरणार्थियों से भरी रेलगाड़ियां दिल्ली और पंजाब पहुंचीं। शिविरों में भोजन, पानी, स्वच्छता और प्राथमिक सहायता की तत्काल आवश्यकता थी।

ऐसे समय में स्वयंसेवक राहत के काम में उतर गए। रेलवे प्लेटफॉर्मों पर अस्थायी रसोईघर बनाए गए, भोजन और पानी पहुंचाया गया, शरणार्थी शिविरों में स्वच्छता के कार्य हुए। किंग्सवे कैंप और करोल बाग जैसे शिविरों में अस्थायी शौचालयों की व्यवस्था की गई। अज्ञात मृतकों के सम्मानजनक अंतिम संस्कार में स्वयंसेवकों ने भूमिका निभाई और हिंसा के बीच फंसे परिवारों को सुरक्षित स्थानों तक पहुंचाने में सहायता की। यह सेवा किसी घोषित कार्यक्रम के रूप में नहीं आई थी। परिस्थिति सामने थी और स्वयंसेवक उसमें उतर गए। आगे चलकर सेवा-दृष्टि का एक महत्त्वपूर्ण सूत्र यही बना : जहां आवश्यकता दिखाई दे, वहां दायित्व दिखाई देना चाहिए।

स्वतंत्रता के तुरंत बाद संघ को अपने इतिहास की सबसे कठिन परीक्षाओं में से एक से भी गुजरना पड़ा। महात्मा गांधी की हत्या के बाद 5 फरवरी 1948 को संघ पर प्रतिबंध लगा। हजारों स्वयंसेवक गिरफ्तार हुए और अनेक शाखाएं बंद कर दी गईं। जुलाई 1949 में प्रतिबंध हटा। यह समय बाहरी संकट के साथ-साथ आत्ममंथन और संगठनात्मक पुनर्संरचना का भी था। प्रतिबंध के बाद संघ का विस्तार रुका नहीं। अगले दशकों में शिक्षा, श्रम, विद्यार्थी जीवन, जनजातीय क्षेत्रों, ग्रामीण विकास, सामाजिक सेवा और सांस्कृतिक गतिविधियों सहित अनेक क्षेत्रों में उससे प्रेरित संस्थाओं और प्रयासों का विस्तार हुआ।

यह परिवर्तन महत्त्वपूर्ण था। यदि समाज को मजबूत बनाना है, तो केवल शाखा का विस्तार पर्याप्त नहीं होगा। समाज को शिक्षा चाहिए, स्वास्थ्य चाहिए, श्रमिक और विद्यार्थी जीवन में संगठन चाहिए, ग्रामीण और जनजातीय क्षेत्रों में विकास चाहिए और सबसे बढ़कर उन लोगों तक पहुंचना चाहिए, जो विकास की मुख्यधारा से दूर रह गए हैं। इसी सोच ने संघ की सामाजिक उपस्थिति को धीरे-धीरे बहुआयामी बनाया।

भारतीय मजदूर संघ, अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद्, वनवासी कल्याण आश्रम, विद्या भारती, संस्कार भारती, सेवा भारती और अन्य संस्थाएं इसी व्यापक प्रक्रिया की अलग-अलग अभिव्यक्तियां बनीं।

शिक्षा के क्षेत्र में संघ—व्यक्ति-निर्माण से राष्ट्र-निर्माण तक

संघ के सेवा क्षेत्रों में शिक्षा का स्थान विशिष्ट है। क्योंकि शिक्षा केवल एक सेवा नहीं है। शिक्षा व्यक्ति के भीतर परिवर्तन का सबसे स्थायी माध्यम है। राहत किसी संकट को कम कर सकती है, स्वास्थ्य किसी बीमारी को ठीक कर सकता है, आजीविका किसी परिवार को आर्थिक आधार दे सकती है, लेकिन शिक्षा व्यक्ति की क्षमता, दृष्टि और आत्मविश्वास को बदलकर आने वाली पीढ़ियों तक प्रभाव डाल सकती है। संघ की शिक्षा-दृष्टि इसी व्यापक समझ पर आधारित रही है। शिक्षा का अर्थ केवल परीक्षा पास करना या रोजगार प्राप्त करना नहीं है। प्रश्न यह है कि शिक्षा से कैसा व्यक्ति तैयार हो रहा है? क्या उसमें ज्ञान के साथ अनुशासन है? क्या उसमें संवेदना है? क्या वह अपने समाज के प्रति उत्तरदायित्व समझता है? क्या उसमें अपनी सांस्कृतिक विरासत के प्रति आत्मबोध और अपने राष्ट्र के प्रति कर्तव्य की भावना है?

इसी दृष्टि का सबसे व्यापक संस्थागत रूप विद्या भारती के माध्यम से दिखाई देता है। देशभर में इसके अंतर्गत 22,000 से अधिक औपचारिक और अनौपचारिक विद्यालय एवं शिक्षा केंद्र तथा लगभग 1,500 छात्रावास संचालित हैं। इनसे 35 लाख से अधिक विद्यार्थी और लगभग डेढ़ लाख आचार्य जुड़े हुए हैं। यह संख्या अपने आप में केवल एक संगठनात्मक विस्तार का संकेत नहीं है। यह उस प्रयास के आकार को बताती है, जिसमें शिक्षा को व्यक्ति-निर्माण और सामाजिक परिवर्तन के साधन के रूप में देखा गया है।

इन संस्थानों में आधुनिक शिक्षा के साथ भारतीय मूल्यबोध, योग, संस्कृत, नैतिक शिक्षा, सांस्कृतिक विरासत और सामाजिक उत्तरदायित्व को जोड़ने का प्रयास किया जाता है। दूरस्थ, सीमावर्ती और जनजातीय क्षेत्रों में शिक्षा की पहुंच बढ़ाना इस कार्य का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है। शिक्षा को जीवन से जोड़ने और विद्यार्थी को केवल ज्ञान का उपभोक्ता नहीं, बल्कि समाज का उत्तरदायी सदस्य बनाने का प्रयास इस दृष्टि के केंद्र में है।

इसका अर्थ यह नहीं कि आधुनिक विषयों या आधुनिक ज्ञान का स्थान कम हो जाता है। बल्कि प्रयास यह है कि आधुनिक शिक्षा और भारतीय जीवन-दृष्टि के बीच एक संबंध बनाया जाए। विज्ञान और तकनीक का ज्ञान हो, लेकिन उसके साथ समाज के प्रति संवेदना भी हो। प्रतियोगिता की क्षमता हो, लेकिन सहयोग का संस्कार भी हो। व्यक्ति अपने भविष्य के लिए तैयार हो, लेकिन अपने समाज से कटे नहीं। यही कारण है कि शिक्षा का यह मॉडल केवल कक्षा तक सीमित नहीं रहता। विद्यालय, छात्रावास, खेल, योग, संस्कृत, सांस्कृतिक गतिविधियां और सामाजिक सहभागिता मिलकर विद्यार्थी के व्यक्तित्व को आकार देने की प्रक्रिया का हिस्सा बनते हैं।

विशेष रूप से छात्रावासों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। दूरस्थ और जनजातीय क्षेत्रों के अनेक बच्चों के लिए विद्यालय तक पहुंचना ही पर्याप्त नहीं होता; रहने, भोजन और निरंतर शिक्षा की व्यवस्था भी आवश्यक होती है। इसलिए शिक्षा को केवल स्कूल खोलने के बजाय एक संपूर्ण सामाजिक वातावरण से जोड़ने का प्रयास किया गया। छात्रावास इस दृष्टि से केवल रहने की जगह नहीं, बल्कि अनुशासन, सामूहिक जीवन और आत्मनिर्भरता सीखने का माध्यम भी बनते हैं।

जनजातीय क्षेत्रों में शिक्षा का प्रश्न और भी व्यापक है। वहां विद्यालय केवल पाठ्यक्रम नहीं पहुंचाता; वह पहली बार किसी बच्चे को व्यापक अवसरों की दुनिया से जोड़ सकता है। वनवासी कल्याण आश्रम जैसे प्रयासों में शिक्षा, छात्रावास, स्वास्थ्य, खेल और आजीविका को साथ लेकर चलने की कोशिश इसी व्यापक सोच का हिस्सा है। उद्देश्य केवल बाहरी सहायता पहुंचाना नहीं, बल्कि स्थानीय समाज को अपनी क्षमता के आधार पर आगे बढ़ने में सक्षम बनाना है।

शिक्षा का एक और महत्त्वपूर्ण आयाम भाषा और संस्कृति से जुड़ता है। संस्कृत भारती जैसे संघ के प्रयासों ने संस्कृत को केवल ग्रंथों और परंपरा की भाषा के रूप में देखने के बजाय सामान्य संवाद की भाषा बनाने का प्रयास किया। संभाषण आधारित शिविरों के माध्यम से संस्कृत को लोगों के दैनिक जीवन के करीब लाने की कोशिश हुई। भाषा यहां केवल विषय नहीं रहती; वह सांस्कृतिक आत्मविश्वास का माध्यम बनती है।

शिक्षा के इसी व्यापक अर्थ में संस्कार का प्रश्न आता है। ज्ञान व्यक्ति को सक्षम बनाता है, लेकिन संस्कार उस क्षमता की दिशा तय करते हैं। केवल प्रतिभाशाली व्यक्ति तैयार करना पर्याप्त नहीं है। प्रश्न यह है कि वह प्रतिभा समाज के लिए क्या करेगी। इसलिए शिक्षा और सेवा के बीच भी एक स्वाभाविक संबंध दिखाई देता है। कोई विद्यार्थी आगे चलकर स्वयं शिक्षक बनता है, कोई डॉ., कोई इंजीनियर, कोई उद्यमी, कोई सामाजिक कार्यकर्ता। यदि शिक्षा के साथ समाज के प्रति दायित्वबोध जुड़ा हो, तो व्यक्तिगत उपलब्धि धीरे-धीरे सामाजिक योगदान में बदल सकती है। यही वह बिंदु है जहां शिक्षा व्यक्ति-निर्माण से आगे बढ़कर राष्ट्र-निर्माण का साधन बनती है।

शिक्षा का सामयिक स्वरूप

भारत की विविधता के कारण शिक्षा का प्रश्न हर जगह एक जैसा नहीं है। हिमालयी क्षेत्रों में कठिन भौगोलिक परिस्थितियां अलग चुनौतियां प्रस्तुत करती हैं। उत्तर-पूर्व में जनजातीय और दूरस्थ समुदायों तक शिक्षा पहुंचाने की आवश्यकता अलग है। ग्रामीण भारत में विद्यालय, छात्रावास और कौशल विकास के प्रश्न अलग हैं। शहरों की झुग्गियों में बच्चों को शिक्षा से जोड़ने की चुनौती अलग है। इसलिए शिक्षा के क्षेत्र में एक ही मॉडल को हर जगह लागू करने के बजाय स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार काम करने की प्रवृत्ति दिखाई देती है।

भौगोलिक और सामाजिक आवश्यकताओं के अनुसार कहीं विद्यालय है, कहीं छात्रावास। कहीं बाल शिक्षा केंद्र है, कहीं संस्कृत का संभाषण शिविर। कहीं ग्रामीण बच्चों के लिए शिक्षा और स्वास्थ्य को साथ जोड़ा गया है, कहीं जनजातीय युवाओं के लिए खेल और कौशल विकास को शिक्षा का हिस्सा बनाया गया है। कहीं शहर की बस्ती में स्वयंसेवक बच्चों को पढ़ाता है, तो कहीं दूरदराज के क्षेत्र में शिक्षक और छात्रावास किसी पूरे समुदाय के लिए अवसर का नया द्वार बन जाते हैं।

यही शिक्षा के काम को केवल संस्थानों की संख्या से अलग बनाता है। विद्यालय एक भवन हो सकता है; शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है।

सेवा—शिक्षा का स्वाभाविक विस्तार

संघ की सेवा-दृष्टि में भी शिक्षा को इसलिए विशेष स्थान मिला है कि सेवा का अंतिम उद्देश्य केवल तत्काल सहायता देना नहीं, बल्कि व्यक्ति को अपने पैरों पर खड़ा करना है। दाता और ग्रहणकर्ता की दूरी कम करना, निर्भरता पैदा करने के बजाय क्षमता निर्माण करना और बड़े अभियानों से अधिक निरंतरता को महत्त्व देना इसी सोच के हिस्से हैं।

1947 के विभाजन से लेकर 1950 के असम भूकंप, 1993 के लातूर भूकंप, 2001 के भुज भूकंप और 2013 की केदारनाथ आपदा तक स्वयंसेवकों ने राहत और पुनर्वास में भाग लिया। समय के साथ यह समझ और स्पष्ट हुई कि संकट के समय भोजन और दवा पहुंचाना आवश्यक है, लेकिन संकट समाप्त होने के बाद जीवन को फिर से खड़ा करना उससे भी बड़ी जिम्मेदारी है।

इसीलिए सेवा का क्षेत्र आपदा राहत से आगे बढ़कर शिक्षा, स्वास्थ्य, आजीविका, ग्रामीण विकास और सामाजिक सशक्तीकरण तक फैला। सेवा भारती और उससे जुड़े प्रयासों में निर्धन बस्तियों और ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा, स्वास्थ्य शिविर, महिला समूह, छात्रावास, वृद्धाश्रम, दिव्यांग सहायता और आजीविका से जुड़े अनेक कार्य विकसित हुए।

दक्षिण भारत में महिलाओं के स्वयं सहायता समूहों और छोटे उद्यमों से लेकर ग्रामीण युवाओं के कौशल विकास तक, सेवा सहायता से आगे बढ़कर आर्थिक आत्मविश्वास का माध्यम बनती है। कहीं महिलाएं छोटे उत्पाद बनाकर आय अर्जित करती हैं, कहीं बेरोजगार युवा स्थानीय संसाधनों के आधार पर छोटे उद्यम खड़े करते हैं। यहां शिक्षा और आत्मनिर्भरता एक-दूसरे से जुड़ते हैं। शिक्षा केवल विद्यालय में नहीं होती। कौशल सीखना भी शिक्षा है। किसी महिला को अपना छोटा उद्यम चलाना सिखाना भी शिक्षा है। किसी ग्रामीण युवक को स्थानीय संसाधनों का उपयोग कर रोजगार खड़ा करने का कौशल देना भी शिक्षा है। इस अर्थ में सेवा का अंतिम लक्ष्य व्यक्ति को सक्षम बनाना है।

आपातकाल और सार्वजनिक जीवन की दूसरी परीक्षा

संघ की शताब्दी यात्रा केवल शिक्षा और सेवा की कहानी नहीं है। इसके बीच अनेक राजनीतिक और सामाजिक परीक्षाएं भी आईं।

1975 का आपातकाल ऐसा ही एक निर्णायक पड़ाव था। संघ पर प्रतिबंध लगा और उसके अनेक कार्यकर्ता गिरफ्तार हुए। भूमिगत रहकर स्वयंसेवकों ने संदेश पहुंचाए, नेताओं और कार्यकर्ताओं को सुरक्षित स्थानों तक पहुंचाने में सहायता की,

गुप्त साहित्य के प्रसार में सहयोग किया और बंदी कार्यकर्ताओं के परिवारों की सहायता की। अनेक स्वयंसेवकों ने यातनाएं सहीं और कुछ ने अपने प्राण भी गंवाए।

इस दौर ने संगठनात्मक अनुशासन और नागरिक साहस की परीक्षा ली। सामान्य परिस्थितियों में शाखा, शिक्षा, सेवा और समाज निर्माण में लगा संगठन असामान्य परिस्थितियों में किस तरह अपने कार्यकर्ताओं को संगठित रख सकता है, यह भी सामने आया।

राम जन्मभूमि : संघ यात्रा का एक निर्णायक अध्याय

1980 और 1990 के दशक में राम जन्मभूमि का प्रश्न राष्ट्रीय जीवन के केंद्र में आया और इस आंदोलन में संघ की भूमिका भी व्यापक रूप से सामने आई। संघ ने इसे केवल मंदिर निर्माण का प्रश्न नहीं माना, बल्कि भारतीय सभ्यतागत स्मृति, सांस्कृतिक आत्मबोध और राष्ट्रीय चेतना से जुड़े एक व्यापक प्रश्न के रूप में देखा। 1984 की प्रथम धर्म संसद, 1989 में अयोध्या में शिलान्यास और 1990 के व्यापक कारसेवा आंदोलन इस यात्रा के प्रमुख पड़ाव बने। संघ से जुड़े स्वयंसेवकों और उससे प्रेरित संगठनों ने इस पूरे अभियान में संगठन, जनसंपर्क और सामाजिक लामबंदी के स्तर पर महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

1992 में विवादित ढांचे का पतन हुआ और उसके बाद देश में व्यापक उथल-पुथल का वातावरण बना। इस पूरे अध्याय में संघ की भूमिका को लेकर बहस भी हुई और अनेक राजनीतिक तथा सामाजिक मतभेद सामने आए। संघ ने राम जन्मभूमि के प्रश्न का वैचारिक समर्थन किया, लेकिन 6 दिसंबर 1992 की घटना की योजना या नेतृत्व का श्रेय स्वयं को नहीं दिया। उसकी ओर से संवाद, संयम और वैधानिक समाधान पर जोर दिए जाने की बात सामने आती रही।

इसके बाद राम जन्मभूमि का प्रश्न एक लंबे न्यायिक चरण में प्रवेश कर गया। आंदोलन के वर्षों के बाद नवंबर 2019 में सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय निर्णायक मोड़ बना और मंदिर निर्माण का मार्ग प्रशस्त हुआ। 5 अगस्त 2020 को भूमि पूजन के बाद निर्माण का औपचारिक आरंभ हुआ और 22 जनवरी 2024 को अयोध्या में श्रीराम मंदिर की प्राण-प्रतिष्ठा हुई।

संघ की शताब्दी यात्रा में राम जन्मभूमि का यह अध्याय इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि इसमें उसकी सांस्कृतिक दृष्टि, संगठनात्मक क्षमता और दीर्घकालिक सामाजिक सक्रियता एक साथ दिखाई देती है। 1990-92 का आंदोलन, उसके बाद की लंबी न्यायिक प्रक्रिया, 2019 का निर्णय और 2024 की प्राण-प्रतिष्ठा, संघ के लिए एक ऐसे अध्याय की परिणति रहे, जो दशकों तक उसके सांस्कृतिक और सार्वजनिक जीवन के विमर्श का महत्त्वपूर्ण हिस्सा बना रहा।

संघ के सौ वर्ष शाखा विस्तार से समाज निर्माण तक

सौ वर्षों में संघ का विस्तार बहुत बड़ा हुआ है। देशभर में 83,000 से अधिक दैनिक शाखाएं और 44,000 से अधिक अतिरिक्त साप्ताहिक या मासिक मिलन चल रहे हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य, आजीविका और आपदा राहत सहित 1.3 लाख से अधिक सेवा प्रकल्पों का उल्लेख मिलता है। लेकिन इन आंकड़ों का अर्थ केवल संख्या नहीं है। इनके पीछे एक ऐसी कार्यपद्धति है, जो व्यक्ति को संगठन से और संगठन को समाज से जोड़ती है।

शिक्षा के क्षेत्र में हजारों संस्थानों और केंद्रों से जुड़े लाखों विद्यार्थी और शिक्षक इस व्यापक प्रयास का एक आयाम हैं। श्रमिकों, विद्यार्थियों, किसानों, जनजातीय समुदायों, महिलाओं, युवाओं और विभिन्न सामाजिक समूहों के बीच विकसित संस्थाएं इसके दूसरे आयाम हैं। विदेशों में हिंदू स्वयंसेवक संघ के माध्यम से सांस्कृतिक और सामाजिक गतिविधियां विकसित हुई। राष्ट्र सेविका समिति ने महिलाओं की संगठित सहभागिता का अपना स्वतंत्र मार्ग बनाया।

इन सभी धाराओं के भीतर एक साझा सूत्र दिखाई देता है— व्यक्ति अपने से बड़े उद्देश्य के लिए स्वयं को तैयार करे। शाखा व्यक्ति को तैयार करती है। शिक्षा उसकी क्षमता को आकार देती है। सेवा उस क्षमता को समाज के लिए उपलब्ध कराती

है। और इन तीनों का अंतिम लक्ष्य एक ऐसे नागरिक का निर्माण है, जो अपने से बड़े उद्देश्य के लिए जीने और काम करने की क्षमता रखता हो।

1925 की पहली शाखा से 1947 की विभाजन-पीड़ा तक, 1948 के प्रतिबंध से 1975 के आपातकाल तक, 1990-92 के राम जन्मभूमि आंदोलन से 2024 की प्राण-प्रतिष्ठा तक, संघ की यात्रा अनेक ऐतिहासिक उतार-चढ़ावों से गुजरी है। इन घटनाओं के बीच उसकी कार्यपद्धति में एक निरंतरता दिखाई देती है— दैनिक अनुशासन, संगठन, सामाजिक संपर्क और सेवा।

एक सदी की मौन साधना

संघ आधुनिक भारत के निर्माण में एक ऐसी अभिन्न शक्ति रहा है, जिसने लंबे समय तक प्रसिद्धि से दूर रहते हुए अपना काम किया। उसने राजनीतिक दल बने बिना राजनीति को प्रभावित किया; विश्वविद्यालयों का स्वामित्व लिए बिना विचारों को गढ़ा; और सेनाएं संचालित किए बिना चरित्र निर्माण किया। यह यात्रा न तो केवल प्रशंसा से समझी जा सकती है, न केवल आलोचना से। इसे समझने के लिए उसके विचारों के साथ उसके जमीनी काम को देखना होगा।

सौ वर्ष बाद संघ की यात्रा का एक महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष यही सामने आता है कि राष्ट्र केवल संस्थाओं से नहीं बनता। राष्ट्र उन नागरिकों से बनता है, जो संकट में खड़े होते हैं, अपने समय और क्षमता को समाज के लिए देते हैं, अपने अधिकारों के साथ अपने दायित्वों को भी समझते हैं और अपने से कमजोर व्यक्ति को अपने ही समाज का हिस्सा मानती है।

परन्तु राष्ट्र-निर्माण कोई एक बार पूरा हो जाने वाला कार्य नहीं है। यह रोज का अभ्यास है। शाखा में, विद्यालय में, गांव में, अस्पताल में, किसी छात्रावास में, किसी जनजातीय बस्ती में, किसी झुग्गी की छोटी कक्षा में, किसी स्वयं सहायता समूह में, किसी आपदा के बीच या किसी स्वयंसेवक के नि:शब्द निर्णय में। यही वह धारा है, जो एक छोटी शाखा से शुरू होकर एक शताब्दी की यात्रा में विस्तृत हुई।

यदि संघ की पहली शताब्दी जागरण की थी, तो दूसरी शताब्दी उस जागरण को जीवन में उतारने की साधना की हो सकती है। एक ऐसी सभ्यता की शांत यात्रा, जो अपने ही प्रकाश में आगे बढ़ना सीख चुकी है; जो अपनी जड़ों से शक्ति लेती है, लेकिन भविष्य की ओर खुले मन से देखती है; और जो अपने प्रकाश को केवल अपने लिए नहीं, बल्कि दूसरों के लिए भी दिशा बनाने में सक्षम होती है।

पहली शताब्दी ने एक विचार को संगठन में, संगठन को समाज में और समाज कार्य को एक व्यापक राष्ट्रीय साधना में बदलते देखा है। दूसरी शताब्दी की चुनौती इस विरासत को आगे ले जाने की है। आज भारत एक ऐसे मोड़ पर खड़ा है जहां आत्मविश्वास बढ़ रहा है, आकांक्षाएं बड़ी हो रही हैं और दुनिया में उसकी भूमिका भी बदल रही है। ऐसे समय में राष्ट्र-निर्माण की चुनौती केवल विकास की गति की नहीं, बल्कि विकास के साथ चरित्र, संवेदना, सामाजिक एकता और कर्तव्यबोध को बनाए रखने की भी है। आधुनिकता और आत्मबोध, शक्ति और विनम्रता, प्रगति और सामाजिक उत्तरदायित्व के बीच संतुलन ही आने वाले भारत की एक बड़ी कसौटी होगा। संघ की अगली शताब्दी भी इसी व्यापक राष्ट्रीय यात्रा का हिस्सा होगी।

एक सदी की यह यात्रा अंतत: किसी अंतिम पड़ाव की कहानी नहीं है। यह उस सतत प्रवाह की कहानी है, जिसमें व्यक्ति बनता है, समाज जुड़ता है, सेवा संस्कार बनती है और राष्ट्र सशक्त होता है। भारत जैसे-जैसे 2047 में अपनी आजादी के सौ वर्ष पूरे करने की ओर आत्मविश्वास के साथ बढ़ रहा है, संघ की कहानी को समझना और भी जरूरी हो गया है। न केवल यह जानने के लिए कि हम कहां से आए हैं, बल्कि यह समझने के लिए भी कि हम कहां जा रहे हैं।

संघ विचार : एक अविरल प्रवाह

वृक्ष के नीचे होने वाली एक छोटी-सी प्रार्थना से लेकर खुले आकाश के नीचे हजारों स्वयंसेवकों के सामूहिक घोष तक, संघ की सौ वर्षों की यात्रा यह बताती है कि प्रतिदिन जिए गए विचार साम्राज्यों और पीढ़ियों से भी अधिक स्थायी होते हैं। बदलते समय और परिस्थितियों के बीच भी राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ अपने उस मूल विश्वास पर अडिग रहा है कि भारत का पुनर्जागरण उसकी आत्मा के जागरण से ही संभव है। इसी विश्वास से प्रेरित होकर संघ ने राष्ट्रीय जीवन पर प्रभुत्व स्थापित करने का नहीं, बल्कि उसके आधारों को भीतर से मजबूत करने का प्रयास किया है—व्यक्ति, विचार और जीवन के माध्यम से।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सौ वर्ष की परिणति केवल एक शताब्दी का उत्सव नहीं बल्कि यह इस बात का प्रमाण है कि धैर्य, मूल्यों और निरंतर प्रयास पर आधारित कार्य कितनी दूर तक प्रभाव छोड़ सकता है। यह हमें स्मरण कराता है कि किसी सभ्यता की वास्तविक शक्ति केवल संपत्ति या सत्ता में नहीं, बल्कि उसके लोगों के चरित्र में निहित होती है।

जब संघ अपनी दूसरी शताब्दी में प्रवेश कर रहा है, तब संभव है कि आगे का हर मोड़ उसे स्पष्ट दिखाई न देता हो, पर उसकी दिशा स्पष्ट है—धर्म उसका आधार है, सेवा उसका मार्ग और एकता उसका लक्ष्य। उसका उद्देश्य केवल किसी संरचना को बनाए रखना नहीं, बल्कि उस चेतना को जीवित रखना है, जो अंधकार के बीच भी नए दीप जलाती रहती है।

संघ की पहली शताब्दी अब इतिहास का हिस्सा बन चुकी है। आने वाली शताब्दी उन लोगों की होगी, जो इस ज्योति को आगे लेकर चलने का संकल्प करेंगे।

दीपशिखा न क्षीयते, केवलं प्रदीप्यते।

ऋतं च स्वाध्यायप्रवचने च। (तैत्तिरीय उपनिषद् 1.9.1) सत्य के साथ-साथ पढ़ना और पढ़ाना, दोनों चलते रहें।

❖❖❖

(यान्यस्माकं सुचरितानि तानि त्वयोपास्यानि, नो इतराणि। (तैत्तिरीय उपनिषद् 1.11.2) गुरु कहते हैं : हमारे केवल अच्छे आचरणों को अपनाना, बाकी को नहीं।)

आधुनिक शिक्षा कैसी होनी चाहिए?

प्रमेन्द्र श्रीवास्तव (1986 बैच)



प्रस्तावना

शिक्षा किसी भी राष्ट्र की आत्मा तथा उसके भविष्य की आधारशिला होती है। किसी देश की वास्तविक उन्नति केवल उसकी आर्थिक, सैन्य अथवा प्राकृतिक संपदा से नहीं, बल्कि उसकी शिक्षा व्यवस्था की गुणवत्ता से निर्धारित होती है। यदि शिक्षा का उद्देश्य केवल परीक्षा उत्तीर्ण कर नौकरी प्राप्त करना रह जाए, तो वह सीमित उद्देश्य की पूर्ति करती है। किंतु यदि शिक्षा व्यक्ति में चरित्र, विवेक, रचनात्मकता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, साहस, नैतिकता तथा समाज और राष्ट्र के प्रति उत्तरदायित्व का विकास करे, तभी वह वास्तविक शिक्षा कहलाती है।

वर्तमान समय में हमारी शिक्षा व्यवस्था का प्रमुख लक्ष्य अच्छे अंक प्राप्त करना, प्रतियोगी परीक्षाओं में सफलता हासिल करना तथा रोजगार प्राप्त करना बन गया है। परिणामस्वरूप हम कुशल कर्मचारी तो तैयार कर रहे हैं, परंतु मौलिक वैज्ञानिक, तकनीकी नवप्रवर्तक, नीति-निर्माता, समाज-सुधारक तथा राष्ट्र-निर्माता अपेक्षित संख्या में तैयार नहीं कर पा रहे हैं। शिक्षा का उद्देश्य केवल यह नहीं होना चाहिए कि विद्यार्थी "क्या सोचे", बल्कि यह भी होना चाहिए कि वह "कैसे सोचे", "तर्क कैसे करे", "नए समाधान कैसे खोजे" तथा "समाज के हित में ज्ञान का उपयोग कैसे करे"।

भारत के प्राचीन शिक्षा-दर्शन में शिक्षा का लक्ष्य व्यक्ति का सर्वांगीण विकास था। गुरुकुलों में केवल भाषा, गणित या शास्त्रों का अध्ययन ही नहीं कराया जाता था, बल्कि सत्य, धर्म, कर्तव्य, समाज-सेवा, आत्मसंयम, नेतृत्व, आत्मरक्षा तथा प्रकृति के प्रति उत्तरदायित्व की शिक्षा भी दी जाती थी। आधुनिक शिक्षा को भी इसी समग्र दृष्टिकोण को अपनाना होगा।

1. शिक्षा और तकनीकी विकास

आज विश्व में वही राष्ट्र विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अग्रणी हैं जिन्होंने अपनी शिक्षा व्यवस्था में बचपन से ही रचनात्मकता (Creativity), नवाचार (Innovation), वैज्ञानिक प्रयोग तथा समस्या समाधान (Problem Solving) को स्थान दिया है। विद्यालयों में बच्चों को केवल पुस्तकीय ज्ञान तक सीमित नहीं रखा जाता, बल्कि उन्हें प्रयोगशालाओं, तकनीकी परियोजनाओं, रोबोटिक्स, प्रोग्रामिंग, डिज़ाइन तथा वास्तविक समस्याओं के समाधान विकसित करने के लिए प्रेरित किया जाता है।

भारत में भी प्राथमिक स्तर से ही विद्यार्थियों में निम्न गुण विकसित किए जाने चाहिए-

- रचनात्मक एवं स्वतंत्र चिंतन
- वैज्ञानिक दृष्टिकोण
- तर्क एवं विश्लेषण क्षमता
- प्रयोग करने की प्रवृत्ति
- तकनीकी नवाचार
- अनुसंधान एवं खोज की मानसिकता
- टीमवर्क तथा नेतृत्व क्षमता

विद्यालयों में प्रत्येक छात्र से छोटे-छोटे विज्ञान मॉडल, मोबाइल ऐप, रोबोट, कृषि उपकरण, पर्यावरण संरक्षण से जुड़े समाधान तथा स्थानीय समस्याओं के तकनीकी मॉडल तैयार कराए जा सकते हैं। इससे विद्यार्थियों में आत्मविश्वास बढ़ेगा और वे केवल ज्ञान के उपभोक्ता नहीं, बल्कि ज्ञान के सृजनकर्ता बनेंगे।

आज भारत में लाखों प्रतिभाशाली अभियंता, वैज्ञानिक और शोधार्थी हैं, परंतु उनमें से बड़ी संख्या विदेशी उद्योगों और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए कार्य करती है। यह स्थिति केवल प्रतिभा की कमी के कारण नहीं, बल्कि नवाचार के लिए अनुकूल वातावरण, अनुसंधान संस्कृति तथा उद्योग-शिक्षा समन्वय की कमी के कारण भी उत्पन्न होती है। यदि विद्यालय स्तर से ही अनुसंधान एवं नवाचार की संस्कृति विकसित की जाए, तो भारत में भी अधिक मौलिक तकनीकों का विकास संभव है।

भारतीय ज्ञान-परम्परा में भी गणित, धातु विज्ञान, आयुर्वेद, वास्तु, खगोल विज्ञान तथा चिकित्सा के अनेक उल्लेख मिलते हैं। इन विषयों का अध्ययन आधुनिक वैज्ञानिक पद्धति और प्रमाण-आधारित दृष्टिकोण के साथ कराया जाना चाहिए। इससे विद्यार्थियों में अपनी बौद्धिक विरासत के प्रति सम्मान भी उत्पन्न होगा और वैज्ञानिक सोच भी विकसित होगी।

साथ ही, नवाचार को प्रोत्साहित करने वाली नीतियों का निर्माण भी आवश्यक है। शिक्षा व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए जो केवल परीक्षा लेने तक सीमित न रहे, बल्कि विद्यार्थियों के नए विचारों को प्रयोगशालाओं, उद्योगों और स्टार्टअप तक पहुंचाने में भी सहायता करे।

2. शिक्षा, तर्कशीलता एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण

भारतीय शिक्षा-दर्शन में ज्ञान का आधार केवल प्रत्यक्ष दृश्य संसार नहीं, बल्कि तर्क, प्रमाण, अनुभव और विवेक भी माना गया है। किसी भी निष्कर्ष तक पहुंचने से पूर्व तथ्य, प्रमाण और तार्किक विश्लेषण आवश्यक हैं। यही आधुनिक वैज्ञानिक पद्धति (Scientific Method) का भी आधार है।

महर्षि कपिल ने सांख्य दर्शन में ज्ञान प्राप्ति की प्रक्रिया का अत्यंत गहन विवेचन किया है।

सामान्यतस्तु दृष्टादतीन्द्रियाणां प्रतीतिरनुमानात्।
तस्मादपि चासिद्धं परोक्षमाप्तागमात् सिद्धम्॥

हिन्दी भावार्थ

सामान्यत: मनुष्य प्रत्यक्ष अनुभव और अनुमान के आधार पर अदृश्य विषयों को समझने का प्रयास करता है, किन्तु अनेक परोक्ष सत्य केवल प्रत्यक्ष इन्द्रियों से सिद्ध नहीं होते। उनके अस्तित्व का ज्ञान उनके प्रभावों, युक्तिसंगत प्रमाणों तथा विश्वसनीय ज्ञान-स्रोतों से होता है।

शिक्षा से सम्बन्ध

यह श्लोक विद्यार्थियों को सिखाता है कि किसी भी निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले केवल दिखाई देने वाली बातों पर निर्भर न रहें, बल्कि प्रमाण, तर्क, अनुभव तथा विश्वसनीय स्रोतों का भी अध्ययन करें। आधुनिक विज्ञान में गुरुत्वाकर्षण, विद्युत-चुम्बकीय क्षेत्र, परमाणु, डार्क मैटर अथवा अनेक अदृश्य शक्तियों का अस्तित्व भी उनके प्रभावों के आधार पर स्वीकार किया जाता है।

इसी प्रकार महर्षि कपिल का एक अन्य सिद्धांत आज भी अत्यंत प्रासंगिक है-

दृष्टवदानुश्रविक: स ह्यविशुद्धिक्षयातिशययुक्त:।
तद्विपरीत: श्रेयान् व्यक्ताव्यक्तज्ञविज्ञानात्॥

हिन्दी भावार्थ

जो कुछ देखा, सुना अथवा कहा जाता है, वह अनेक बार अतिशयोक्ति, अपूर्ण जानकारी अथवा विकृति से युक्त हो सकता है। इसलिए सत्य का निर्णय तर्क, विवेक और सम्यक् ज्ञान के आधार पर करना चाहिए।

शिक्षा से सम्बन्ध

आज के डिजिटल युग में सोशल मीडिया, समाचार माध्यमों तथा जनमत के बीच सत्य और असत्य का अंतर करना अत्यंत आवश्यक हो गया है। इसलिए शिक्षा विद्यार्थियों में Critical Thinking, तथ्य जांच (Fact Checking), निष्पक्ष विश्लेषण तथा प्रमाण-आधारित निर्णय लेने की क्षमता विकसित करे। यही वैज्ञानिक दृष्टिकोण का वास्तविक स्वरूप है।

3. धर्म शिक्षा का महत्त्व

धर्म शब्द का अर्थ केवल पूजा-पद्धति या किसी सम्प्रदाय विशेष का पालन नहीं है। भारतीय दर्शन में धर्म का अर्थ है-जो व्यक्ति, समाज और सम्पूर्ण सृष्टि के कल्याण को धारण करे। इसलिए धर्म शिक्षा का उद्देश्य किसी मत का प्रचार नहीं, बल्कि चरित्र, कर्तव्य, सत्य, न्याय, अनुशासन, करुणा और लोकमंगल की भावना का विकास करना है।

यदि शिक्षा में धर्म के इन मूल सिद्धांतों का समावेश न हो, तो व्यक्ति विद्वान तो बन सकता है, परन्तु चरित्रवान नागरिक नहीं बन पाता।

(1) सत्य एवं कर्तव्य की शिक्षा

सत्यं वद। धर्मं चर।
स्वाध्यायान्मा प्रमदः॥ (तैत्तिरीयोपनिषद्)

शिक्षा: सत्य बोलना, धर्मानुकूल आचरण करना तथा जीवनभर अध्ययन करते रहना।
आधुनिक उपयोग: प्रशासन, न्यायपालिका, विज्ञान, उद्योग तथा सार्वजनिक जीवन में सत्यनिष्ठा और ईमानदारी का विकास।

(2) परिवार एवं गुरु का सम्मान

मातृदेवो भव। पितृदेवो भव।
आचार्यदेवो भव। अतिथिदेवो भव॥

शिक्षा: माता-पिता, गुरु तथा अतिथि के प्रति सम्मान और कृतज्ञता।
आधुनिक उपयोग: परिवारों का संरक्षण, बुजुर्गों का सम्मान तथा सामाजिक उत्तरदायित्व का विकास।

(3) चरित्र, आत्मसंयम एवं निर्भयता

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः... (श्रीमद्भगवद्गीता 16.1-3)

शिक्षा: निर्भयता, आत्मसंयम, सत्य, दया, विनम्रता तथा चरित्र निर्माण।
आधुनिक उपयोग: भ्रष्टाचार, हिंसा, नशाखोरी, सामाजिक अपराध तथा नैतिक पतन की रोकथाम।

(4) न्याय एवं सामाजिक उत्तरदायित्व

आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्। (महाभारत)

शिक्षा: जो व्यवहार स्वयं अपने लिए अनुचित मानते हों, वही दूसरों के साथ भी न करें।
आधुनिक उपयोग: न्यायप्रिय समाज, प्रशासनिक निष्पक्षता, नागरिक उत्तरदायित्व तथा मानवाधिकारों के सम्मान का आधार।

(5) समाज, राष्ट्र एवं प्रकृति के प्रति उत्तरदायित्व

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्॥ (ऋग्वेद 10.191.2)

शिक्षा: साथ चलना, साथ विचार करना तथा समाज के हित में मिलकर कार्य करना।

आधुनिक उपयोग: लोकतंत्र, टीमवर्क, अनुसंधान, उद्योग, राष्ट्रीय एकता तथा वैश्विक सहयोग की भावना का विकास।

निष्कर्ष

धर्म शिक्षा का उद्देश्य किसी विशेष सम्प्रदाय की शिक्षा देना नहीं, बल्कि ऐसे नागरिक तैयार करना है जो सत्यनिष्ठ, न्यायप्रिय, वैज्ञानिक दृष्टिकोण वाले, करुणामय, कर्तव्यपरायण तथा समाज और राष्ट्र के प्रति उत्तरदायी हों।

आधुनिक विज्ञान और भारतीय ज्ञान-परम्परा परस्पर विरोधी नहीं हैं; दोनों का लक्ष्य सत्य की खोज और मानव कल्याण है। अत: आधुनिक शिक्षा में नैतिक एवं धर्माधारित मूल्यों का समुचित समावेश विद्यार्थियों के बौद्धिक, नैतिक और सामाजिक विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है।

4. शिक्षा एवं नीतिगत सुधार

शिक्षा का उद्देश्य केवल स्थापित नियमों का पालन करना नहीं होना चाहिए, बल्कि आवश्यकता पड़ने पर तर्क, प्रमाण और जनहित के आधार पर उनका विश्लेषण एवं सुधार करने की क्षमता भी विकसित करनी चाहिए। किसी भी लोकतांत्रिक एवं वैज्ञानिक समाज की प्रगति का आधार यही है कि उसके नागरिक स्वतंत्र रूप से सोच सकें, प्रश्न पूछ सकें और बेहतर समाधान प्रस्तुत कर सकें।

एक आदर्श शिक्षा व्यवस्था विद्यार्थियों में निम्न गुण विकसित करती है-

- तथ्य खोजने (Fact Finding) की क्षमता
- प्रमाण-आधारित निर्णय लेने की प्रवृत्ति
- तार्किक विश्लेषण
- वैज्ञानिक दृष्टिकोण
- रचनात्मक आलोचना
- नीतिगत सुधार का साहस
- निष्पक्ष एवं वस्तुनिष्ठ चिंतन

भारतीय दर्शन में भी ज्ञान प्राप्ति के लिए प्रत्यक्ष, अनुमान तथा प्रमाण पर विशेष बल दिया गया है। सांख्य और न्याय दर्शन यह बताते हैं कि किसी निष्कर्ष तक पहुंचने से पूर्व तथ्य, तर्क और प्रमाण का परीक्षण आवश्यक है। यही आधुनिक वैज्ञानिक पद्धति का भी मूल आधार है। शिक्षा विद्यार्थियों को यह सिखाए कि किसी भी विचार, समाचार या नीति को बिना परीक्षण के स्वीकार न करें, बल्कि उसके विभिन्न पक्षों का विवेकपूर्ण अध्ययन करें।

आज सूचना-प्रौद्योगिकी के युग में समाचार, सोशल मीडिया और जनमत अत्यंत तीव्र गति से समाज को प्रभावित करते हैं। अनेक बार अधूरी अथवा भ्रामक सूचनाएं भी व्यापक रूप से प्रसारित हो जाती हैं। इसलिए शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य विद्यार्थियों में Critical Thinking अर्थात समालोचनात्मक चिंतन विकसित करना होना चाहिए, ताकि वे सत्य और असत्य, तथ्य और मत, प्रमाण और प्रचार के बीच अंतर कर सकें।

इसी प्रकार सार्वजनिक नीतियों का मूल्यांकन भी व्यक्ति, दल या विचारधारा के आधार पर नहीं, बल्कि उनके परिणामों, वैज्ञानिक विश्लेषण तथा जनहित के आधार पर किया जाना चाहिए। यदि शिक्षा यह क्षमता विकसित कर सके, तो भविष्य में अधिक उत्तरदायी प्रशासक, वैज्ञानिक, पत्रकार, उद्योगपति और नीति-निर्माता तैयार होंगे।

भारत जैसे विशाल लोकतंत्र में यह विशेष रूप से आवश्यक है कि शिक्षा केवल अनुकरण (Following) न सिखाए, बल्कि विवेकपूर्ण प्रश्न पूछने, वैकल्पिक समाधान खोजने और राष्ट्रहित में रचनात्मक सुधार प्रस्तुत करने का साहस भी विकसित करे। यही वैज्ञानिक, लोकतांत्रिक और आत्मनिर्भर भारत की आधारशिला बनेगा।

5. सामरिक एवं नैतिक शिक्षा

किसी भी राष्ट्र की वास्तविक शक्ति उसके नागरिकों के चरित्र में निहित होती है। यदि शिक्षा केवल बौद्धिक विकास तक सीमित रह जाए और चरित्र निर्माण की उपेक्षा करे, तो समाज में भ्रष्टाचार, हिंसा, स्वार्थ, असंवेदनशीलता तथा सामाजिक विघटन जैसी समस्याएं बढ़ने लगती हैं। आज महिलाओं एवं बच्चों के विरुद्ध अपराध, खाद्य पदार्थों में मिलावट, सार्वजनिक जीवन में नैतिकता का ह्रास, प्रशासनिक उदासीनता तथा सामाजिक उत्तरदायित्व की कमी जैसी घटनाएं इस बात का संकेत देती हैं कि हमारी शिक्षा व्यवस्था में नैतिक शिक्षा को अपेक्षित स्थान नहीं मिल पाया है।

भारतीय संस्कृति में शिक्षा का उद्देश्य केवल विद्वान बनाना नहीं था, बल्कि सत्यनिष्ठ, न्यायप्रिय, साहसी और समाजोपयोगी व्यक्ति का निर्माण करना था। गुरुकुलों में धर्म का अर्थ किसी संकीर्ण मत का प्रचार नहीं, बल्कि सत्य, कर्तव्य, न्याय, करुणा, आत्मसंयम और लोककल्याण का अभ्यास था। यही कारण है कि शिक्षा को चरित्र निर्माण का माध्यम माना गया। हमारे बच्चों को साहसी और युद्ध प्रवीण बनाना होगा, तभी उनमें आत्मविश्वास और साहस उत्पन्न होगा।

विद्यालयों में नैतिक शिक्षा केवल एक विषय के रूप में नहीं, बल्कि व्यावहारिक प्रशिक्षण के रूप में दी जानी चाहिए। विद्यार्थियों में निम्न गुणों का विकास आवश्यक है-

- सत्यनिष्ठा एवं ईमानदारी
- कर्तव्यपरायणता
- न्यायप्रियता
- सहानुभूति एवं करुणा
- अनुशासन एवं आत्मसंयम
- पर्यावरण संरक्षण
- सामाजिक उत्तरदायित्व
- सार्वजनिक संपत्ति का सम्मान
- महिला सम्मान एवं वरिष्ठ नागरिकों के प्रति संवेदनशीलता

इसके अतिरिक्त प्रत्येक छात्र-छात्रा को आत्मरक्षा, प्राथमिक उपचार, आपदा प्रबंधन तथा नागरिक सुरक्षा का प्रशिक्षण भी दिया जाना चाहिए। प्राकृतिक आपदाओं, सड़क दुर्घटनाओं, अग्निकांड अथवा अन्य संकटों में सामान्य नागरिकों की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण होती है। यदि विद्यार्थी बचपन से ऐसे प्रशिक्षण प्राप्त करें, तो वे स्वयं भी सुरक्षित रहेंगे और आवश्यकता पड़ने पर दूसरों की सहायता भी कर सकेंगे।

इसी प्रकार शिक्षा में मानसिक स्वास्थ्य, तनाव प्रबंधन तथा जीवन-मूल्यों को भी स्थान मिलना चाहिए। आज परीक्षा के दबाव, असफलता या सामाजिक तनाव के कारण अनेक विद्यार्थी निराशा का शिकार हो जाते हैं। उन्हें यह समझाया जाना चाहिए कि जीवन का मूल्य किसी एक परीक्षा या एक असफलता से कहीं अधिक बड़ा है। शिक्षा उन्हें धैर्य, आत्मविश्वास और संघर्ष की प्रेरणा दे।

नैतिक शिक्षा का अंतिम उद्देश्य ऐसा नागरिक तैयार करना होना चाहिए जो केवल अपने अधिकारों की नहीं, बल्कि अपने कर्तव्यों की भी समान रूप से चिंता करे।

6. शिक्षा एवं सामाजिक संबंध

मनुष्य स्वभावत: सामाजिक प्राणी है। उसका विकास परिवार, समाज और संस्कृति के साथ जुड़कर ही संभव होता है। यदि शिक्षा व्यक्ति को केवल व्यक्तिगत सफलता तक सीमित कर दे, तो समाज में आत्मकेंद्रित सोच बढ़ने लगती है। आज संयुक्त परिवारों का विघटन, बुजुर्गों की उपेक्षा, सामाजिक असंवेदनशीलता तथा पारिवारिक मूल्यों में कमी जैसी घटनाएं इसी परिवर्तन का परिणाम हैं।

प्राचीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था में विद्यार्थी को जीवन के प्रत्येक चरण के दायित्व समझाए जाते थे। ब्रह्मचर्य के पश्चात गृहस्थ जीवन, परिवार के प्रति उत्तरदायित्व, समाज सेवा तथा अंतत: विश्व-कल्याण की भावना विकसित करना शिक्षा का अंग था। व्यक्ति की सफलता को समाज की उन्नति से जोड़ा जाता था।

आज आवश्यकता है कि विद्यालयों में निम्न विषयों को भी शिक्षा का अभिन्न अंग बनाया जाए-

- माता-पिता एवं गुरुजनों का सम्मान
- परिवार के प्रति उत्तरदायित्व
- बुजुर्गों की सेवा
- सामाजिक सहयोग
- नागरिक कर्तव्य
- पर्यावरण संरक्षण
- सामुदायिक सेवा
- सार्वजनिक अनुशासन

विद्यालयों में प्रत्येक विद्यार्थी को वर्ष में कुछ समय सामुदायिक सेवा, वृक्षारोपण, स्वच्छता अभियान, वृद्धाश्रम, अस्पताल अथवा अन्य सामाजिक कार्यों से जोड़ा जाना चाहिए। इससे उनमें सेवा-भाव, नेतृत्व, सहयोग तथा संवेदनशीलता का विकास होगा।

सड़क पर घायल व्यक्ति की सहायता करना, सार्वजनिक स्थानों पर अनुशासन बनाए रखना, महिलाओं एवं बच्चों की सुरक्षा के प्रति सजग रहना तथा समाज के कमजोर वर्गों के प्रति सहानुभूति रखना- ये सभी शिक्षित समाज के लक्षण हैं। यदि शिक्षा इन मूल्यों को विकसित नहीं कर पाती, तो उसका उद्देश्य अधूरा रह जाता है।

7. शिक्षा एवं राजनीति

लोकतंत्र की सफलता केवल संविधान या चुनावों पर निर्भर नहीं करती, बल्कि उसके नागरिकों की शिक्षा, जागरूकता और नैतिकता पर भी निर्भर करती है। इसलिए शिक्षा का उद्देश्य किसी विशेष राजनीतिक विचारधारा का समर्थन या विरोध करना नहीं, बल्कि ऐसे नागरिक तैयार करना होना चाहिए जो तथ्य, तर्क और जनहित के आधार पर निर्णय लेने में सक्षम हों।

विद्यार्थियों को यह सिखाया जाना चाहिए कि किसी भी नीति का मूल्यांकन व्यक्ति, दल या भावनाओं के आधार पर नहीं, बल्कि उसके परिणामों, प्रमाणों तथा समाज पर पड़ने वाले प्रभाव के आधार पर किया जाए। उन्हें संविधान, नागरिक अधिकार, नागरिक कर्तव्य, प्रशासनिक व्यवस्था तथा लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं का व्यावहारिक ज्ञान भी दिया जाना चाहिए।

शिक्षा विद्यार्थियों में यह साहस भी विकसित करे कि वे सम्मानपूर्वक प्रश्न पूछ सकें, तथ्यों का परीक्षण कर सकें तथा आवश्यक होने पर नीतिगत सुधार के सुझाव दे सकें। प्रश्न पूछना लोकतंत्र की कमजोरी नहीं, बल्कि उसकी शक्ति है। परंतु प्रश्न सदैव शालीनता, प्रमाण और जनहित पर आधारित होने चाहिए।

राष्ट्र निर्माण के लिए आवश्यक है कि युवा केवल नौकरी प्राप्त करने तक सीमित न रहें, बल्कि अनुसंधान, नीति निर्माण, विज्ञान, तकनीकी विकास, उद्यमिता तथा सामाजिक नेतृत्व में भी सक्रिय भूमिका निभाएं।

8. शिक्षा एवं पत्रकारिता

पत्रकारिता लोकतंत्र का एक महत्त्वपूर्ण स्तंभ है। उसका दायित्व केवल समाचार देना नहीं, बल्कि समाज को जागरूक, शिक्षित और उत्तरदायी बनाना भी है। यदि पत्रकारिता केवल सनसनी, विवाद या मनोरंजन तक सीमित हो जाए, तो समाज अनेक महत्त्वपूर्ण विषयों से वंचित रह जाता है।

पत्रकारिता को शिक्षा सुधार, वैज्ञानिक अनुसंधान, तकनीकी नवाचार, कृषि, पर्यावरण, न्याय व्यवस्था, सड़क सुरक्षा, प्रशासनिक सुधार तथा नागरिक कर्तव्यों जैसे विषयों पर नियमित और तथ्यपरक चर्चा करनी चाहिए। इससे समाज में सकारात्मक जनमत का निर्माण होगा।

डिजिटल युग में समाचारों की गति अत्यंत तीव्र है। अनेक बार अपूर्ण या भ्रामक सूचनाएं भी व्यापक रूप से प्रसारित हो जाती हैं। इसलिए पत्रकारिता का आधार सत्यापन, निष्पक्षता और प्रमाण होना चाहिए। शिक्षा विद्यार्थियों को भी यह सिखाए कि वे किसी सूचना को बिना जांच-परख के सत्य न मानें।

विद्यालयों में मीडिया साक्षरता (Media Literacy) को भी पाठ्यक्रम का भाग बनाया जाना चाहिए, जिससे विद्यार्थी समाचार, विज्ञापन, सोशल मीडिया तथा जनसंचार के विभिन्न माध्यमों का विवेकपूर्ण विश्लेषण कर सकें। इससे वे तथ्य और प्रचार, सूचना और दुष्प्रचार, तथा विचार और प्रमाण के बीच अंतर करना सीखेंगे।

जब शिक्षा और पत्रकारिता दोनों मिलकर सत्य, तर्क, नैतिकता और जनहित की संस्कृति को प्रोत्साहित करेंगे, तभी समाज में जागरूक, उत्तरदायी और विवेकशील नागरिकों का निर्माण होगा। यही किसी भी स्वस्थ लोकतंत्र और विकसित राष्ट्र की सबसे बड़ी शक्ति है।

9. भारतीय शिक्षा व्यवस्था में आवश्यक सुधार

यदि भारत को 21वीं शताब्दी में विश्वगुरु तथा तकनीकी महाशक्ति बनना है, तो शिक्षा व्यवस्था में केवल पाठ्यक्रम परिवर्तन पर्याप्त नहीं होगा। शिक्षा के उद्देश्य, शिक्षण पद्धति तथा मूल्यांकन प्रणाली-तीनों में व्यापक सुधार आवश्यक हैं। शिक्षा का लक्ष्य केवल डिग्री प्रदान करना नहीं, बल्कि ऐसे नागरिक तैयार करना होना चाहिए जो चरित्रवान, वैज्ञानिक दृष्टिकोण वाले, नैतिक, साहसी, रचनात्मक एवं राष्ट्रहित के प्रति समर्पित हों।

सबसे पहले प्राथमिक शिक्षा से ही बच्चों में जिज्ञासा, प्रयोग, तर्क तथा नवाचार की भावना विकसित की जानी चाहिए। प्रत्येक विद्यालय में विज्ञान प्रयोगशालाएं, इनोवेशन लैब, रोबोटिक्स, कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग, कृषि, पर्यावरण एवं स्थानीय समस्याओं के समाधान पर आधारित परियोजनाएं अनिवार्य की जा सकती हैं। इससे विद्यार्थी केवल पुस्तकें पढ़ने वाले नहीं, बल्कि समाधान खोजने वाले बनेंगे।

शिक्षा का उद्देश्य प्रश्न पूछने की क्षमता विकसित करना भी होना चाहिए। किसी भी विषय, नीति या विचार को आंख मूंदकर स्वीकार करना शिक्षा नहीं है। विद्यार्थियों को प्रमाण, तर्क और वैज्ञानिक विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष निकालना सिखाया जाना चाहिए। भारतीय न्याय एवं सांख्य दर्शन ने भी ज्ञान प्राप्ति के लिए प्रत्यक्ष, अनुमान और प्रमाण को महत्त्व दिया है। यही आधुनिक वैज्ञानिक पद्धति का आधार है।

अनुसंधान एवं तकनीकी नवाचार को विद्यालय स्तर से प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। विश्वविद्यालयों को उद्योगों और अनुसंधान संस्थानों से जोड़ा जाए, ताकि विद्यार्थियों के विचार प्रयोगशालाओं से उद्योग तक पहुंच सकें। स्टार्टअप, पेटेंट, उत्पाद विकास तथा प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के लिए प्रभावी तंत्र विकसित किया जाए, जिससे प्रतिभाशाली युवाओं को अपनी तकनीक विकसित करने का अवसर मिले।

भारतीय ज्ञान-परम्परा का अध्ययन भी आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ कराया जाना चाहिए। गणित, आयुर्वेद, धातु विज्ञान, खगोल विज्ञान, दर्शन, वास्तु तथा अन्य विषयों में भारत की बौद्धिक परम्परा का परिचय विद्यार्थियों को प्रमाण-आधारित रूप में दिया जाए, ताकि उनमें आत्मगौरव और वैज्ञानिक दृष्टिकोण दोनों विकसित हों।

नैतिक शिक्षा, नागरिक कर्तव्य, पर्यावरण संरक्षण, आत्मरक्षा, प्राथमिक उपचार, सड़क सुरक्षा, आपदा प्रबंधन, वित्तीय साक्षरता, उद्यमिता तथा मानसिक स्वास्थ्य को भी शिक्षा का अनिवार्य अंग बनाया जाना चाहिए। आज परीक्षा में असफल होने पर अनेक विद्यार्थी निराश हो जाते हैं। शिक्षा उन्हें यह भी सिखाए कि जीवन किसी एक परीक्षा से कहीं बड़ा है; पुरुषार्थ, धैर्य और सतत प्रयास ही सफलता का वास्तविक मार्ग हैं।

अंतत: शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो व्यक्ति को केवल रोजगार योग्य न बनाए, बल्कि समाज और राष्ट्र के प्रति उत्तरदायी नागरिक भी बनाए।

10. उपसंहार

शिक्षा किसी भी राष्ट्र की दिशा और दशा निर्धारित करती है। यदि शिक्षा केवल परीक्षा, अंक और रोजगार तक सीमित रहेगी, तो समाज को कुशल कर्मचारी तो मिलेंगे, परन्तु दूरदर्शी वैज्ञानिक, नीति-निर्माता, समाज-सुधारक तथा मौलिक विचारक पर्याप्त संख्या में नहीं मिल पाएंगे।

भारत को ऐसी शिक्षा व्यवस्था की आवश्यकता है जो ज्ञान के साथ विवेक, विज्ञान के साथ नैतिकता, तकनीक के साथ मानवता, अधिकारों के साथ कर्तव्य तथा व्यक्तिगत सफलता के साथ सामाजिक उत्तरदायित्व का विकास करे। शिक्षा बच्चों में यह विश्वास उत्पन्न करे कि वे केवल स्थापित व्यवस्थाओं का अनुसरण करने के लिए नहीं, बल्कि समाज, राष्ट्र और मानवता के हित में नए विचार प्रस्तुत करने, समस्याओं का समाधान खोजने तथा सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिए भी उत्तरदायी हैं।

जब शिक्षा में रचनात्मकता, तर्कशीलता, नैतिकता, साहस, संवेदनशीलता तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण का समन्वय होगा, तभी भारत ज्ञान, नवाचार तथा मानव कल्याण का वैश्विक केन्द्र बन सकेगा।

उपयुक्त सन्दर्भों, और श्लोकों से स्पष्ट होता है कि भारतीय शिक्षा परम्परा का उद्देश्य केवल विद्या अर्जित करना नहीं था, बल्कि सत्य, धर्म, चरित्र, तर्क, अनुशासन, सेवा, सहयोग और लोककल्याण की भावना से युक्त नागरिक का निर्माण करना था। यदि आधुनिक शिक्षा इन मूल सिद्धांतों को समकालीन विज्ञान, तकनीक और अनुसंधान के साथ समन्वित कर सके, तो भारत पुन: ज्ञान, नवाचार और मानवता के क्षेत्र में अग्रणी राष्ट्र बन सकता है।

क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया। (कठोपनिषद् 1.3.14) ज्ञान का मार्ग उस्तरे की तेज धार जैसा है, जिस पर चलना कठिन है।

गुरुकुल शिक्षा की प्रासङ्गिकता : वर्तमान समय के शिक्षा-संकट का समीचीन समाधान

प्रवीण अग्रवाल (1983 बैच)



प्रस्तावना

लॉर्ड मैकाले ने भारत में ऐसी शिक्षा-पद्धति का समर्थन किया जिसमें यह योजना थी कि अंग्रेज़ी भाषा को शिक्षण का प्रमुख माध्यम बना दिया जाए तथा पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान, साहित्य और विचारधारा को शिक्षा का आधार माना जाए। इस नीति के परिणामस्वरूप भारतीय भाषाओं में उपलब्ध विशाल ज्ञान-संपदा, पारम्परिक शिक्षण पद्धतियां तथा गुरुकुल-आधारित शिक्षा अपेक्षाकृत उपेक्षित होने लगीं।

फलतः संस्कृत, प्राकृत, पालि, हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में निहित दर्शन, व्याकरण, आयुर्वेद, ज्योतिष, गणित, नीतिशास्त्र और आध्यात्मिक साहित्य के अध्ययन-अध्यापन को पूर्ववत् प्रोत्साहन नहीं मिला। शिक्षा का केन्द्र चरित्र-निर्माण, संस्कार-संवर्धन और जीवनोपयोगी ज्ञान से हटकर मुख्यतः औपनिवेशिक प्रशासन की आवश्यकताओं की पूर्ति की ओर उन्मुख होने लगा।

और इस प्रकार आज शिक्षा का स्वरूप मुख्यतः परीक्षा, अंक, शैक्षिक उपाधि और आजीविका तक सीमित होता जा रहा है। विद्यालयों और विश्वविद्यालयों से बड़ी संख्या में शिक्षित युवक-युवतियां निकल रहे हैं, किन्तु समाज में चरित्र-संकट, मानसिक तनाव, पारिवारिक विघटन, मादक द्रव्य सेवन, हिंसा, भ्रष्टाचार और जीवन-मूल्यों के ह्रास जैसी समस्याएं भी बढ़ रही हैं।

इससे यह प्रश्न उठता है कि क्या केवल सूचना और कौशल देना ही शिक्षा है?

भारतीय आर्ष परम्परा का उत्तर है-नहीं।

शिक्षा का उद्देश्य केवल जीविका नहीं, अपितु जीवन का निर्माण है। यही दृष्टि गुरुकुल शिक्षा-पद्धति की आधारशिला थी।

गुरुकुल शिक्षा क्या थी?

गुरुकुल केवल एक विद्यालय नहीं था, अपितु जीवन-निर्माण का केन्द्र था। छात्र गुरु के सान्निध्य में रहकर शिक्षा प्राप्त करता था। वहां ज्ञान, आचरण, अनुशासन, सेवा, आत्मसंयम, शूरत्व से अलंकृत आध्यात्मिकता और सामाजिक उत्तरदायित्व का समन्वित प्रशिक्षण दिया जाता था।

शिक्षा का लक्ष्य था-

"सा विद्या या विमुक्तये।"

अर्थात वह विद्या जो मनुष्य को अज्ञान, दुर्बलता और बन्धनों से मुक्त करे।

वर्तमान शिक्षा-व्यवस्था का संकट

1. चरित्र निर्माण का अभाव : आज शिक्षा का केन्द्र बिन्दु पराश्रित जीवन पद्धति का बोध कराती नौकरी बन गया है। सत्य, सेवा, त्याग, अनुशासन और नैतिकता जैसे मूल्य शिक्षा के मुख्य विषय नहीं रह गए हैं।

फलस्वरूप उच्च शिक्षित व्यक्ति भी अनैतिक कार्यों में संलग्न पाया जाता है।

2. मानसिक तनाव और अवसाद: प्रतिस्पर्धा, परीक्षा और कैरियर की दौड़ ने विद्यार्थियों पर अत्यधिक दबाव डाल दिया है। अनेक विद्यार्थी तनाव, चिंता और अवसाद का सामना कर रहे हैं।

3. शिक्षक-विद्यार्थी सम्बन्धों में दूरी: आज शिक्षा मुख्यत: औपचारिक हो गई है। शिक्षक और विद्यार्थी के बीच वह आत्मीयता नहीं दिखाई देती जो गुरु-शिष्य परम्परा में थी।

4. जीवन-कौशल का अभाव: विद्यार्थी अनेक विषय पढ़ते हैं, किन्तु जीवन की समस्याओं का सामना कैसे करें, क्रोध को कैसे नियंत्रित करें, परिवार कैसे चलाएं, समाज और राष्ट्र के प्रति कर्तव्य क्या हैं- इनका ज्ञान प्राय: नहीं मिलता।

5. सांस्कृतिक विस्मरण: नई पीढ़ी अपने इतिहास, परम्पराओं, महापुरुषों और सांस्कृतिक विरासत से दूर होती जा रही है।

गुरुकुल शिक्षा की विशेषताएं

1. शिक्षा का उद्देश्य-व्यक्तित्व का समग्र विकास : गुरुकुल में केवल बुद्धि का नहीं, बल्कि शरीर, मन, चरित्र और आत्मा का विकास किया जाता था।

2. गुरु-शिष्य का जीवंत सम्बन्ध : गुरु केवल अध्यापक नहीं, मार्गदर्शक और आदर्श भी होता था। शिक्षा पुस्तकों तक सीमित नहीं रहती थी, बल्कि जीवन के व्यवहार में उतरती थी।

शिष्य आरुणि, उपमन्यु और अन्य कथाएं इस परम्परा के उदाहरण हैं।

3. अनुशासन और आत्मसंयम : ब्रह्मचर्य, समयपालन, सेवा और संयम गुरुकुल जीवन के अंग थे। इससे आत्मनियंत्रण की क्षमता विकसित होती थी।

4. आध्यात्मिक आधार : प्रार्थना, यज्ञ, ध्यान और स्वाध्याय के माध्यम से विद्यार्थी के भीतर आत्मिक संतुलन विकसित किया जाता था।

5. प्रकृति के साथ सामंजस्य : गुरुकुल प्राय: प्राकृतिक वातावरण में स्थित होते थे। इससे विद्यार्थी का प्रकृति से गहरा सम्बन्ध बनता था।

आधुनिक युग में गुरुकुल शिक्षा की प्रासङ्गिकता

यह आवश्यक नहीं कि हम प्राचीन गुरुकुल व्यवस्था को उसी रूप में पुन: स्थापित करें। आवश्यकता उसके मूल सिद्धान्तों को आधुनिक शिक्षा में सम्मिलित करने की है।

1. मूल्य-आधारित शिक्षा : विद्यालयों में नैतिक शिक्षा, भारतीय चिंतन और जीवन-मूल्यों को व्यावहारिक रूप से पढ़ाया जाए।

2. योग और ध्यान : योग, प्राणायाम और ध्यान को शिक्षा का नियमित अंग बनाया जाए ताकि विद्यार्थियों का मानसिक स्वास्थ्य सुदृढ़ हो।

3. गुरु-मार्गदर्शन प्रणाली : प्रत्येक विद्यार्थी के लिए एक मार्गदर्शक शिक्षक हो जो उसके व्यक्तित्व-विकास में सहायता करे।

4. सेवा-भाव का विकास : विद्यार्थियों को सामाजिक सेवा, पर्यावरण संरक्षण और जनकल्याण के कार्यों से संयुत किया जाए।

5. भारतीय ज्ञान-परम्परा का समावेश : विद्यार्थियों को वेद, उपनिषद, गीता, रामायण, श्रीरामचरितमानस, महाभारत, आयुर्वेद, संस्कृत और भारतीय दर्शन का परिचय कराया जाए, उन्हें संगठन का महत्त्व समझा जाए, उन्हें इतना सक्षम समर्थ बनाया जाए कि वे शत्रु का सामना भयमुक्त होकर कर सकें, अन्याय अत्याचार का प्रतिकार कर सकें और कालनेमियों की पहचान कर सकें।

क्या गुरुकुल शिक्षा आधुनिक विज्ञान के विरोध में है?

कदापि नहीं।

प्राचीन भारत में गुरुकुलों से ही गणित, ज्योतिष, आयुर्वेद, व्याकरण, दर्शन, राजनीति और अनेक विज्ञान विकसित हुए।

गुरुकुल का उद्देश्य विज्ञान का विरोध नहीं, बल्कि विज्ञान और मूल्यों का समन्वय था।

आज आवश्यकता है कि आधुनिक विज्ञान और प्राचीन भारतीय जीवन-दृष्टि का संतुलित मेल स्थापित किया जाए।

निष्कर्ष

आज का शिक्षा-संकट केवल ज्ञान का नहीं, बल्कि दिशा का संकट है। हम कुशल पेशेवर तो बना रहे हैं, किन्तु आदर्श नागरिक और चरित्रवान् मनुष्य बनाने में अपेक्षित सफलता नहीं प्राप्त कर पा रहे हैं।

गुरुकुल शिक्षा हमें स्मरण कराती है कि शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य केवल रोजगार नहीं, बल्कि मनुष्य का निर्माण है, मनुष्य को मनुष्यत्व की अनुभूति कराना है। यदि आधुनिक शिक्षा में गुरु-शिष्य सम्बन्ध, चरित्र-निर्माण, आत्मसंयम, सेवा, आध्यात्मिकता और भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों का समावेश किया जाए, तो शिक्षा अधिक सार्थक, संतुलित और जीवनोपयोगी बन सकती है।

गुरुकुल का अर्थ अतीत में लौटना नहीं, बल्कि उन शाश्वत सिद्धान्तों को अपनाना है जो मनुष्य को ज्ञानवान् ही नहीं, गुणवान् भी बनाते हैं।

श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतः। (कठोपनिषद् 1.2.2) मनुष्य के सामने कल्याणकारी और प्रिय, दोनों मार्ग आते हैं। बुद्धिमान श्रेय को चुनता है।

❖❖❖

(द्वे विद्ये वेदितव्ये, परा चैवापरा च। (मुण्डकोपनिषद् 1.1.4) दो विद्याएँ जाननी चाहिए : परा (आत्मज्ञान) और अपरा (लौकिक ज्ञान)।)

वर्तमान युग में शिक्षा, शिक्षक और कृत्रिम बुद्धिमत्ता

अजय कोष्टा (1991 बैच)



समाज की आवश्यकताओं के साथ शिक्षा निरंतर विकसित होती रही है। एक समय था जब स्मरण शक्ति (Memory) को मनुष्य की सबसे महत्त्वपूर्ण क्षमता माना जाता था। जो विद्यार्थी तथ्यों, सूत्रों और जानकारियों को याद रख सकता था, वह परीक्षाओं में सफल होता था और उच्च शिक्षा तथा रोजगार के बेहतर अवसर प्राप्त करता था।

जैसे-जैसे अर्थव्यवस्था ज्ञान-आधारित होती गई, बुद्धि (Intellect) एक महत्त्वपूर्ण निर्णायक क्षमता बनकर उभरी। सफलता केवल इस बात पर निर्भर नहीं रही कि व्यक्ति क्या याद रखता है, बल्कि इस पर निर्भर होने लगी कि वह कितना विश्लेषण कर सकता है, तर्क कर सकता है, समस्याओं का समाधान खोज सकता है और नए विचार उत्पन्न कर सकता है। आधुनिक विश्व की प्रगति का आधार बुद्धि बन गई।

आज कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence) इस समीकरण को एक बार फिर बदल रही है। AI विशाल मात्रा में जानकारी संग्रहित कर सकती है, तुरंत ज्ञान उपलब्ध करा सकती है, जटिल आंकड़ों का विश्लेषण कर सकती है, लेखन कर सकती है, कोड तैयार कर सकती है और ऐसे अनेक बौद्धिक कार्य कर सकती है जिनके लिए पहले वर्षों की मानवीय शिक्षा और अनुभव की आवश्यकता होती थी। बुद्धिमत्ता स्वयं अब अधिक सुलभ होती जा रही है और कई मायनों में एक सामान्य संसाधन (Commodity) बनती जा रही है।

ऐसे में शिक्षकों और शिक्षाविदों के सामने एक गहरा प्रश्न खड़ा होता है- यदि अतीत में स्मृति महत्त्वपूर्ण थी और ज्ञान-आधारित अर्थव्यवस्था में बुद्धि महत्त्वपूर्ण बनी, तो अब अगला चरण क्या है?

मानव विकास के रूप में शिक्षा

भारतीय ज्ञान परंपरा मानव अस्तित्व के सात स्तरों का वर्णन करती है-

1. शरीर (Body)
2. श्वास या प्राण (Breath)
3. मन (Mind)
4. बुद्धि (Intellect)
5. स्मृति (Memory)
6. अहंकार (Ego)
7. आत्मा (Self)

अधिकांश शिक्षा प्रणालियां मुख्यत: स्मृति और बुद्धि के विकास पर केंद्रित हैं। यद्यपि ये क्षमताएं महत्त्वपूर्ण हैं, फिर भी ये मानव क्षमता का केवल एक भाग हैं।

वास्तविक शिक्षा व्यक्ति को अपने अस्तित्व के इन सातों स्तरों को समझने में सहायता करे तथा उसे स्थूल से सूक्ष्म की ओर बढ़ने का मार्ग दिखाए। आत्मबोध और आंतरिक विकास की यह यात्रा ही वास्तविक उत्क्रांति (Evolution) का मापदंड है।

स्वस्थ शरीर सीखने की क्षमता को बढ़ाता है। श्वास के प्रति जागरूकता ऊर्जा और भावनाओं को प्रभावित करती है। मन की समझ विचारों और भावनाओं को संतुलित करने में सहायता करती है। बुद्धि विवेक और निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करती

है। स्मृति अनुभवों को संजोकर रखती है। अहंकार की समझ हमें अपनी पहचान और सीमाओं को जानने में मदद करती है। अंतत: वास्तविक प्रगति व्यक्ति की चेतना के विस्तार में निहित है।

भविष्य की शिक्षा का लक्ष्य केवल बुद्धिमान व्यक्तियों का निर्माण करना नहीं, बल्कि विकसित और परिपक्व मानवों का निर्माण करना होना चाहिए।

उपस्थिति (Presence) का महत्त्व

बुद्धिमत्ता के बाद अगला महत्त्वपूर्ण आयाम है- उपस्थिति (Presence)।

सूर्य के साथ अपने संबंध पर विचार कीजिए। सूर्य न तो हमसे बात करता है, न हस्तक्षेप करता है और न ही कोई प्रत्यक्ष क्रिया करता है। फिर भी उसकी मात्र उपस्थिति के कारण पृथ्वी का अस्तित्व है, जीवन फल-फूल रहा है, ऋतुएं बदलती हैं और प्रकृति की असंख्य प्रक्रियाएं संचालित होती हैं।

इसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य की भी एक उपस्थिति होती है। हमारी विचार प्रक्रिया, हमारे कार्य, हमारे संबंध और संसार के साथ हमारी अंत:क्रियाएं, हमारी उपस्थिति की गतिशील अभिव्यक्तियां हैं।

जैसे-जैसे हमारा विकास होता है, हमारी उपस्थिति को अनुभव करने और समझने की क्षमता भी बढ़ती है। हम स्वयं के प्रति, दूसरों के प्रति और उन सूक्ष्म शक्तियों के प्रति अधिक जागरूक हो जाते हैं जो मानव व्यवहार को प्रभावित करती हैं।

भविष्य की शिक्षा को विद्यार्थियों में इसी जागरूकता का विकास करना होगा। ज्ञान और बुद्धिमत्ता महत्त्वपूर्ण हैं, परंतु किसी व्यक्ति की उपस्थिति की गुणवत्ता ही उसके जीवन, नेतृत्व और समाज में योगदान की गुणवत्ता को निर्धारित करती है।

शिक्षक की बदलती भूमिका

AI के युग में जानकारी हर जगह उपलब्ध है। इसलिए शिक्षक की भूमिका केवल विषयवस्तु और सूचना प्रदान करने तक सीमित नहीं रह सकती।

भविष्य का शिक्षक एक आदर्श (Role Model) होगा।

विद्यार्थी केवल शिक्षक के शब्दों से नहीं सीखते, बल्कि उनके जीवन जीने के तरीके, चुनौतियों के प्रति उनके दृष्टिकोण और दूसरों के साथ उनके व्यवहार से भी सीखते हैं। शिक्षक की उपस्थिति अक्सर उसके द्वारा दी गई जानकारी से कहीं अधिक गहरा प्रभाव छोड़ती है।

शिक्षकों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होगी कि वे विद्यार्थियों को-

- विकर्षणों के बीच प्रेरित बनाए रखें।
- एकाग्रता और ध्यान विकसित करने में सहायता करें।
- दीर्घकालिक स्मरण और गहन समझ विकसित करें।
- केवल तथ्यों को याद करने के बजाय संदर्भ को समझना सिखाएं।
- आलोचनात्मक चिंतन और विवेक विकसित करें।
- भावनात्मक दृढ़ता का निर्माण करें।
- मित्रता, करुणा और समाज सेवा जैसे मूल्यों को अपनाने के लिए प्रेरित करें।

साथ ही, शिक्षकों को स्वयं भी आजीवन विद्यार्थी बने रहना होगा। निरंतर ज्ञान प्रदान करने की भूमिका में रहने के कारण कभी-कभी "मुझे सब पता है" जैसी मानसिकता विकसित होने का खतरा रहता है। किंतु सच्चा शिक्षक वही है जो विनम्रता, जिज्ञासा और निरंतर सीखने की भावना को जीवित रखे।

भविष्य के सर्वश्रेष्ठ शिक्षक वे नहीं होंगे जिनके पास हर प्रश्न का उत्तर हो, बल्कि वे होंगे जो विद्यार्थियों में खोज की जिज्ञासा, प्रश्न पूछने का साहस और स्वयं सीखने की क्षमता का विकास करें।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता का युग हमें शिक्षा के उद्देश्य को पुनर्परिभाषित करने का एक अनूठा अवसर प्रदान करता है। अब केवल स्मृति पर्याप्त नहीं है और केवल बुद्धिमत्ता भी पर्याप्त नहीं है। जब जानकारी और बुद्धिमत्ता दोनों ही सहज उपलब्ध हो जाएं, तब मनुष्य की वास्तविक विशिष्टता उसकी चेतना, संवेदनशीलता और उपस्थिति में निहित होती है।

भविष्य की शिक्षा को मनुष्य को उसके सम्पूर्ण अस्तित्व - शरीर, प्राण, मन, बुद्धि, स्मृति, अहंकार और आत्मा-से परिचित कराना होगा। उसे जागरूकता, करुणा, सेवा, आत्मबोध और सार्थक जीवन जीने की कला सिखानी होगी।

भविष्य उन विकसित मानवों का है जो केवल बुद्धिमान नहीं, बल्कि सजग, संवेदनशील, संतुलित और आत्मबोध से संपन्न हों। ऐसे व्यक्तित्वों का निर्माण ही शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य है।

और इस महान यात्रा में शिक्षक केवल ज्ञानदाता नहीं, बल्कि प्रेरणास्रोत, मार्गदर्शक और जीवन-पथ के प्रकाश स्तंभ हैं।

अविज्ञातं विजानतां विज्ञातमविजानताम्। (केनोपनिषद् 2.3) जो कहते हैं "हम जानते हैं", वे नहीं जानते। जो विनम्र हैं, वे जानते हैं।

❖❖❖

(यदेव विद्यया करोति तदेव वीर्यवत्तरं भवति। (छान्दोग्य उपनिषद् 1.1.10) जो काम ज्ञान के साथ किया जाता है, वही अधिक शक्तिशाली होता है।)

भारतीय राजनीति में शिक्षा का स्थान एवं उसके दूरगामी परिणाम

डॉ. पंकज श्रीवास्तव (1991 बैच)



(सर्जन) वाराणसी

किसी भी राष्ट्र का भविष्य उसके युवाओं की ऊर्जा, कौशल और सोच पर निर्भर करता है। युवा शक्ति को सही दिशा देने का सबसे सशक्त माध्यम 'शिक्षा' है। वर्तमान में भारत दुनिया के सबसे युवा देशों में से एक है, जहां की लगभग 65% जनसंख्या कार्यशील आयु वर्ग (15-59 वर्ष) में आती है। इस "जनसांख्यिकीय लाभांश" (Demographic Dividend) का पूरा लाभ उठाने के लिए एक सुदृढ़, प्रासंगिक और भविष्योन्मुखी शिक्षा प्रणाली का होना अनिवार्य है। आज भारत की शिक्षा प्रणाली एक ऐसे चौराहे पर खड़ी है जहां पारंपरिक पद्धतियां और आधुनिक आवश्यकताएं आपस में टकरा रही हैं। यह लेख इस बात का विस्तृत विश्लेषण करता है कि वर्तमान भारतीय शिक्षा प्रणाली हमारे युवाओं के भविष्य को क्या आकार दे रही है। किसी भी राष्ट्र की प्रगति का वास्तविक आधार उसकी शिक्षा व्यवस्था होती है। शिक्षा केवल ज्ञान प्राप्ति का माध्यम नहीं, बल्कि एक ऐसी प्रक्रिया है जो व्यक्ति के विचार, चरित्र, विवेक और सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्माण करती है। एक सुदृढ़ शिक्षा व्यवस्था राष्ट्र को योग्य नागरिक, कुशल नेतृत्व, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और सांस्कृतिक चेतना प्रदान करती है। इसी कारण शिक्षा को किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था की आत्मा कहा जाता है।

भारतीय शिक्षा का इतिहास 'गुरुकुल' परंपरा से शुरू हुआ, जो जीवन-मूल्यों, व्यावहारिक ज्ञान और कौशलों पर आधारित थी। हालांकि, आधुनिक भारत की अधिकांश शिक्षा व्यवस्था उस औपनिवेशिक (मैकाले) ढांचे पर आधारित रही, जिसका मुख्य उद्देश्य प्रशासनिक कार्यों के लिए क्लर्क तैयार करना था। स्वतंत्रता के बाद, भारत ने शिक्षा के लोकतंत्रीकरण में बड़ी सफलता हासिल की है। साक्षरता दर जो 1947 में मात्र 12% के आसपास थी, आज बढ़कर 77.7% से अधिक हो चुकी है। आईआईटी (IIT), आईआईएम (IIM) और एम्स (AIIMS) जैसे वैश्विक स्तर के संस्थानों ने देश का नाम रोशन किया है। लेकिन, इसके समानांतर प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर शिक्षा की गुणवत्ता और पहुंच में एक गहरी खाई भी पैदा हुई है, जिसका सीधा असर आज के युवाओं के भविष्य पर पड़ रहा है। स्वतंत्रता के पश्चात् देश के विकास की योजनाओं में शिक्षा को प्राथमिकता दी गई, किंतु समय के साथ शिक्षा का क्षेत्र राजनीतिक हस्तक्षेप, नीतिगत अस्थिरता और निरंतर प्रयोगों का केंद्र बनता चला गया। परिणामस्वरूप शिक्षा का मूल उद्देश्य कहीं पीछे छूटता दिखाई देता है। आज विद्यार्थी, शिक्षक और अभिभावक सभी शिक्षा व्यवस्था में हो रहे निरंतर परिवर्तनों के कारण असमंजस की स्थिति में हैं। यह चिंता केवल वर्तमान की नहीं है, बल्कि इसके दूरगामी परिणाम पूरे समाज और राष्ट्र के भविष्य को प्रभावित कर सकते हैं।

लोकतांत्रिक व्यवस्था में शिक्षा और राजनीति का संबंध स्वाभाविक है। शिक्षा नीति का निर्माण सरकारें करती हैं और उसके क्रियान्वयन की जिम्मेदारी भी शासन-प्रशासन पर होती है। इसलिए राजनीतिक इच्छाशक्ति शिक्षा के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। दुर्भाग्यवश भारतीय राजनीति में शिक्षा को अकसर दीर्घकालिक राष्ट्रीय निवेश के बजाय अल्पकालिक राजनीतिक लाभ के दृष्टिकोण से देखा गया है। सरकारों के बदलने के साथ-साथ शिक्षा नीतियों, पाठ्यक्रमों, परीक्षा प्रणालियों और मूल्यांकन प्रक्रियाओं में परिवर्तन होते रहते हैं। प्रत्येक नई व्यवस्था अपने दृष्टिकोण के अनुसार शिक्षा को ढालने का प्रयास करती है। यद्यपि परिवर्तन समय की आवश्यकता हो सकते हैं, परंतु अत्यधिक और लगातार होने वाले प्रयोग शिक्षा जगत में अस्थिरता उत्पन्न

करते हैं। भारत में हर बार सरकार बदलने के साथ ही इतिहास, समाजशास्त्र और साहित्य के पाठ्यक्रमों को बदलने की होड़ लग जाती है। राजनैतिक दल इसका उपयोग अपनी विचारधारा के अनुकूल 'वोटर' तैयार करने के लिए करते हैं। इससे छात्रों में तार्किक सोच की जगह वैचारिक कट्टरता पैदा होती है।

भारत में उच्च शिक्षा का तेजी से होता लोकतंत्रीकरण (Massification) कई मायनों में एक व्यापार और राजनीतिक रसूख का जरिया बन गया है। गली-कूचों में खुलते निजी कॉलेज, जहां इंफ्रास्ट्रक्चर के नाम पर सिर्फ एक इमारत होती है और फैकल्टी के नाम पर खानापूर्ति, वे वास्तव में शिक्षा के मूल उद्देश्य-"ज्ञान, चरित्र निर्माण और आत्मनिर्भरता" की हत्या कर रहे हैं। जब शिक्षा का उद्देश्य केवल 'डिग्री बेचना' और छात्र का उद्देश्य केवल 'डिग्री खरीदना' रह जाए, तो समाज में केवल तथाकथित शिक्षित बेरोजगारों की एक फौज खड़ी होती है।

शिक्षा मंत्रालय के अखिल भारतीय उच्च शिक्षा सर्वेक्षण (AISHE) के हालिया आंकड़ों के अनुसार, भारत में विश्वविद्यालयों की संख्या बढ़कर 1,100 से अधिक और कॉलेजों की संख्या 43,000 को पार कर चुकी है। इनमें से एक बहुत बड़ा हिस्सा निजी और स्व-वित्तपोषित (Self-Financing) संस्थानों का है, जो कड़े नियमों के अभाव में चल रहे हैं। इंडिया स्किल्स रिपोर्ट (India Skills Report) के अनुसार, भारत में उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले युवाओं में से केवल 45% से 50% युवा ही वास्तव में रोजगार के योग्य हैं। विभिन्न स्वतंत्र सर्वे बताते हैं कि भारत के लगभग 80% इंजीनियर आईटी या कोर इंजीनियरिंग उद्योग में सीधे काम करने के लायक ही नहीं हैं। वे केवल 'डिग्री होल्डर' हैं। वर्ष 2026 के आंकड़ों के अनुसार, भारत में लगभग 32 से अधिक विश्वविद्यालय पूरी तरह से 'फर्जी' (Fake Universities) घोषित किए जा चुके हैं, जो बिना किसी मान्यता के धड़ल्ले से डिग्रियां बांट रहे थे। इनमें सबसे ज्यादा संख्या दिल्ली और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में है।

भारत में "शिक्षा और राजनीति का गठजोड़" एक ऐसी खुली सच्चाई है, जिसे हर कोई जानता है, लेकिन आधिकारिक तौर पर इसे एक अलग श्रेणी के रूप में दर्ज नहीं किया जाता। भले ही आधिकारिक सरकारी डेटा न हो, लेकिन देश-विदेश के कई प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों और शिक्षाविदों (जैसे आईआईएम बेंगलुरु और सेंटर फॉर पॉलिसी रिसर्च) ने इस पर व्यापक शोध किए हैं। उनके शोध के अनुसार तकनीकी और मेडिकल शिक्षा पर सबसे ज्यादा कब्जा : दक्षिण भारत (कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश) और पश्चिमी भारत (महाराष्ट्र) में लगभग 50% से 60% निजी मेडिकल, इंजीनियरिंग और बी.एड कॉलेज प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से वर्तमान या पूर्व विधायकों, सांसदों या मंत्रियों के नियंत्रण में हैं। महाराष्ट्र के चीनी सहकारी लॉबी और कर्नाटक के राजनेताओं ने बड़े पैमाने पर मेडिकल और इंजीनियरिंग हब बनाए हैं।

इंजीनियरिंग कॉलेजों को नियंत्रित करने और गुणवत्ता बनाए रखने के लिए हर राज्य में 'तकनीकी विश्वविद्यालय' (जैसे उत्तर प्रदेश में AKTU, मध्य प्रदेश में RGPV, बिहार में AKU, और महाराष्ट्र में SPPU) की स्थापना की गई थी। इसके पीछे सोच यह थी कि एक केंद्रीकृत राज्य विश्वविद्यालय संबद्ध कॉलेजों के पाठ्यक्रम, परीक्षा और मानकों पर पैनी नजर रखेगा। लेकिन आज स्थिति इसके बिल्कुल विपरीत है। नियंत्रण रखने के बजाय, ये तकनीकी विश्वविद्यालय 'अंब्रेला यूनिवर्सिटी' बनकर रह गए हैं, जो सिर्फ परीक्षाएं कराने और डिग्रियां बांटने का जरिया हैं। देश भर के इंजीनियरिंग कॉलेजों में 50% से अधिक सीटों का खाली रह जाना इस बात का सबसे बड़ा सबूत है कि यह ढांचा बाजार और छात्रों की जरूरतों को पूरा करने में बुरी तरह विफल रहा है। शिक्षा मंत्रालय के आधिकारिक आंकड़ों के अनुसार, देश के विभिन्न राज्यों में कुल स्वीकृत (Sanctioned) सीटों में से हर साल औसतन 30% से 50% सीटें खाली रह जाती हैं। एक अन्य रिपोर्ट के अनुसार, पिछले पांच वर्षों की अवधि के दौरान विभिन्न तकनीकी संस्थानों में लगभग 20 लाख इंजीनियरिंग सीटें खाली रह गईं।

शिक्षा का क्षेत्र प्रयोगशाला नहीं है, जहां प्रत्येक नई सरकार अपनी वैचारिक प्राथमिकताओं के अनुसार बार-बार प्रयोग करे। शिक्षा की प्रकृति दीर्घकालिक होती है और इसके परिणाम कई वर्षों बाद सामने आते हैं। अत: इसमें स्थिरता, निरंतरता और व्यापक सहमति आवश्यक है। शिक्षा में निरंतर प्रयोग युवा वर्ग की उलझन को दिन-प्रतिदिन बढ़ाते जा रहे हैं। वर्तमान समय में

शिक्षा व्यवस्था लगातार परिवर्तनों के दौर से गुजर रही है। कभी परीक्षा पद्धति में बदलाव, कभी पाठ्यक्रम में परिवर्तन, कभी मूल्यांकन प्रणाली में संशोधन, तो कभी प्रवेश प्रक्रियाओं में नए नियम लागू किए जाते हैं। इन परिवर्तनों का सबसे अधिक प्रभाव विद्यार्थियों पर पड़ता है। युवा वर्ग, जो अपने भविष्य के निर्माण की अवस्था में होता है, स्वयं को अनिश्चितताओं से घिरा हुआ पाता है। उसे यह समझने में कठिनाई होती है कि किस दिशा में तैयारी की जाए और कौन-सी योग्यता भविष्य में उपयोगी सिद्ध होगी। प्रतिस्पर्धा की अंधी दौड़ और कोचिंग सेंटरों (जैसे कोटा मॉडल) के दबाव ने युवाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर बहुत बुरा असर डाला है। परीक्षा में असफल होने का डर या मनमुताबिक कॉलेज न मिलने की निराशा युवाओं को अवसाद और आत्महत्या जैसे आत्मघाती कदमों की ओर धकेल रही है। अच्छी शिक्षा का लगातार महंगा होना देश के गरीब और मध्यमवर्गीय युवाओं के लिए एक बड़ी बाधा है। निजी स्कूलों और कॉलेजों की भारी-भरकम फीस के कारण ग्रामीण और वंचित तबके के प्रतिभावान युवा उच्च शिक्षा से वंचित रह जाते हैं, जिससे सामाजिक-आर्थिक असमानता और गहरी होती है। मेरे विचार से आरक्षण भी गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की राह में बहुत बड़ा रोड़ा बना हुआ है। जातिगत राजनीति ने प्रतिभावान छात्रों को प्रतियोगी परीक्षाओं में वंचित कर रखा है जबकि उनसे कम प्रतिभाशाली छात्र केवल इसलिए डॉ., इंजीनियर, आईएएस बन रहे हैं क्योंकि उनको जातिगत आरक्षण प्राप्त है।

शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति में ज्ञान, चिंतन और कौशल का विकास करना होना चाहिए, किंतु आज अनेक विद्यार्थियों के लिए शिक्षा केवल प्रतियोगी परीक्षाओं और रोजगार प्राप्ति का साधन बनकर रह गई है। विद्यालय और महाविद्यालय ज्ञान के केंद्र कम तथा नौकरी प्राप्त करने की तैयारी के केंद्र अधिक प्रतीत होने लगे हैं। इस स्थिति का एक गंभीर परिणाम यह है कि विद्यार्थी शिक्षा को आत्म विकास की प्रक्रिया के रूप में नहीं, बल्कि केवल रोजगार प्राप्ति के साधन के रूप में देखने लगे हैं। जब शिक्षा का उद्देश्य सीमित हो जाता है, तब समाज में मौलिक चिंतन, शोध, साहित्य, कला और वैज्ञानिक दृष्टिकोण का भी ह्रास होने लगता है।

जब से भारत अंग्रेजों के शासन से स्वतंत्र हुआ, यहां शिक्षा का उद्देश्य केवल नौकरी-केंद्रित व्यवस्था बन कर रह गया। भारतीय परंपरा में शिक्षा का उद्देश्य केवल जीविका अर्जन नहीं माना गया। शिक्षा को मनुष्य के समग्र विकास का माध्यम समझा गया है। हमारे ऋषियों ने विद्या को आत्मज्ञान, विवेक, चरित्र निर्माण और समाजोपयोगी जीवन से जोड़ा। इसी कारण कहा गया- "सा विद्या या विमुक्तये", अर्थात वही विद्या है जो मनुष्य को अज्ञान, भय, संकीर्णता और मानसिक बंधनों से मुक्त करे। परंतु आधुनिक समय में शिक्षा का स्वरूप धीरे-धीरे बदलता गया। आज अधिकांश विद्यार्थियों, अभिभावकों और यहां तक कि शैक्षणिक संस्थानों के लिए भी शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य बड़ी-बड़ी संस्थाओं में नौकरी प्राप्त करना बन गया है। विद्यालय से लेकर विश्वविद्यालय तक सफलता का मापदंड प्राय: इस बात को माना जाने लगा है कि कितने विद्यार्थियों को रोजगार मिला, कितनों ने प्रतियोगी परीक्षाएं उत्तीर्ण कीं या कितने उच्च वेतन वाले पदों तक पहुंचे।

निस्संदेह रोजगार जीवन की एक महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है। शिक्षा व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनाती है और सम्मानजनक आजीविका प्राप्त करने की क्षमता प्रदान करती है। किंतु जब शिक्षा का सम्पूर्ण उद्देश्य केवल नौकरी तक सीमित हो जाता है, तब उसके व्यापक सामाजिक और मानवीय लक्ष्य पीछे छूट जाते हैं। नौकरी-केंद्रित शिक्षा व्यवस्था में विद्यार्थी ज्ञान के लिए नहीं, बल्कि अंकों के लिए पढ़ता है; विषय को समझने के लिए नहीं, बल्कि परीक्षा पास करने के लिए अध्ययन करता है। उसके सामने प्रश्न यह नहीं होता कि "मैं क्या सीख रहा हूं?", बल्कि यह होता है कि "इससे मुझे कितने अंक मिलेंगे या कौन-सी नौकरी मिलेगी?" ऐसी स्थिति में जिज्ञासा, सृजनात्मकता और स्वतंत्र चिंतन धीरे-धीरे समाप्त होने लगते हैं। शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य व्यक्ति में प्रश्न पूछने की क्षमता विकसित करना है, जबकि नौकरी-केंद्रित व्यवस्था प्राय: केवल उत्तर याद रखने की प्रवृत्ति को बढ़ावा देती है। शिक्षा का लक्ष्य अच्छे नागरिक बनाना है, जबकि संकीर्ण रोजगार-केंद्रित दृष्टिकोण केवल कुशल कर्मचारी तैयार करने तक सीमित हो जाता है। इसका प्रभाव समाज पर भी पड़ता है। जब शिक्षा केवल रोजगार का साधन बन जाती है,

तब साहित्य, दर्शन, कला, सामाजिक विज्ञान और मौलिक शोध जैसे क्षेत्रों का महत्त्व कम होने लगता है। समाज में तकनीकी दक्षता तो बढ़ सकती है, परंतु नैतिकता, संवेदनशीलता और सामाजिक उत्तरदायित्व कमजोर पड़ने लगते हैं।

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने कहा था कि शिक्षा का परिणाम एक ऐसे व्यक्ति के रूप में होना चाहिए जो स्वतंत्र विचार कर सके, विवेकपूर्ण निर्णय ले सके और समाज के प्रति अपने दायित्वों को समझ सके। इसी प्रकार स्वामी विवेकानन्द शिक्षा को मनुष्य में निहित पूर्णता की अभिव्यक्ति मानते थे। इन दोनों विचारों में शिक्षा का उद्देश्य नौकरी से कहीं अधिक व्यापक दिखाई देता है। अत: यह आवश्यक है कि शिक्षा और रोजगार के बीच संतुलन स्थापित किया जाए। शिक्षा व्यक्ति को जीविका कमाने योग्य भी बनाए और जीवन जीने योग्य भी। वह केवल पेशेवर दक्षता ही न दे, बल्कि नैतिक चेतना, सामाजिक संवेदनशीलता और स्वतंत्र चिंतन की क्षमता भी विकसित करे। तभी शिक्षा अपने वास्तविक उद्देश्य को प्राप्त कर सकेगी और राष्ट्र के भविष्य को सही दिशा दे पाएगी।

शिक्षक का दायित्व बहुत महत्त्वपूर्ण है और उनके सामने चुनौतियां भी कम नहीं हैं। किसी भी शिक्षा व्यवस्था का सबसे महत्त्वपूर्ण स्तंभ शिक्षक होता है। शिक्षक केवल पाठ पढ़ाने वाला कर्मचारी नहीं, बल्कि समाज का निर्माता और भावी पीढ़ियों का मार्गदर्शक होता है किंतु वर्तमान परिस्थितियों में शिक्षक की भूमिका भी निरंतर बदलती जा रही है। आज अनेक स्थानों पर शिक्षक को एक शिक्षाविद् के बजाय प्रशासनिक कर्मचारी के रूप में देखा जाने लगा है। उनसे शिक्षा के अतिरिक्त अनेक प्रकार के कार्य लिए जाते हैं। चुनाव संबंधी कार्य, जनगणना, सर्वेक्षण, विभिन्न सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयन, डेटा संकलन, पोर्टल पर जानकारी अपलोड करना तथा अन्य प्रशासनिक दायित्व शिक्षकों पर निरंतर बढ़ते जा रहे हैं। इन कार्यों में समय और ऊर्जा का बड़ा हिस्सा व्यय हो जाता है। परिणामस्वरूप शिक्षक अपने मूल दायित्व- शिक्षण और विद्यार्थियों के बौद्धिक विकास पर पर्याप्त ध्यान नहीं दे पाते। एक शिक्षक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह नवीन विषयवस्तु का अध्ययन करे, अपनी शिक्षण विधियों को बेहतर बनाए, विद्यार्थियों की व्यक्तिगत समस्याओं को समझे और उनके समग्र विकास में योगदान दे। किंतु जब उसका अधिकांश समय गैर-शैक्षणिक कार्यों में व्यतीत होने लगे, तब शिक्षा की गुणवत्ता प्रभावित होना स्वाभाविक है।

जब किसी व्यक्ति से उसके मूल कार्य के अतिरिक्त लगातार अन्य कार्य कराए जाते हैं, तो उसके भीतर असंतोष उत्पन्न होना स्वाभाविक है। यही स्थिति आज अनेक शिक्षकों के साथ दिखाई देती है। शिक्षक स्वयं को शिक्षण के बजाय प्रशासनिक दायित्वों में उलझा हुआ पाते हैं। उन पर कार्य का दबाव बढ़ता है, किंतु उनके शैक्षणिक योगदान का मूल्यांकन अपेक्षित स्तर पर नहीं हो पाता। परिणामस्वरूप उनमें मानसिक तनाव, निराशा और असंतोष बढ़ने लगता है। यह असंतोष केवल व्यक्तिगत स्तर तक सीमित नहीं रहता, बल्कि इसका प्रभाव पूरी शिक्षा व्यवस्था पर पड़ता है। जब शिक्षक मानसिक रूप से संतुष्ट और प्रेरित नहीं होगा, तो वह विद्यार्थियों को प्रेरित करने में भी कठिनाई अनुभव करेगा। शिक्षा का वातावरण केवल भवनों और तकनीकी साधनों से नहीं बनता; उसका निर्माण शिक्षक के उत्साह, समर्पण और रचनात्मकता से होता है। यदि यही तत्व कमजोर पड़ जाएं, तो शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य प्रभावित होने लगता है।

शिक्षा व्यवस्था में निरंतर प्रयोगों और शिक्षकों पर बढ़ते गैर-शैक्षणिक भार का प्रत्यक्ष प्रभाव शिक्षण गुणवत्ता पर दिखाई देता है। आज अनेक विद्यालयों में विद्यार्थियों की संख्या बढ़ रही है, लेकिन गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की चुनौतियां भी बढ़ती जा रही हैं। शिक्षकों के पास विद्यार्थियों के साथ व्यक्तिगत संवाद के लिए पर्याप्त समय नहीं होता। कक्षा में पढ़ाने की प्रक्रिया कई बार औपचारिकता तक सीमित हो जाती है। इसके अतिरिक्त, परीक्षा-केंद्रित शिक्षा प्रणाली ने भी गुणवत्तापूर्ण शिक्षण को प्रभावित किया है। विद्यार्थी अंक प्राप्त करने की दौड़ में लगे हैं और शिक्षक भी परिणामों के दबाव में कार्य करते हैं। ऐसी स्थिति में ज्ञान की गहराई, आलोचनात्मक चिंतन और नैतिक विकास जैसे महत्त्वपूर्ण पक्ष पीछे छूट जाते हैं। शिक्षा का उद्देश्य केवल परीक्षा उत्तीर्ण कराना नहीं, बल्कि जीवन के लिए तैयार करना है। यदि शिक्षा इस उद्देश्य को पूरा नहीं कर पा रही है, तो यह समाज के लिए गंभीर चिंता का विषय है।

यदि वर्तमान प्रवृत्तियां इसी प्रकार जारी रहीं, तो इसके दूरगामी परिणाम राष्ट्र के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन पर दिखाई देंगे-

1. पहला परिणाम यह होगा कि शिक्षा और ज्ञान के बीच की दूरी बढ़ती जाएगी। डिग्रियां तो प्राप्त होंगी, किंतु वास्तविक ज्ञान और कौशल का अभाव बना रहेगा।
2. दूसरा परिणाम युवाओं में बढ़ती निराशा और भ्रम के रूप में सामने आ सकता है। जब शिक्षा और रोजगार के बीच संतुलन नहीं रहेगा, तब शिक्षित बेरोजगारी की समस्या और गंभीर हो सकती है।
3. तीसरा परिणाम लोकतांत्रिक मूल्यों पर पड़ेगा। शिक्षा नागरिकों में विवेक, सहिष्णुता और तार्किक दृष्टिकोण विकसित करती है। यदि शिक्षा कमजोर होगी, तो समाज में वैचारिक परिपक्वता भी प्रभावित होगी।
4. चौथा परिणाम शोध, नवाचार और बौद्धिक विकास के क्षेत्र में दिखाई देगा। कोई भी राष्ट्र तभी आगे बढ़ता है जब उसकी शिक्षा व्यवस्था जिज्ञासा और रचनात्मकता को प्रोत्साहित करे। यदि शिक्षा केवल रोजगार-केंद्रित बनकर रह जाएगी, तो नवाचार की गति धीमी पड़ सकती है।
5. पांचवां और सबसे महत्त्वपूर्ण परिणाम शिक्षक की सामाजिक प्रतिष्ठा में कमी के रूप में सामने आ सकता है। जिस समाज में शिक्षक का सम्मान और प्रभाव कम हो जाता है, वहां शिक्षा का स्तर लंबे समय तक ऊंचा नहीं रह सकता।

निष्कर्ष

भारतीय राजनीति और शिक्षा का संबंध अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि शिक्षा ही राष्ट्र के भविष्य का निर्माण करती है। राजनीति का दायित्व शिक्षा को स्थिर, समावेशी और गुणवत्तापूर्ण बनाना है, न कि उसे निरंतर प्रयोगों का क्षेत्र बना देना। शिक्षा में सुधार आवश्यक हैं, किंतु सुधार और प्रयोग के बीच का अंतर समझना भी उतना ही आवश्यक है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षा को राजनीतिक हितों से ऊपर उठाकर राष्ट्रीय विकास के दीर्घकालिक दृष्टिकोण से देखा जाए। शिक्षकों को गैर-शैक्षणिक कार्यों के बोझ से मुक्त कर उनके मूल दायित्व पर केंद्रित होने का अवसर दिया जाए। विद्यार्थियों को ऐसी शिक्षा मिले जो केवल नौकरी प्राप्त करने का माध्यम न होकर उन्हें जागरूक, संवेदनशील और जिम्मेदार नागरिक बनाए। यदि शिक्षा व्यवस्था को स्थिरता, गुणवत्ता और उद्देश्यपूर्ण दिशा प्रदान की जाती है, तो वह भारत को एक सशक्त, ज्ञानवान और प्रगतिशील राष्ट्र बनाने में निर्णायक भूमिका निभा सकती है। अन्यथा आज की नीतिगत अस्थिरता और अव्यवस्था के दूरगामी परिणाम आने वाली पीढ़ियों को लंबे समय तक भुगतने पड़ सकते हैं।

"अपने कर्म को वह अग्नि बनने दो जो तुम्हारे स्वार्थ और भय को भस्म कर दे। 'मुझे क्या मिलेगा' यह सोचना छोड़ दो; आत्मा की शुद्धि पर ध्यान दो। सच्ची विजय संसार से कुछ पाना नहीं, बल्कि अपने भीतर की कमज़ोरियों को हराना है।"

—स्वामी विवेकानन्द

श्री हनुमतये नमः

PG To XII

AFF. TO

VARANASI VISHWANATH VVIP अंग्रेजी शिक्षा भारतीय संस्कार INTERNATIONAL PUBLIC SCHOOL

CBSE

NEW DELHI

COMING SOON

VVIP CHARITABLE HOSPITAL प्रथम सुख निरोगी काया

शीघ्र खुल रहा है

धर्मार्थ

हास्पिटल

शिक्षा संस्कार और सदाचार के इस विद्या मन्दिर में धन उगाही (कमाई) की 0% भी सोच नही है। बल्कि कृषिप्रधान क्षेत्र की आने वाली भावी पीढ़ी को आदर्श शिक्षित सदाचारी बनाकर क्षेत्र के विकास, राष्ट्र के विकास की सोच प्रबन्धक के हृदय मे है।

वी. वी. आई. पी. चैरिटेबल हास्पिटल में उपलब्ध सेवाऐं

जनरल फिज़ीशियन	स्त्री रोग विशेषज्ञ
हड्डी रोग विशेषज्ञ	बाल रोग विशेषज्ञ
नाक, कान व गला विशेषज्ञ	दन्त रोग विशेषज्ञ
कैंसर रोग विशेषज्ञ	नेत्र रोग विशेषज्ञ
हृदय रोग विशेषज्ञ	शुगर रोग विशेषज्ञ
जनरल सर्जरी	हड्डी रोग की सर्जरी
आँखों के समस्त आपरेशन	एम्बुलेन्स की सुविधा





SHIV SHAKTI NAGAR, BELA ROAD, CHAUBEPUR, KANPUR NAGAR

9889816291, 9889806255, 8808555055

email-vvipschoolkanpur@gmail.com, website - www.vvipschoolkanpur.com

Smile Graphics Kanpur 9335354898

Trends are followed. The future is built.
AITransmute builds the things that outlive it.

ACHIEVEMENTS

Maritime Excellence Achievers Award, IMW 2025
Ministry of Ports, Shipping & Waterways
(1st Runner-Up)

Bhasha Setu Challenge
Ministry of I&B

MAR-a-THON 2025

ET AI Innovation Award 2026

+Many More

7+ PATENTS

OUR FLAGSHIP PRODUCTS

NIVIDA - India's First AI-based tender/bid evaluation engine

SUBHASHIT - India's First Voice Modulation, Pitch and Emotion Controlled, multilingual content transformation engine
22+ Indian languages · 100+ global languages

TAPAS - India's First Tugs & Pilot Allocation System.

+Many More

& ADVISORY

Healthcare | **Maritime** | **Media** | **Education**

AITransmute

WHERE AI BECOMES IMPACT

PRODUCTS | **SERVICES** | **ADVISORY**

FOUNDED BY
ABHAY SHUKLA
CEO, AITransmute

AN ALUMNUS OF
PT. DEEN DAYAL UPADHYAYA SD VIDYALAYA (CLASS OF 1999)
IIT KANPUR

contact@aitransmute.com
www.aitransmute.com

शिक्षा का व्यवसायीकरण और गिरते मानक

डॉ. एस. के. अग्रवाल (1994 बैच)



सर्वप्रथम तो शिक्षक बनते समय ही किसी व्यक्ति को अपने मस्तिष्क में यह बात बैठा लेनी चाहिए कि वह समाज को कुछ देने आया है, समाज से लेने नहीं। फिर चाहे जो उसको मिल जाए। चाहे वह सम्मान के रूप में मिले या धन के। वह उसके लिए बहुत होना चाहिए। आखिर यह उसकी अपनी इच्छा थी ना कि वह शिक्षक बने? तो समाज को दिशा देने में उसको कष्ट तो सहने ही पड़ेंगे, अभाव तो झेलने ही होंगे और एक दिन थक कर हो सकता है कि अकेला भी बैठना पड़े। लेकिन जो उसके पास मानसिक संतोष होगा कि उसने इस समाज से लिया कम और दिया कई गुना ज्यादा, उसकी बराबरी कोई नहीं कर सकता है। यह उसको अपने जीवन के अंतिम समय में ही महसूस होगा; इसकी अनुभूति बहुत अनोखी और अलौकिक होगी।

यदि आपको सिर्फ धन ही कमाना था तो अनेक तरीके के व्यवसाय थे, कोई भी काम किया जा सकता था और उससे धन कमाया जा सकता था। शिक्षा के क्षेत्र में व्यवसाय का उद्देश्य लेकर क्यों आए आप? आप जानते हैं कि आपने अपने देश का, अपने समाज का, अपने नौजवानों का या उन छोटे-छोटे नौनिहालों का कितना नुकसान किया है, जो आपके दिखाए मार्ग पर चलने वाले हैं? शिक्षक चाहे स्कूल में हो या किसी कोचिंग संस्थान में। शिक्षक, शिक्षक होता है। शिक्षक वो, जिसके प्रति अपने आप श्रद्धा उत्पन्न हो। शिक्षक वो, जो आपके अंदर पढ़ाई के प्रति रुचि पैदा करे। शिक्षक वो, जो आपके अंदर एक ऐसे व्यक्ति का निर्माण कर सके, जो कम से कम अपना जीवन तो अच्छे स्तर से जी पाए और जिसका व्यक्तित्व अच्छा हो। वह संस्कार और वो बुद्धिमत्ता जो उसको परिवार से नहीं मिल पाई और जो उसके जीवन में बहुत काम आने वाली है, वह देने का काम शिक्षक करे।

आप अपने विद्यार्थियों से कितना पैसा कमाना चाहते हो? उनका एडमिशन भी अगर आप कहीं करवा रहे हो तो आपको संस्था से कमीशन चाहिए? यह कहां तक उचित है? आप उनकी उन हरकतों को, जिनको आप भी जानते हैं कि ये कहीं से उसके लिए हितकारी नहीं हैं, नजरअंदाज कर रहे हो। क्योंकि आपके टोकने या रोकने से हो सकता है कि वह आपसे पढ़ना छोड़ दे या आपको पसंद न करे। किंतु यदि आप शिक्षक हैं तो इसकी परवाह कब से करने लगे? ना आपको देखकर लगता है कि आप शिक्षक हैं, ना आपकी बातों में या व्यक्तित्व में एक शिक्षक का रूप नजर आता है। फिर तो समाज में शिक्षक की छवि धूमिल होती ही जाएगी।

आप पढ़ाने में अगर सफल हो जाते हैं, तो अब आप अपने अन्य उद्देश्य, अपने अंदर की दबी हुई इच्छाएं, अपने बहुत सारे व्यसन उनके द्वारा पूरा करने की कोशिश करते हो? मतलब यह कि आप अपने ही विद्यार्थियों को छलते हो। एक मर्तबान से कितना घी निकालना चाहोगे? और समस्या यह भी है कि जब समाज में चार व्यक्ति ऐसा कर रहे होते हैं तो उस एक व्यक्ति के ऊपर भी लोगों का विश्वास कहीं न कहीं खत्म हो जाता है जो अच्छे तरीके से समाज में कार्य कर रहा है या शिक्षक की भूमिका सही से निभा रहा है। उसका भी मनोबल टूटता है।

ऐसा नहीं है कि लोग आज शिक्षकों को या शिक्षण संस्थानों को अच्छा नहीं मानते हैं या उनको सम्मान नहीं देते। बिल्कुल, देने वाले सम्मान देते हैं, विश्वास रखते हैं। सत्य तो यह है कि आपने अपने ही हाथों से शिक्षक की भूमिका की हत्या कर दी है और आप वह नींव रख रहे हैं जो भविष्य में शिक्षक की भूमिका को 'आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस/कृत्रिम बुद्धिमत्ता' की ओर ले जाएगी।

शिक्षे! तुम्हारा नाश हो, तुम नौकरी के हित बनी

डॉ. पवन मिश्र (1996 बैच)



(भारतीय शिक्षा-दर्शन, शिक्षक का आत्ममंथन और शिक्षा की पुनर्प्रतिष्ठा का आह्वान)

"सा विद्या या विमुक्तये।" भारतीय मनीषा ने शिक्षा को कभी केवल अक्षरज्ञान, सूचना-संग्रह अथवा जीविका अर्जित करने का साधन नहीं माना। उसके लिए शिक्षा मनुष्य की आंतरिक मुक्ति, आत्मविकास और सामाजिक उत्तरदायित्व का माध्यम रही है। सभ्यता के इतिहास में अनेक शक्तियों ने मनुष्य के जीवन को प्रभावित किया है। सामर्थ्य ने साम्राज्य बनाए, अर्थ ने वैभव दिया और विज्ञान ने सुविधाओं के नए आयाम खोले; किंतु मनुष्य को वास्तव में मनुष्य बनाने का कार्य शिक्षा ने ही किया। उसी ने ज्ञान को विवेक से, शक्ति को मर्यादा से और बुद्धि को करुणा से जोड़ा।

भारतीय शिक्षा-दर्शन का मूल प्रश्न कभी यह नहीं रहा कि मनुष्य कितना जानता है; प्रश्न यह था कि वह कैसा बन रहा है। यहां ज्ञान का मूल्य उसकी मात्रा से नहीं, बल्कि उससे विकसित होने वाले विवेक, विनय और आत्मबोध से आंका गया। शिक्षा का लक्ष्य बाह्य सफलता नहीं, अंत:करण का परिष्कार था। इसलिए हमारे आचार्यों ने विद्या को साधन नहीं, साधना माना। तैत्तिरीय उपनिषद की शिक्षावल्ली में गुरुकुल से विदा होते शिष्य को जो उपदेश दिया गया है, वह केवल दीक्षांत समारोह का औपचारिक संदेश नहीं, बल्कि भारतीय शिक्षा-दृष्टि का घोष है- "सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायान्मा प्रमद:।" इन पंक्तियों में शिक्षा का संपूर्ण दर्शन समाहित है। यहां कहीं यह नहीं कहा गया कि अधिक धन अर्जित करो, उच्च पद प्राप्त करो या प्रतिष्ठा के शिखर पर पहुंचो। गुरु जानता था कि जो सत्यनिष्ठ होगा, धर्माचरण करेगा और स्वाध्याय में निरंतर लगा रहेगा, उसके लिए जीवन की उपलब्धियां स्वाभाविक रूप से मार्ग प्रशस्त करेंगी। इसलिए शिक्षा का उद्देश्य केवल आजीविका नहीं, जीवन का परिष्कार था।

इसी कारण भारतीय परंपरा में शिक्षा मनुष्य को केवल दक्ष नहीं बनाती थी, बल्कि संवेदनशील भी बनाती थी। वह बुद्धि को प्रखर करती थी, पर उसे अहंकार का उपकरण नहीं बनने देती थी। वह प्रतिस्पर्धा की प्रेरणा देती थी, किंतु सहयोग और सह-अस्तित्व की चेतना भी जगाती थी। ज्ञान का अर्थ केवल अधिक जानना नहीं, बेहतर मनुष्य बनना था। किन्तु जब इस आदर्श की तुलना वर्तमान शिक्षा-व्यवस्था से की जाती है, तो एक गहरी बेचैनी मन में उठती है। ऐसा प्रतीत होता है कि शिक्षा का केंद्र धीरे-धीरे मनुष्य से हटकर बाज़ार की ओर खिसक गया है। विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में चरित्र-निर्माण की चर्चा कम होती जा रही है, जबकि करियर, पैकेज और प्रतिस्पर्धा का दबाव निरंतर बढ़ता जा रहा है। शिक्षा का मूल्य अब इस आधार पर अधिक आंका जाने लगा है कि वह कितनी शीघ्र और कितनी लाभप्रद नौकरी दिला सकती है। इसी विडंबना ने राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जैसे विराट कवि को यह लिखने पर मजबूर किया कि "शिक्षे! तुम्हारा नाश हो, तुम नौकरी के हित बनी।" यह शिक्षा के विरोध का उद्घोष नहीं है। यह शिक्षा के तत्कालीन स्वरूप से उनके मन में उपजी पीड़ा की अभिव्यक्ति है। यह उस मानसिकता की आलोचना है जिसने शिक्षा को उसके व्यापक मानवीय उद्देश्य से अलग कर केवल रोजगार प्राप्ति का माध्यम बना दिया है। जब विद्यार्थी का मूल्य उसके चरित्र से अधिक उसके वेतन-पैकेज से आंका जाने लगे, जब विश्वविद्यालयों की प्रतिष्ठा केवल प्लेसमेंट आंकड़ों से तय होने लगे और जब अभिभावकों की सबसे बड़ी चिंता केवल अपने पाल्य की नौकरी रह जाए, तब यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि शिक्षा अपने मूल उद्देश्य से कितनी दूर चली आई है।

रोजगार निस्संदेह आवश्यक है। शिक्षा जीवनोपयोगी भी होनी चाहिए। किंतु जब रोजगार ही शिक्षा का अंतिम और एकमात्र लक्ष्य बन जाए तब उसके सांस्कृतिक, नैतिक और मानवीय आयाम सिकुड़ने लगते हैं। साधन यदि साध्य का स्थान ले ले तो शिक्षा की आत्मा धीरे-धीरे क्षीण होने लगती है। वर्तमान समय की सबसे बड़ी विडंबना यह नहीं है कि शिक्षा रोजगार से जुड़ गई

है। विडंबना यह है कि रोजगार ही शिक्षा का पर्याय बनता जा रहा है। अध्ययन का उद्देश्य ज्ञानार्जन नहीं, परीक्षा में सफलता रह गया है। परीक्षा का उद्देश्य सीखना नहीं, चयनित होना और चयन का उद्देश्य समाजोपयोगी जीवन नहीं, व्यक्तिगत उन्नति तक सीमित होता जा रहा है। परिणामत: शिक्षा का पूरा तंत्र उपयोगितावाद की ऐसी परिधि में सिमट गया है, जहां चरित्र की अपेक्षा प्रमाणपत्र, जिज्ञासा की अपेक्षा अंक और विवेक की अपेक्षा कौशल अधिक महत्त्वपूर्ण समझे जाने लगे हैं।

यहां एक मूलभूत प्रश्न यह उठता है कि क्या शिक्षा और प्रशिक्षण एक ही बात हैं? यदि उद्देश्य केवल किसी व्यक्ति को रोजगार के योग्य बनाना है तो वह प्रशिक्षण अवश्य है, पर शिक्षा नहीं। प्रशिक्षण जहां व्यक्ति को किसी कार्य में दक्ष बनाता है वहीं शिक्षा उसे उस दक्षता के नैतिक और सामाजिक उपयोग का विवेक प्रदान करती है। प्रशिक्षण हाथों को कुशल बनाता है, शिक्षा मनुष्य को उत्तरदायी बनाती है। भारतीय ज्ञान-परंपरा ने इस अंतर को बहुत पहले स्पष्ट कर दिया था। मुण्डक उपनिषद में 'परा' और 'अपरा' विद्या का विवेचन इसी सत्य की ओर संकेत करता है। अपरा विद्या मनुष्य को संसार के व्यवहार में समर्थ बनाती है, जबकि परा विद्या उसे अपने अस्तित्व और जीवन के उद्देश्य का बोध कराती है। दोनों में कोई विरोध नहीं है; वास्तविक शिक्षा तो तब पूर्ण होती है, जब दोनों का संतुलित समन्वय हो। आधुनिक शिक्षा ने विज्ञान, प्रौद्योगिकी, चिकित्सा, प्रबंधन और संचार जैसे क्षेत्रों में अभूतपूर्व उपलब्धियां अर्जित की हैं। यह उसकी बड़ी उपलब्धि है और इसका सम्मान होना चाहिए। किंतु यदि इस प्रगति के साथ नैतिक संवेदना, सामाजिक उत्तरदायित्व और आत्मानुशासन का विकास न हो तो ज्ञान अधूरा रह जाता है। बुद्धि का विस्तार तभी सार्थक है, जब उसके साथ विवेक भी विकसित हो। इसीलिए किसी भी राष्ट्र का भविष्य केवल उसकी अर्थव्यवस्था, तकनीकी प्रगति या भौतिक संसाधनों से निर्धारित नहीं होता। उसका वास्तविक स्वरूप उन मूल्यों से निर्मित होता है, जिन्हें उसकी शिक्षा-व्यवस्था अगली पीढ़ी तक पहुंचाती है। संसद कानून बना सकती है, न्यायालय न्याय दे सकते हैं और उद्योग समृद्धि ला सकते हैं परन्तु नागरिकों का चरित्र गढ़ने का दायित्व अंतत: शिक्षा पर ही आता है।

आज आवश्यकता किसी नए शिक्षा-दर्शन की नहीं है। आवश्यकता उस मूल चेतना को पुन: जागृत करने की है, जिसने शिक्षा को मनुष्यत्व का पर्याय माना था। यदि शिक्षा केवल आर्थिक प्रगति का माध्यम बनकर रह जाएगी तो विकास का ढांचा भले ही भव्य दिखाई दे, उसकी नैतिक नींव कमजोर होती जाएगी। यहीं से शिक्षक की भूमिका प्रारंभ होती है। किसी भी शिक्षा-व्यवस्था की सफलता केवल उसके पाठ्यक्रम, भवनों या तकनीकी संसाधनों पर निर्भर नहीं करती। इन सबको वास्तविक अर्थ देने वाला तत्व शिक्षक है। विद्यालय भवन दे सकता है, पाठ्यक्रम दिशा दे सकता है और परीक्षा मूल्यांकन कर सकती है किंतु विद्यार्थी के भीतर सीखने की प्रेरणा, जिज्ञासा और जीवन-दृष्टि जगाने का कार्य केवल शिक्षक ही कर सकता है। भारतीय संस्कृति में गुरु का सम्मान उसके पद के कारण नहीं, बल्कि उसके जीवन के कारण था। वह केवल ज्ञान का संप्रेषक नहीं, स्वयं ज्ञान का साधक था। उसके शब्दों की विश्वसनीयता उसके आचरण से उत्पन्न होती थी। इसलिए भारतीय परंपरा ने गुरु को देवतुल्य कहा। यह किसी व्यक्ति-पूजा का विधान नहीं, बल्कि उस उत्तरदायित्व की प्रतिष्ठा है जिसे समाज ने शिक्षक के कंधों पर रखा और ऋषियों ने कहा-

"गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु: गुरुर्देवो महेश्वर:। गुरु: साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नम:॥"

इस श्लोक का आशय गुरु को अलौकिक सिद्ध करना नहीं है। इसका अभिप्राय यह है कि शिक्षक सृजन करता है, व्यक्तित्व का संरक्षण करता है और आवश्यक होने पर उसका परिष्कार भी करता है। यही कारण है कि भारतीय परंपरा में शिक्षक का सबसे बड़ा अधिकार उसके पद से नहीं, उसके चरित्र और सतत् अध्ययन से सिद्ध होता था। इसी संदर्भ में तैत्तिरीय उपनिषद का यह निर्देश "स्वाध्यायान्मा प्रमद:।" यह केवल विद्यार्थियों के लिए नहीं, शिक्षकों के लिए भी समान रूप से लागू होता है। जो स्वयं सीखना छोड़ देता है, वह दूसरों में सीखने की प्रेरणा भी लंबे समय तक जीवित नहीं रख सकता। अध्यापन का वास्तविक अधिकार नियुक्ति-पत्र से नहीं, निरंतर स्वाध्याय और आत्मपरिष्कार से अर्जित होता है।

आज शिक्षा के सामने जो संकट दिखाई देता है, वह केवल पाठ्यक्रमों या नीतियों का संकट नहीं है। वह शिक्षक के बौद्धिक और नैतिक जीवन से भी जुड़ा हुआ प्रश्न है। जिस शिक्षा-व्यवस्था का आधार स्वाध्याय, चिंतन और संवाद हो, वहां यदि शिक्षक स्वयं अध्ययन से दूर होने लगे, तो विद्यार्थियों में ज्ञान-पिपासा कैसे जागृत होगी? जो दीपक स्वयं मद्धिम पड़ जाए, वह दूसरों के

लिए आलोक का स्रोत नहीं बन सकता। परंतु इस प्रश्न को केवल शिक्षक की व्यक्तिगत कमजोरी मान लेना भी न्यायसंगत नहीं होगा। शिक्षा-जगत की वर्तमान परिस्थितियों ने उसके सामने ऐसी अनेक चुनौतियां खड़ी कर दी हैं, जिनकी अनदेखी नहीं की जा सकती। आज शिक्षक के हाथों में पुस्तकें कम और अभिलेख अधिक हैं। कक्षा की तैयारी से अधिक समय पोर्टलों, प्रतिवेदनों और प्रशासनिक औपचारिकताओं में व्यतीत हो जाता है। कभी सर्वेक्षण, कभी निर्वाचन, कभी जनगणना, कभी विभिन्न योजनाओं का सत्यापन। इन सबके बीच अध्यापन का मूल कार्य अनेक बार पीछे छूट जाता है। इससे हानि केवल शिक्षक की नहीं, शिक्षा की भी है। जिस समय शिक्षक विद्यार्थियों के भीतर प्रश्न, जिज्ञासा और विचार का अंकुर रोप सकता है, उसी समय वह प्रपत्रों और प्रक्रियाओं में उलझा रहता है। धीरे-धीरे उसका श्रम सृजनात्मक अध्यापन से हटकर यांत्रिक प्रशासनिक कार्यों में खपने लगता है। यह व्यवस्था की ऐसी विडंबना है, जिसका दुष्प्रभाव अंततः आने वाली पूरी पीढ़ी पर पड़ रहा है। किन्तु आत्ममंथन तभी सार्थक होता है, जब वह निष्पक्ष हो। यदि व्यवस्था की कमियों की चर्चा आवश्यक है, तो शिक्षक समाज के भीतर उत्पन्न हुई कुछ दुर्बलताओं को स्वीकार किया जाना भी उतना ही आवश्यक है। यह कहना न तो उचित होगा और न सत्य कि समस्त शिक्षक समाज अपने दायित्व से विमुख हो गया है। आज भी असंख्य शिक्षक सीमित संसाधनों और प्रतिकूल परिस्थितियों में उल्लेखनीय कार्य कर रहे हैं। उनके श्रम और समर्पण के कारण ही शिक्षा की आशा अभी जीवित है। फिर भी यह स्वीकार करने में संकोच नहीं होना चाहिए कि शिक्षकों का एक वर्ग ऐसा भी है, जहां स्वाध्याय की परंपरा क्षीण हुई है, समय-पालन और कर्तव्यनिष्ठा शिथिल हुई है तथा अध्यापन को केवल सेवा का दायित्व मानकर निभाने की प्रवृत्ति बढ़ी है। यह आलोचना किसी व्यक्ति या समुदाय की नहीं, बल्कि उस प्रवृत्ति की है जो शिक्षा के मूल उद्देश्य को भीतर से दुर्बल कर रही है।

शिक्षक का विद्यार्थियों पर प्रभाव उसके पढ़ाए हुए पाठों से कहीं अधिक उसके जीवन से पड़ता है। विद्यार्थी प्रायः शिक्षक के शब्दों को ही नहीं, उसके व्यवहार, अनुशासन, भाषा, संवेदना और कार्यशैली को भी ग्रहण करते हैं। इसलिए समय पर विद्यालय पहुंचना केवल प्रशासनिक नियम का पालन नहीं, बल्कि विद्यार्थियों को अनुशासन का मौन पाठ पढ़ाना है। विषय का निरंतर अध्ययन केवल व्यक्तिगत उन्नति का साधन नहीं, अध्यापन की विश्वसनीयता का आधार है। विद्यार्थियों के प्रति आत्मीयता भावुकता नहीं, बल्कि शिक्षा का नैतिक दायित्व है। भारतीय गुरु-परंपरा की सबसे बड़ी विशेषता यही थी कि वहां उपदेश और आचरण के बीच दूरी नहीं थी। गुरु का जीवन ही उसका सबसे प्रभावशाली भाषण होता था। वह जितना अपने शब्दों से सिखाता था, उससे कहीं अधिक अपने आचरण से प्रेरित करता था। इसी कारण समाज ने उसे केवल अध्यापक नहीं, आचार्य कहा, वह जो स्वयं आचरण करके सिखाए।

स्वामी विवेकानन्द का प्रसिद्ध कथन था कि यदि उन्हें सौ चरित्रवान, निर्भीक और ऊर्जावान युवक मिल जाए, तो वे समाज की दशा और दिशा बदल सकते हैं। यह कथन आज भी उतना ही प्रासंगिक है। किंतु ऐसे युवक किसी संयोग से नहीं बनते। उनका निर्माण परिवार में संस्कारों से, समाज में मूल्यों से और विद्यालय में शिक्षक के व्यक्तित्व से होता है। इसलिए शिक्षा-सुधार की चर्चा केवल नई नीतियों, आधुनिक तकनीक या संसाधनों तक सीमित नहीं रहनी चाहिए। शिक्षा के क्षेत्र में किसी भी परिवर्तन का वास्तविक आधार शिक्षक का व्यक्तित्व ही होगा। यदि शिक्षक अपने भीतर स्वाध्याय की जिज्ञासा, सत्यनिष्ठा की दृढ़ता और विद्यार्थियों के प्रति आत्मीय उत्तरदायित्व को पुनः जागृत कर सके, तो शिक्षा का बड़ा परिवर्तन बिना किसी व्यापक अभियान के भी संभव है। अंततः शिक्षक को यह स्मरण रखना होगा कि उसकी नियुक्ति भले शासन या प्रशासन ने की है परन्तु उसकी प्रतिष्ठा समाज ही निर्धारित करता है। वेतन उसे सेवा के प्रतिफल के रूप में मिलता है, किंतु सम्मान उसके जीवन और आचरण से अर्जित होता है। सेवा-पुस्तिका उसके कार्यकाल का लेखा रख सकती है परन्तु इतिहास उसके व्यक्तित्व का मूल्यांकन करता है। यही कारण है कि शिक्षक का प्रत्येक दिन केवल नौकरी का एक दिन नहीं, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के भविष्य में किया गया एक मौन निवेश होता है।

ईशावास्य उपनिषद का उद्घोष- "तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा" मात्र वैराग्य का संदेश नहीं, बल्कि संयम का शाश्वत सूत्र है। कठोपनिषद् में 'श्रेय' और 'प्रेय' का विवेचन हमें स्मरण कराता है कि मनुष्य के सामने सदैव दो मार्ग होते हैं, एक तात्कालिक लाभ का और दूसरा दीर्घकालिक कल्याण का। आज शिक्षा के सामने बड़ा संकट यही है कि यहां प्रेय को ही श्रेय समझ लिया है। अल्पकालिक सफलता की चकाचौंध ने दीर्घकालिक चरित्र-निर्माण की साधना को धूमिल कर दिया है। यदि शिक्षा का लक्ष्य केवल त्वरित सफलता, रोजगार और आर्थिक उपयोगिता तक सीमित रह जाएगा तो वह दक्ष कर्मी तो तैयार कर सकती है, किंतु जागरूक नागरिक नहीं। राष्ट्र की दीर्घकालिक शक्ति केवल उसके नागरिकों के कौशल में नहीं, उनके चरित्र में निहित होती है। इसीलिए आज आवश्यकता केवल पाठ्यक्रमों के पुनरीक्षण या नई शिक्षा नीतियों की नहीं, बल्कि शिक्षा के मूल दृष्टिकोण पर पुनर्विचार की है। विद्यालयों को पुनः ऐसे वातावरण का निर्माण करना होगा जहां जिज्ञासा का सम्मान हो, संवाद जीवित रहे और नैतिक संवेदनाएं शिक्षा की स्वाभाविक धारा बनें। विश्वविद्यालय केवल उपाधियां प्रदान करने वाले संस्थान न रहें, बल्कि स्वतंत्र चिंतन और बौद्धिक साहस के केंद्र बनें। विज्ञान और तकनीक का विकास जितना आवश्यक है उतना ही आवश्यक है कि उनके साथ मानवीय मूल्यों का भी संवर्धन हो। ज्ञान तभी पूर्ण होता है जब वह मनुष्य को अधिक सक्षम बनाने के साथ-साथ अधिक संवेदनशील भी बनाए।

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में यह परिवर्तन किसी एक वर्ग के प्रयास से संभव नहीं होगा। शिक्षक, विद्यार्थी, अभिभावक, समाज और शासन। सभी इस प्रक्रिया के समान भागीदार हैं। विद्यार्थी यदि अध्ययन को केवल परीक्षा की तैयारी मानेंगे, अभिभावक शिक्षा को केवल निवेश समझेंगे, शिक्षक उसे मात्र सेवा का दायित्व मानेंगे और शासन उसे केवल आंकड़ों में मापेगा तो शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य कभी पूरा नहीं हो सकेगा। शिक्षा एक साझा सांस्कृतिक उत्तरदायित्व है, उसका उत्थान भी सामूहिक चेतना से ही संभव है। इतिहास इस सत्य का साक्षी है कि किसी भी सभ्यता का वास्तविक वैभव उसकी इमारतों, आर्थिक सामर्थ्य या तकनीकी उपलब्धियों से नहीं आंका जाता। उसकी पहचान उन मनुष्यों से होती है, जिन्हें उसकी शिक्षा-व्यवस्था तैयार करती है। जिन समाजों ने चरित्र की अपेक्षा चातुर्य, सत्य की अपेक्षा सुविधा और मूल्यों की अपेक्षा बाज़ार को अधिक महत्त्व दिया, वे कुछ समय के लिए समृद्ध अवश्य हुए परन्तु स्थायी आदर्श प्रस्तुत नहीं कर सके। इसके विपरीत जिन राष्ट्रों ने शिक्षा को केवल ज्ञानार्जन नहीं, व्यक्तित्व-निर्माण का माध्यम बनाया, वे इतिहास में दीर्घजीवी और प्रेरणास्रोत बने। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की पंक्ति "शिक्षे! तुम्हारा नाश हो, तुम नौकरी के हित बनी।" इसी गहरी चिंता की अभिव्यक्ति है। यह शिक्षा के व्यावसायीकरण, उपयोगितावाद और आत्मविस्मृति के विरुद्ध उद्घोष है। यह उस मानसिकता के विसर्जन का आह्वान है जिसने ज्ञान के महासागर को वेतन की एक छोटी-सी धारा में सीमित कर दिया है। रोजगार आवश्यक है, किंतु यदि वही शिक्षा का अंतिम मानदंड बन जाए तो ज्ञान की व्यापकता और मनुष्यत्व की ऊंचाई दोनों ही संकुचित हो जाती हैं।

आज आवश्यकता उस शिक्षा को पुनः प्रतिष्ठित करने की है जो बुद्धि को विवेक, हृदय को करुणा और जीवन को उत्तरदायित्व से संपन्न करे। जहां विद्यालय नियुक्ति-पत्रों के उत्पादन केंद्र नहीं, संस्कारों के सृजन-स्थल हों। जहां विश्वविद्यालय सूचना का भंडार भर न बनें, बल्कि विचार और विमर्श की जीवंत परंपरा के वाहक बनें और जहां शिक्षक केवल पाठ पढ़ाने वाला कर्मचारी नहीं, अपने व्यक्तित्व से प्रेरणा देने वाला गुरु बनने का सतत प्रयास करे। शिक्षा का भविष्य किसी एक नीति, योजना या शासनादेश से निर्धारित नहीं होगा। उसका भविष्य उन लाखों शिक्षकों के हाथों में है जो प्रतिदिन कक्षा में प्रवेश करते हैं, उन विद्यार्थियों में है जो सीखने की जिज्ञासा को जीवित रखते हैं और उस समाज के हाथों में है जो शिक्षा को केवल आर्थिक उन्नति का साधन नहीं, सांस्कृतिक निरंतरता और राष्ट्रीय चरित्र की आधारशिला मानता है। जब यह दृष्टि पुनः स्थापित होगी, तब शिक्षा नौकरी की दासी नहीं, राष्ट्रचेतना की अधिष्ठात्री बनेगी। वही दिन भारतीय शिक्षा-दर्शन की वास्तविक पुनर्प्रतिष्ठा का दिन होगा।

एआई के युग में शिक्षा: उत्तरों से अधिक जरूरी हैं सवाल

प्रभाकर बिसेन (1988 बैच)



शिक्षा और सीखने के बारे में सोचने के लिए शायद इससे अधिक रोचक और महत्त्वपूर्ण समय कभी नहीं रहा। सदियों से सीखने की प्रक्रिया तीन बुनियादी सवालों के इर्द-गिर्द घूमती रही है— क्या, क्यों और कैसे? क्या हमें बताता है कि कोई चीज क्या है; क्यों उसके उद्देश्य और कारण को समझाता है; और कैसे उस ज्ञान को व्यवहार में लाने का रास्ता दिखाता है।

तकनीक ने धीरे-धीरे इन तीनों के बीच का संतुलन बदल दिया। कैलकुलेटर ने जटिल गणनाएं खुद करने की जरूरत कम कर दी। कंप्यूटर ने इसे और आगे बढ़ाया और गणना, जानकारी खोजने तथा दोहराए जाने वाले कामों को मशीनों के हवाले कर दिया। एक अर्थ में, तकनीक ने धीरे-धीरे "कैसे" का बड़ा हिस्सा अपने हाथ में ले लिया। लेकिन "क्यों" अभी भी मुख्य रूप से हमारा था।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता ने इस समीकरण को एक कदम और आगे बढ़ा दिया है। एआई बता सकता है कि कोई चीज क्या है, उसे कैसे करना है। यह कोड लिख सकता है, आंकड़ों का विश्लेषण कर सकता है, तर्क प्रस्तुत कर सकता है, प्रस्तुति बना सकता है और समाधान सुझा सकता है। इतना ही नहीं, वह 'क्यों' का ऐसा उत्तर भी दे सकता है जो सुनने में अत्यंत विश्वसनीय लगे।

यहीं एक बुनियादी सवाल खड़ा होता है— जब मशीनें हमारे लिए उत्तर इतनी तेजी से उपलब्ध करा सकती हैं, तो मनुष्य स्वयं सीखने की कठिन प्रक्रिया से क्यों गुजरे?

यह प्रश्न केवल विद्यार्थियों का नहीं है। आज सीखना जीवन भर चलने वाली आवश्यकता है। हम चाहे विद्यार्थी हों, पेशेवर हों, प्रबंधक हों, उद्यमी हों या किसी संस्था का नेतृत्व कर रहे हों, बदलती दुनिया में लगातार कुछ नया सीखना पड़ता है। इसलिए सवाल केवल यह नहीं है कि हम अगली पीढ़ी को कैसे शिक्षित करें, सवाल यह भी है कि जब जानकारी और उत्तर लगभग तुरंत उपलब्ध हों, तब हम स्वयं सीखते कैसे रहें?

मानव इतिहास के अधिकांश हिस्से में ज्ञान तक पहुंच सबसे बड़ी चुनौती थी। आज स्थिति लगभग उलट है। जानकारी बहुत है, उत्तर बहुत हैं, लेकिन समझ, विवेक और सही निर्णय की क्षमता उतनी आसानी से उपलब्ध नहीं है। ऐसे समय में "मुझे नहीं पता" कह पाने की विनम्रता, कुछ नया जानने की इच्छा, "क्यों?" पूछने की आदत और सही उत्तर तथा केवल विश्वसनीय लगने वाले उत्तर में अंतर करने की क्षमता और अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है।

यही बात एआई और रोजगार को लेकर पैदा हुई चिंता पर भी लागू होती है। यह आशंका स्वाभाविक है कि एआई कुछ नौकरियां समाप्त करेगा और अनेक नौकरियों का स्वरूप बदल देगा। पिछली तकनीकी क्रांतियों ने भी ऐसा ही किया है। लेकिन शायद बेहतर सवाल यह नहीं है कि "एआई मेरे बदले क्या कर सकता है?", बल्कि यह है कि "एआई की सहायता से मैं ऐसा क्या कर सकता हूं, जो अकेले मेरे लिए संभव नहीं था?"

इतिहास बताता है कि बड़े तकनीकी बदलावों ने केवल पुराने कामों को समाप्त नहीं किया; उन्होंने नए उद्योग, नए पेशे और नई संभावनाएं भी पैदा कीं। औद्योगिक क्रांति, कंप्यूटर और इंटरनेट - इन सभी ने ऐसी दुनिया बनाई जिसकी पहले कल्पना करना कठिन था। एआई भी संभवत: ऐसा ही परिवर्तन लाएगा।

सही ढंग से इस्तेमाल किया जाए तो एआई इंसानी क्षमता का विस्तार बन सकता है - वह एक व्यक्तिगत शिक्षक, शोध-सहायक, विश्लेषणात्मक सहयोगी या सृजनात्मक सहचर बन सकता है। वह हमें अधिक जानकारी समझने, अधिक विकल्प

तलाशने और पहले की तुलना में कहीं अधिक काम करने में सक्षम बना सकता है। शायद पहली बार एक सामान्य व्यक्ति को ऐसी बौद्धिक क्षमताओं तक पहुंच मिल रही है, जिनके लिए पहले पूरी टीम, संस्थान या बड़े संसाधनों की आवश्यकता होती थी।

लेकिन इसके साथ एक महत्त्वपूर्ण शर्त है— एआई को सोचने की प्रक्रिया का विकल्प नहीं बनने देना चाहिए।

खतरा एआई में नहीं, बल्कि बिना सोचे उसके उत्तर को स्वीकार करने में है। यदि हम मशीन का पहला उत्तर ही अंतिम उत्तर मान लें, तो हम बुद्धिमत्ता का उपयोग करने वाले नहीं, बल्कि उसके केवल उपभोक्ता बन सकते हैं।

यहीं शिक्षा को बदलने की आवश्यकता है। हमें विद्यार्थियों और स्वयं को केवल उत्तर ढूंढ़ना नहीं, बल्कि उत्तर को परखना सिखाना होगा। यह उत्तर किन मान्यताओं पर आधारित है? इसके समर्थन में क्या प्रमाण हैं? इसमें क्या छूट गया है? यह गलत कैसे हो सकता है? इसके दूसरे संभावित स्पष्टीकरण क्या हैं? और शायद सबसे महत्त्वपूर्ण सवाल: अब हमें अगला सवाल क्या पूछना चाहिए?

सीखने में कुछ रचनात्मक संघर्ष भी आवश्यक है। इसलिए एआई को दूर रखने के बजाय एक सरल तरीका अपनाया जा सकता है— पहले स्वयं प्रयास करो, फिर एआई की सहायता लो, और फिर दोबारा सोचो। पहले समस्या को स्वयं समझने और हल करने की कोशिश करें। फिर एआई का उपयोग अपने विचार को चुनौती देने, उसमें सुधार करने या नई संभावनाएं तलाशने के लिए करें। अंत में यह समझें कि क्या बदला और क्यों। प्रयास केवल उत्तर तैयार करने का नहीं होना चाहिए, बल्कि यह समझने का होना चाहिए कि उस उत्तर तक पहुंचे कैसे। अंतिम उद्देश्य सोचने की क्षमता को मजबूत करना होना चाहिए।

इसका अर्थ है कि शिक्षा के मूल्यांकन के तरीके को भी बदलना होगा। जब एआई निबंध लिख सकता है, समस्या हल कर सकता है या प्रस्तुति तैयार कर सकता है, तब केवल अंतिम परिणाम यह नहीं बता सकता कि विद्यार्थी ने वास्तव में कितना सीखा है। हमें यह भी देखना होगा कि समस्या को कैसे समझा गया, कौन-सी मान्यताएं बनाई गईं, किन प्रमाणों को देखा गया, किन विकल्पों पर विचार किया गया और निष्कर्ष तक पहुंचने की तर्क-प्रक्रिया क्या रही। दूसरे शब्दों में, हमें केवल परिणाम की गुणवत्ता नहीं, सोचने की गुणवत्ता भी मापनी होगी।

भारत के लिए एआई एक और असाधारण अवसर लेकर आया है। भाषा लंबे समय से ज्ञान के प्रसार में एक बड़ी बाधा रही है। यदि उच्च गुणवत्ता वाली शैक्षिक सामग्री हिंदी, तमिल, बांग्ला, मराठी और भारत की अन्य भाषाओं में सहजता से उपलब्ध हो सके, तो करोड़ों लोग जटिल विषयों को समझने के लिए पहले अंग्रेजी की बाधा पार करने की मजबूरी से मुक्त हो सकते हैं। यह केवल अनुवाद नहीं होगा; यह भारत की भाषाई और सांस्कृतिक विविधता के बीच ज्ञान का एक शक्तिशाली सेतु बन सकता है।

शायद इसलिए हमें सीखने के पारंपरिक 'क्या-क्यों-कैसे' को थोड़ा और व्यापक बनाना होगा। 'क्या' आवश्यक है, क्योंकि बुनियादी ज्ञान का कोई विकल्प नहीं। 'कैसे' आवश्यक है, क्योंकि व्यावहारिक क्षमता और अनुभव को पूरी तरह मशीन को नहीं सौंपा जा सकता। और 'क्यों' आवश्यक है, क्योंकि समझ का कोई विकल्प नहीं।

लेकिन हमें कुछ और सवाल भी सिखाने होंगे—

हमें कैसे पता कि यह सही है?

अगर हम गलत हों तो क्या होगा?

हमें क्या करना चाहिए?

और अगला सवाल क्या होना चाहिए?

यही शायद भविष्य की शिक्षा का सबसे बड़ा उद्देश्य होगा। हमें मशीनों से उन कामों में प्रतिस्पर्धा करने वाले मनुष्य तैयार नहीं करने, जिनमें मशीनें हमसे बेहतर हैं। हमें ऐसे मनुष्य तैयार करने हैं जो ज्ञान, जिज्ञासा, विवेक, सृजनात्मकता और मानवीय मूल्यों को एआई की असाधारण क्षमताओं के साथ जोड़ सकें।

एआई का सबसे बड़ा अवसर शायद यह नहीं है कि मशीनें हमारे लिए सोच सकती हैं। बल्कि यह है कि वे हमें और बड़ा सोचने में मदद कर सकती हैं। वे अधिक संभावनाएं तलाशने, तेजी से सीखने, अपनी मान्यताओं को चुनौती देने और उन विचारों की कल्पना करने में हमारी सहायता कर सकती हैं, जो शायद अकेले हमारे लिए संभव न होते।

और यहीं हम सीखने की सबसे पुरानी और सबसे शक्तिशाली प्रेरणा के पास लौटते हैं – जिज्ञासा!

जिज्ञासा केवल कुछ जानने की इच्छा नहीं है। यह उस अज्ञात को खोजने की मानवीय प्रवृत्ति है जो हमारी वर्तमान समझ से आगे है। इसी ने मनुष्य को गुफा से प्रयोगशाला तक, पहिए से अंतरिक्ष यान तक और मुद्रित शब्द से कृत्रिम बुद्धिमत्ता तक पहुंचाया है। मानव प्रगति की हर बड़ी छलांग के पीछे किसी ने पूछा था: "क्यों?", "अगर ऐसा हो तो?" या, "क्या हम ऐसा कर सकते हैं?"

जैसे-जैसे उत्तर पाना आसान होता जाएगा, हमें सवाल पूछने की अपनी इच्छा को कमजोर नहीं होने देना चाहिए। इसके विपरीत, जिज्ञासा को एक मूल मानवीय मूल्य के रूप में और अधिक महत्त्व देना चाहिए क्योंकि यही हमें सीखते रहने, प्रश्न करते रहने, बदलते रहने और विकसित होते रहने की प्रेरणा देती है।

क्योंकि एआई शायद मानव इतिहास में पहले से कहीं अधिक उत्तर उपलब्ध करा दे। लेकिन हमारा भविष्य इस बात पर निर्भर करेगा कि हम अगला सवाल पूछने के लिए कितने जिज्ञासु बने रहते हैं।

क्योंकि जिज्ञासा केवल सीखने की शुरुआत नहीं है। यह मानव प्रगति की सबसे शक्तिशाली प्रेरणाओं में से एक है।

एकः शब्दः सम्यग्ज्ञातः सुप्रयुक्तः... कामधुग्भवति। (पतंजलि, महाभाष्य, पस्पशाह्निक) एक शब्द भी ठीक से जाना और सही प्रयोग किया जाए, तो वह कामधेनु बन जाता है।

शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य : सोचने की क्षमता का विकास

देवर्षि मिश्र (2005 बैच)



गणित शिक्षक एवं शिक्षाविद्, 'How to Think' आधारित शिक्षण के समर्थक

किसी भी व्यक्ति के जीवन में कुछ स्थान ऐसे होते हैं जिन्हें समय कभी पीछे नहीं छोड़ पाता। मेरे लिए पंडित दीन दयाल उपाध्याय सनातन धर्म इंटर कॉलेज ऐसा ही एक संस्थान है। वर्षों बाद भी जब विद्यालय का नाम सुनता हूं, तो स्मृतियों का एक संसार आंखों के सामने जीवंत हो उठता है। यहीं से प्राप्त शिक्षा, संस्कार और मार्गदर्शन ने मेरे व्यक्तित्व की आधारशिला रखी।

सन् 2005 में जब मैंने इस विद्यालय से इंटरमीडिएट की शिक्षा पूर्ण की थी, तब शिक्षा का अर्थ मेरे लिए अच्छे अंक प्राप्त करना और जीवन में आगे बढ़ना था। आज, लगभग दो दशकों बाद, एक शिक्षक के रूप में देशभर के लाखों विद्यार्थियों के साथ जुड़ने का अवसर मिला है। इस अनुभव ने मुझे शिक्षा को केवल एक विद्यार्थी की दृष्टि से नहीं, बल्कि एक शिक्षक और समाज के उत्तरदायी नागरिक की दृष्टि से भी देखने की समझ दी है।

पिछले वर्षों में शिक्षा जगत में अभूतपूर्व परिवर्तन हुए हैं। तकनीक ने ज्ञान को पहले से कहीं अधिक सुलभ बना दिया है। आज एक विद्यार्थी अपने मोबाइल फोन के माध्यम से विश्वस्तरीय संसाधनों तक पहुंच सकता है। जानकारी प्राप्त करना पहले की अपेक्षा कहीं अधिक सरल हो गया है। यह परिवर्तन निश्चित रूप से स्वागत योग्य है।

किन्तु इसी परिवर्तन ने एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न भी हमारे सामने रखा है—क्या जानकारी प्राप्त कर लेना ही शिक्षित होना है?

मेरा मानना है कि शिक्षा का उद्देश्य केवल तथ्यों को याद कर लेना, परीक्षाओं में अच्छे अंक प्राप्त करना या एक अच्छी नौकरी हासिल करना नहीं है। वास्तविक शिक्षा वह है जो व्यक्ति को सोचने, समझने, प्रश्न पूछने और सही निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करे। यदि कोई विद्यार्थी अनेक उत्तर याद रखता है, लेकिन जीवन की परिस्थितियों में विवेकपूर्ण निर्णय नहीं ले पाता, तो हमें शिक्षा के उद्देश्य पर पुनर्विचार करना होगा।

एक गणित शिक्षक होने के नाते मैं प्रतिदिन अनुभव करता हूं कि किसी प्रश्न का उत्तर बता देना अपेक्षाकृत सरल है, लेकिन किसी विद्यार्थी को उस उत्तर तक स्वयं पहुंचने की सोच विकसित करना कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है। शिक्षा का वास्तविक लक्ष्य उत्तर देना नहीं, बल्कि सोचने की क्षमता का विकास करना होना चाहिए। क्योंकि जीवन में आने वाली अधिकांश चुनौतियां पाठ्यपुस्तकों में लिखी हुई नहीं होतीं।

आज का विद्यार्थी अत्यधिक प्रतिस्पर्धी वातावरण में आगे बढ़ रहा है। अंक, रैंक, प्रवेश परीक्षाएं और करियर की चिंताएं उसके जीवन का महत्त्वपूर्ण हिस्सा बन चुकी हैं। ऐसे समय में यह आवश्यक है कि हम बच्चों को केवल सफलता का मार्ग न दिखाएं, बल्कि उन्हें असफलताओं से सीखने, धैर्य रखने और निरंतर प्रयास करने की प्रेरणा भी दें। शिक्षा का उद्देश्य केवल सफल व्यक्ति बनाना नहीं, बल्कि सशक्त, संवेदनशील और जिम्मेदार नागरिक बनाना भी है।

आने वाले वर्षों में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) और तकनीक हमारे जीवन के अनेक कार्यों को बदल देंगी। ऐसे समय में केवल जानकारी का महत्त्व कम होगा, जबकि रचनात्मकता, तार्किक सोच, समस्या-समाधान की क्षमता, संवाद कौशल और मानवीय संवेदनाएं अधिक महत्त्वपूर्ण बन जाएंगी। इसलिए हमारी शिक्षा व्यवस्था को भी इन गुणों के विकास पर विशेष ध्यान देना होगा।

जब मैं अपने विद्यालय के दिनों को याद करता हूं, तो मुझे केवल कक्षाएं और परीक्षाएं ही याद नहीं आतीं। मुझे वे शिक्षक याद आते हैं जिन्होंने आत्मविश्वास दिया, वे मित्र याद आते हैं जिन्होंने साथ चलना सिखाया, और वे मूल्य याद आते हैं जिन्होंने जीवन की दिशा निर्धारित की। यही किसी भी विद्यालय की सबसे बड़ी उपलब्धि होती है। किसी शिक्षण संस्थान की सफलता केवल उसके परिणामों या भवनों से नहीं, बल्कि उन विद्यार्थियों से मापी जाती है जो आगे चलकर समाज में सकारात्मक योगदान देते हैं।

आज जब मैं लाखों विद्यार्थियों से जुड़ता हूं, तो बार-बार महसूस करता हूं कि शिक्षा का भविष्य केवल नई तकनीकों या नए पाठ्यक्रमों से नहीं बनेगा। उसका भविष्य उन शिक्षकों से बनेगा जो बच्चों को प्रश्न पूछने का साहस देंगे, और उन विद्यार्थियों से बनेगा जो सीखने की जिज्ञासा कभी नहीं छोड़ेंगे।

पंडित दीन दयाल उपाध्याय सनातन धर्म इंटर कॉलेज ने मुझे केवल पाठ्यपुस्तकों का ज्ञान नहीं दिया, बल्कि सीखने की वह दृष्टि दी जिसने मेरे जीवन की दिशा निर्धारित की। इसके लिए मैं अपने सभी गुरुजनों, विद्यालय परिवार और सहपाठियों के प्रति हृदय से कृतज्ञ हूं।

अंत में मैं केवल इतना कहना चाहूंगा—

"शिक्षा का उद्देश्य यह नहीं कि विद्यार्थी क्या सोचें; शिक्षा का उद्देश्य यह है कि वे कैसे सोचें।"

इसी सोच में एक बेहतर विद्यार्थी, एक बेहतर समाज और एक बेहतर भारत का भविष्य निहित है।

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः। (ऋग्वेद 1.89.1) हमारे पास हर दिशा से कल्याणकारी विचार आएँ।

❖❖❖

(अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः सखायो... असमा बभूवुः। (ऋग्वेद 10.71.7) सबकी आँखें और कान एक जैसे होते हैं, फिर भी ज्ञान में सब बराबर नहीं होते।)

''एकात्म मानववाद'' : भारतीयता का जीवन-दर्शन

प्रो.(डॉ.) मनोज अवस्थी (1984 बैच)



(अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग, वी.एस.एस.डी. कॉलेज, कानपुर) *"भारतीय चिंतन परम्परा में पंडित दीन दयाल उपाध्याय जी के एकात्म मानववाद का विशेष स्थान है। प्रस्तुत लेख में 1984 बैच के प्रो. मनोज अवस्थी जी ने एकात्म मानववाद के मूल तत्त्वों को सरल, सुव्यवस्थित एवं व्यावहारिक उदाहरणों के माध्यम से स्पष्ट किया है। साथ ही, श्रीमद्भगवद्गीता के संदर्भों द्वारा इस दर्शन की भारतीय दार्शनिक परम्परा से उसकी गहन सम्बद्धता को भी रेखांकित किया है। आशा है कि यह लेख पाठकों को केवल इस विचारधारा से परिचित ही नहीं कराएगा, बल्कि समकालीन भारत में इसकी उपयोगिता और प्रासङ्गिकता पर गंभीर चिंतन के लिए भी प्रेरित करेगा।"*

आज सम्पूर्ण विश्व जब विकास, उपभोग और तकनीकी प्रगति की दिशा में तीव्र गति से दौड़ रहा है तब एक मूल प्रश्न हमारे सामने खड़ा होता है कि, क्या केवल आर्थिक समृद्धि ही मानव जीवन की पूर्णता का आधार है? या फिर मनुष्य के मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक उत्थान का भी उसमें समान महत्त्व है? इन प्रश्नों का भारतीय दृष्टि से उत्तर पंडित दीन दयाल उपाध्याय जी के एकात्म मानववाद दर्शन में मिलता है। यह दर्शन मनुष्य, समाज, राष्ट्र और प्रकृति को परस्पर पूरक मानते हुए समग्र विकास का मार्ग प्रस्तुत करता है।

पंडित दीन दयाल उपाध्याय जी का जन्म वर्ष 1916 में हुआ। सनातन धर्म महामंडल की शिक्षण संस्थाओं में प्रमुख वी.एस. एस.डी. कॉलेज का यह सौभाग्य रहा कि वे इसके छात्र रहे। उन्होंने भारतीय चिंतन पर आधारित एकात्म मानववाद को विश्व के समक्ष एक समग्र जीवन-दर्शन के रूप में प्रस्तुत किया। आज यह दर्शन केवल भारत ही नहीं, बल्कि विश्व स्तर पर भी गंभीर अध्ययन का विषय बन चुका है।

एकात्म मानववाद की अवधारणा का प्रभाव केंद्र एवं विभिन्न राज्य सरकारों की अनेक जनकल्याणकारी योजनाओं में भी देखा जा सकता है, जिनका उद्देश्य समाज के अंतिम व्यक्ति तक विकास का लाभ पहुंचाना है। यह दर्शन अंत्योदय अर्थात समाज के अंतिम व्यक्ति के उत्थान की भावना को केंद्र में रखता है।

पंडित दीन दयाल उपाध्याय जी का एकात्म मानववाद भारतीय चिंतन पर आधारित एक दार्शनिक-राजनीतिक सिद्धांत है, जिसमें व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और प्रकृति को परस्पर पूरक एवं अखंड इकाई के रूप में देखा गया है। उनके अनुसार मानव केवल शरीर नहीं, बल्कि शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा का समन्वित स्वरूप है। इसी प्रकार राष्ट्र भी केवल भौगोलिक सीमा नहीं, बल्कि सांस्कृतिक चेतना से युक्त एक जीवंत सत्ता है।

एकात्म मानववाद के प्रमुख तत्त्व

1. समग्र विचार
2. धर्म का सिद्धांत
3. चारों पुरुषार्थों का समन्वय
4. लोकसंग्रह एवं सामाजिक समन्वय
5. स्वदेशी एवं सांस्कृतिक आधार

1. समग्र विचार

एकात्म मानववाद का मूल आधार समग्रता है। यह मानव के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं आध्यात्मिक विकास के संतुलन पर बल देता है। इसी प्रकार समाज को भी मात्र व्यक्तियों का समूह नहीं, बल्कि सांस्कृतिक चेतना से युक्त एक जीवंत इकाई माना गया है।

यह दृष्टिकोण श्रीमद्भगवद्गीता (अध्याय 6, श्लोक 29) में व्यक्त भाव से पुष्ट होता है-

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः॥

अर्थात योगयुक्त व्यक्ति समस्त प्राणियों में अपने आत्मस्वरूप का तथा अपने भीतर समस्त प्राणियों का दर्शन करता है। यही समदृष्टि और सार्वभौमिक एकात्मता का आधार है।

सिद्धांत: मानव शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा का समन्वित स्वरूप है।

व्यावहारिक उदाहरण

शिक्षा केवल परीक्षा-परिणाम तक सीमित न रहकर चरित्र निर्माण, नैतिक शिक्षा, योग, खेल तथा सांस्कृतिक गतिविधियों को भी समाहित करे।स्वास्थ्य केवल शारीरिक उपचार तक सीमित नहीं है; मानसिक शांति, पारिवारिक सहयोग और सकारात्मक वातावरण भी उतने ही आवश्यक हैं।कार्यस्थल पर कर्मचारी को केवल उत्पादन का साधन न मानकर उसकी मानवीय आवश्यकताओं और पारिवारिक दायित्वों का भी सम्मान किया जाए।

2. धर्म का सिद्धांत

एकात्म मानववाद में 'धर्म' का अर्थ किसी संप्रदाय या पंथ से नहीं, बल्कि उस नैतिक व्यवस्था से है जो व्यक्ति और समाज दोनों को संतुलित रखती है। धर्म व्यक्ति के कर्तव्यों का बोध कराता है तथा समाज में मर्यादा और समरसता स्थापित करता है।

यह विचार श्रीमद्भगवद्गीता (अध्याय 3, श्लोक 35) से पुष्ट होता है-

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः॥

अर्थात अपने कर्तव्य का पालन, चाहे उसमें कुछ कमी ही क्यों न हो, दूसरे के कर्तव्य का उत्कृष्ट पालन करने से भी श्रेष्ठ है।

सिद्धांत: धर्म का अर्थ कर्तव्य और नैतिक व्यवस्था है, न कि केवल धार्मिक अनुष्ठान।

व्यावहारिक उदाहरणन्यायाधीश बिना किसी प्रलोभन के निष्पक्ष निर्णय दे।व्यापारी उचित मूल्य और सही गुणवत्ता का सामान उपलब्ध कराए।विद्यार्थी ईमानदारी और निष्ठा से अध्ययन करे।

3. चारों पुरुषार्थों का समन्वय

भारतीय जीवन-दर्शन में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को चार पुरुषार्थ माना गया है। पंडित दीन दयाल उपाध्याय जी के अनुसार इन चारों का संतुलित समन्वय ही स्वस्थ व्यक्ति और सशक्त समाज का आधार है।

श्रीमद्भगवद्गीता (अध्याय 2, श्लोक 47) में कहा गया है-

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥

अर्थात मनुष्य का अधिकार केवल कर्म करने में है, उसके फल पर नहीं। इसलिए कर्तव्य का पालन निष्काम भाव से करना चाहिए।

चारों पुरुषार्थों का सार-धर्म – जीवन की नैतिक दिशा। अर्थ – आजीविका और आर्थिक समृद्धि। काम – इच्छाओं एवं भावनात्मक संतुलन की पूर्ति। मोक्ष – आत्मिक उन्नति और जीवन की परम सार्थकता।

एकात्म मानववाद का संदेश है कि केवल आर्थिक उन्नति ही पर्याप्त नहीं है; नैतिकता, सामाजिक उत्तरदायित्व और आध्यात्मिक विकास भी समान रूप से आवश्यक हैं।

व्यावहारिक उदाहरण

एक व्यवसायी धन अर्जित करने के साथ समाजसेवा और पारिवारिक दायित्वों का भी निर्वाह करे तथा आत्मिक साधना के लिए समय निकाले। सरकारी नीतियां केवल आर्थिक वृद्धि तक सीमित न रहकर पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक न्याय को भी समान महत्त्व दें। व्यक्तिगत जीवन में कार्य और परिवार के बीच संतुलन बनाए रखना आवश्यक है।

यदि केवल अर्थ पर बल दिया जाए और धर्म की उपेक्षा हो, तो भ्रष्टाचार, असमानता और सामाजिक असंतुलन की संभावना बढ़ जाती है।

4. लोकसंग्रह एवं सामाजिक समन्वय

एकात्म मानववाद में व्यक्ति का विकास समाज से पृथक नहीं माना गया है। इस दर्शन का मूल भाव है कि व्यक्ति की उन्नति तभी सार्थक है, जब वह समाज और राष्ट्र के कल्याण से जुड़ी हो। 'लोकसंग्रह' का अर्थ है- समाज की एकता, समरसता और कल्याण के लिए निरंतर कर्म करना।

यह विचार श्रीमद्भगवद्गीता (अध्याय 3, श्लोक 20) में व्यक्त हुआ है-

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादय:।
लोकसंग्रहमेवापि संपश्यन्कर्तुमर्हसि॥

अर्थात राजा जनक आदि महापुरुषों ने कर्म के द्वारा ही सिद्धि प्राप्त की। इसलिए लोककल्याण को दृष्टि में रखते हुए प्रत्येक व्यक्ति को अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए।

पंडित दीन दयाल उपाध्याय जी के अनुसार राष्ट्र एक सांस्कृतिक एवं जीवंत इकाई है, जिसका प्रत्येक नागरिक अभिन्न अंग है। इसलिए व्यक्तिगत उन्नति और राष्ट्रीय विकास परस्पर पूरक हैं।

सिद्धांत: व्यक्ति का प्रत्येक कर्म समाज और राष्ट्र के कल्याण से जुड़ा होना चाहिए।

व्यावहारिक उदाहरण

चिकित्सक केवल आजीविका के लिए नहीं, बल्कि आर्थिक रूप से कमजोर लोगों की सेवा के लिए भी कार्य करे।

जनप्रतिनिधि व्यक्तिगत हित के स्थान पर जनकल्याण को प्राथमिकता दे।

प्रत्येक नागरिक ईमानदारी से करों का भुगतान तथा सामाजिक उत्तरदायित्वों का निर्वहन कर राष्ट्र-निर्माण में योगदान दे।

5. स्वदेशी एवं सांस्कृतिक आधार

पंडित दीन दयाल उपाध्याय जी ने विकास के ऐसे मॉडल का समर्थन किया जो भारतीय संस्कृति, परंपराओं और स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप हो। उनका मत था कि सांस्कृतिक बोध के बिना विकास केवल भौतिक प्रगति बनकर रह जाता है।

एकात्म मानववाद में स्वदेशी केवल आर्थिक नीति नहीं, बल्कि सांस्कृतिक स्वाभिमान का प्रतीक है।

यह भाव श्रीमद्भगवद्गीता (अध्याय 3, श्लोक 33) से भी पुष्ट होता है-

सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानपि।
प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति॥

अर्थात प्रत्येक व्यक्ति अपनी प्रकृति के अनुसार ही आचरण करता है; इसलिए विकास का आधार भी समाज की प्रकृति, संस्कृति और परिस्थितियों के अनुरूप होना चाहिए।

सिद्धांत: विकास अपनी संस्कृति, परंपरा और स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप होना चाहिए।

व्यावहारिक उदाहरण

स्थानीय उद्योगों और कुटीर उद्यमों को प्रोत्साहन देकर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सशक्त बनाया जाए।

योग, आयुर्वेद, भारतीय ज्ञान-परंपरा तथा लोककलाओं का संरक्षण और संवर्धन किया जाए।

कृषि नीतियों में स्थानीय जलवायु, प्राकृतिक संसाधनों तथा पारंपरिक ज्ञान का समुचित उपयोग किया जाए।

यदि विकास केवल विदेशी मॉडलों का अनुकरण बन जाए और स्थानीय संस्कृति एवं आवश्यकताओं की उपेक्षा करे, तो सामाजिक असंतुलन उत्पन्न होने की संभावना बढ़ जाती है।

निष्कर्षत:, पंडित दीन दयाल उपाध्याय जी का 'एकात्म मानववाद' भारतीय जीवन-दर्शन की आधुनिक एवं व्यावहारिक व्याख्या है। यह व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और प्रकृति के बीच संतुलित एवं समन्वित संबंध स्थापित करते हुए समग्र विकास का मार्ग प्रशस्त करता है। शिक्षा, अर्थव्यवस्था, राजनीति तथा सामाजिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में यह दर्शन नैतिकता, समरसता और लोककल्याण का प्रेरक सिद्ध होता है।

"हमारी भावना और सिद्धांत है कि वह मैले-कुचैले और अनपढ़ लोग हमारे नारायण हैं। हमें इनकी पूजा करनी है। यह हमारा सामाजिक एवं मानव धर्म है। जिस दिन हम इनके बच्चों और स्त्रियों को शिक्षा और जीवन-दर्शन का ज्ञान देंगे उस दिन हमारा भ्रातृभाव व्यक्त होगा।"

—पं. दीन दयाल उपाध्याय

शुभकामना संदेश



अम्बरीष दीक्षित

1996 बैच

CEO, Best Value Chem Pvt. Ltd., Vadodara

पं. दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय, कानपुर से प्राप्त शिक्षा और संस्कारों की स्मृतियाँ आज भी हम पूर्व छात्रों के जीवन में अपनी एक विशिष्ट उपस्थिति रखती हैं। ईश्वर ने मुझे देश और विदेश के अनेक कार्यक्षेत्रों, संस्कृतियों और समाजों को निकट से देखने का अवसर दिया है। इस व्यापक अनुभव ने एक बात को और अधिक दृढ़ता से समझाया है कि समय बदलता है, तकनीक बदलती है, कार्य-पद्धतियाँ बदलती हैं परन्तु मनुष्य के निर्माण में शिक्षा, संस्कार और मूल्य कभी अप्रासंगिक नहीं होते। इसी दृष्टि से इस वर्ष 'युगभारती' के अधिवेशन का 'शिक्षा' को केंद्र में रखना अत्यंत प्रासंगिक और महत्वपूर्ण है। आज आवश्यकता ऐसी शिक्षा की है जो हमें विश्व के साथ कदम मिलाकर चलने का सामर्थ्य दे और साथ ही अपनी जड़ों से जोड़े रखे। हमारे भीतर संवेदनशीलता और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना को जीवित रखे।

मेरे लिए 'युगप्रभा' केवल एक पत्रिका नहीं, बल्कि विद्यालय से मिले संस्कारों और जीवन के अनुभवों के बीच एक जीवंत सेतु है। युगप्रभा का यह अंक और युगभारती का यह अधिवेशन विचारों को विस्तार दे, स्मृतियों को सहेजे और आने वाली पीढ़ियों के लिए शिक्षा एवं संस्कार के नए द्वार खोले, हार्दिक शुभकामनाएं।


ब्रिज
कटरर्स
प्लेट से दिल तक
+91 9839120551
brijcaterers.com
104-A/99, Rambagh,
Kanpur - 208012
- Ajay Shankar Dixit
(Batch 1983)


VISIONPLUS
SECURITY CONTROL LIMITED
INTEGRATED BUSINESS SERVICES
C-60, First Floor, Rajan Babu Rd,
Adarsh Nagar, Delhi, 110033
AI
INNOVATION
PEOPLE
TECHNOLOGY
A SMARTER
TOMORROW
IT SERVICES
ITeS
SOLUTIONS
ARTIFICIAL
INTELLIGENCE (AI)
DIGITAL
TRANSFORMATION
INTEGRATED
BUSINESS SERVICES
TECHNOLOGY TODAY | A BETTER TOMORROW

शिक्षा और संस्कार

डॉ. पुरुषोत्तम नारायण वाजपेयी (1982 बैच)



संस्थापक, VVIP स्कूल, कानपुर

मनुष्य के व्यक्तित्व का वास्तविक निर्माण केवल पुस्तकीय ज्ञान से नहीं, बल्कि शिक्षा और संस्कार के समन्वय से होता है। शिक्षा बुद्धि को विकसित करती है तो संस्कार हृदय को परिष्कृत करते हैं। एक मनुष्य को योग्य बनाती है, दूसरी उसे लोकहितकारी। यही कारण है कि भारतीय शिक्षा-दर्शन में ज्ञान के साथ चरित्र-निर्माण को सदैव सर्वोच्च स्थान दिया गया है।

आज जब शिक्षा का उद्देश्य प्रायः अंक, प्रमाणपत्र और रोजगार तक सीमित होता जा रहा है, तब यह स्मरण रखना आवश्यक है कि संस्कारविहीन शिक्षा समाज के लिए उतनी ही घातक हो सकती है जितनी ज्ञानविहीन सद्भावना निष्प्रभावी। इसलिए शिक्षा और संस्कार का संतुलन ही जीवन की वास्तविक सफलता का आधार है।

इस संतुलन का सबसे सशक्त माध्यम गुरु हैं। भारतीय संस्कृति में गुरु केवल विषय-विशेषज्ञ नहीं, बल्कि जीवन-निर्माता माने गए हैं। वे अपने आचरण और आदर्शों से शिष्य के भीतर उन मानवीय मूल्यों का संचार करते हैं, जो उसे समाज का उत्तरदायी नागरिक बनाते हैं।

ऐसे गुरु विरले होते हैं जिनका प्रभाव विद्यालय की चारदीवारी तक सीमित नहीं रहता, बल्कि उनके शिष्यों के जीवन में आजीवन दिखाई देता है। पं. दीन दयाल विद्यालय, कानपुर के पूर्व प्रधानाचार्य आचार्य श्री ओम् शङ्कर त्रिपाठी जी ऐसे ही प्रेरणास्रोत शिक्षाविद् हैं। उन्होंने शिक्षा को केवल ज्ञानार्जन का माध्यम नहीं माना, बल्कि संस्कार-संपन्न समाज के निर्माण का आधार बनाया।

सन 1982 में मैंने पं. दीन दयाल विद्यालय से इंटरमीडिएट की परीक्षा उत्तीर्ण की। अंकों की दृष्टि से मैं एक सामान्य विद्यार्थी था, किंतु आचार्य जी का स्नेह और विश्वास मुझे सदैव प्राप्त रहा। विद्यालय छोड़े चार दशक से अधिक समय बीत जाने पर भी उनके द्वारा दिए गए संस्कार और आज भी उनसे मिलने वाला स्नेह मेरे जीवन की सबसे बड़ी पूंजी हैं। उन्हीं आदर्शों ने मुझे समाज के प्रति अपने दायित्व का बोध कराया और उसी प्रेरणा से वाराणसी विश्वनाथ इंटरनेशनल पब्लिक स्कूल (VVIP) की स्थापना का संकल्प लिया। विद्यालय का उद्घाटन आचार्य जी के शुभ कर-कमलों के द्वारा हुआ। हमारा प्रयास है कि विद्यार्थियों को आधुनिक शिक्षा के साथ भारतीय संस्कृति, नैतिक मूल्यों और मानवीय संवेदनाओं से भी जोड़ा जाए।

आज आवश्यकता इस बात की है कि परिवार, विद्यालय और समाज मिलकर ऐसी शिक्षा व्यवस्था विकसित करें जिसमें ज्ञान के साथ विनम्रता, अनुशासन, सेवा, करुणा और राष्ट्रभाव का भी समावेश हो। तभी शिक्षा अपने वास्तविक उद्देश्य को प्राप्त कर सकेगी।

निस्संदेह, शिक्षा और संस्कार का समन्वय ही एक सशक्त राष्ट्र की आधारशिला है। गुरु के सान्निध्य में प्राप्त ज्ञान जब संस्कारों की ऊष्मा से आलोकित होता है, तभी व्यक्ति स्वयं भी प्रकाशित होता है और समाज को भी प्रकाशमान करता है। यही भारतीय गुरु-शिष्य परंपरा का शाश्वत संदेश है।

राष्ट्र के समग्र उत्थान एवं समृद्धि के लिए वित्तीय साक्षरता की महती आवश्यकता

(पंडित दीन दयाल उपाध्याय जी के आर्थिक चिंतन के आलोक में)

प्रवीण कुमार द्विवेदी (1986 बैच)



संस्थापक एवं अध्यक्ष, AWOKE India Foundation

"सशक्त नागरिक ही सशक्त राष्ट्र का निर्माण करते हैं।" यह कथन केवल राजनीतिक या सामाजिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि आर्थिक दृष्टि से भी पूर्णत: सत्य है। आज के युग में जब बैंकिंग, डिजिटल भुगतान, निवेश, बीमा, पेंशन, कराधान तथा साइबर सुरक्षा जैसे विषय सामान्य नागरिक के दैनिक जीवन का अभिन्न अंग बन चुके हैं, तब वित्तीय साक्षरता राष्ट्र निर्माण की एक अनिवार्य आवश्यकता बन गई है।

भारत विश्व की सबसे तेज़ी से विकसित होती अर्थव्यवस्थाओं में से एक है। परंतु आर्थिक विकास का वास्तविक लाभ तभी समाज के अंतिम व्यक्ति तक पहुंच सकता है, जब प्रत्येक नागरिक वित्तीय रूप से जागरूक, सक्षम और आत्मनिर्भर हो। वित्तीय साक्षरता केवल धन कमाने या निवेश करने का ज्ञान नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति को अपने संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग, भविष्य की योजना, जोखिम प्रबंधन तथा आर्थिक निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करती है।

पंडित दीन दयाल उपाध्याय जी का आर्थिक चिंतन

पंडित दीन दयाल उपाध्याय जी ने अपने "एकात्म मानववाद" के दर्शन में आर्थिक विकास को केवल उत्पादन और उपभोग तक सीमित नहीं माना। उनके अनुसार विकास का केंद्र "मानव" होना चाहिए, न कि केवल पूंजी या बाज़ार। उन्होंने ऐसी अर्थव्यवस्था की कल्पना की थी जिसमें समाज के अंतिम पंक्ति में खड़े व्यक्ति का कल्याण सुनिश्चित हो और आर्थिक गतिविधियों का उद्देश्य मानव गरिमा एवं सामाजिक समरसता की स्थापना हो।

उनका प्रसिद्ध सिद्धांत "अंत्योदय" इस बात पर बल देता है कि विकास का लाभ समाज के सबसे कमजोर और वंचित वर्ग तक पहुंचना चाहिए। आज वित्तीय समावेशन और वित्तीय साक्षरता की अवधारणा इसी विचार का आधुनिक स्वरूप प्रतीत होती है। जन-धन योजना, डिजिटल भुगतान व्यवस्था, सामाजिक सुरक्षा योजनाएं, पेंशन योजनाएं तथा निवेशक जागरूकता कार्यक्रम वास्तव में अंत्योदय की दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम हैं।

दीन दयाल जी मानते थे कि आर्थिक स्वतंत्रता के बिना व्यक्ति का सर्वांगीण विकास संभव नहीं है। वित्तीय साक्षरता नागरिकों को आर्थिक रूप से सक्षम बनाकर आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर करती है, जिससे वे न केवल स्वयं का बल्कि राष्ट्र का भी विकास सुनिश्चित कर सकें।

वित्तीय साक्षरता क्यों आवश्यक है?

आज समाज का प्रत्येक वर्ग - विद्यार्थी, युवा, गृहिणी, किसान, श्रमिक, कर्मचारी, उद्यमी तथा वरिष्ठ नागरिक - वित्तीय निर्णयों से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा हुआ है। यदि किसी व्यक्ति को बचत, निवेश, ऋण, बीमा, पेंशन तथा वित्तीय धोखाधड़ी से बचाव की जानकारी नहीं है, तो वह आर्थिक शोषण और असुरक्षा का शिकार हो सकता है।

वित्तीय साक्षरता नागरिकों को -

- नियमित बचत की आदत विकसित करने,
- उचित निवेश विकल्प चुनने,
- अनावश्यक ऋण से बचने,
- बीमा एवं सामाजिक सुरक्षा का महत्त्व समझने,
- सेवानिवृत्ति की योजना बनाने,
- साइबर एवं निवेश संबंधी धोखाधड़ी से सुरक्षित रहने,
- तथा आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनने में सहायता प्रदान करती है।

विकसित भारत के लिए वित्तीय रूप से जागरूक नागरिक

प्रधानमंत्री द्वारा परिकल्पित "विकसित भारत 2047" का लक्ष्य तभी साकार हो सकता है जब देश का प्रत्येक नागरिक आर्थिक रूप से सशक्त हो। वित्तीय रूप से जागरूक नागरिक न केवल अपने परिवार की समृद्धि सुनिश्चित करता है बल्कि बचत, निवेश और उद्यमिता के माध्यम से राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को भी मजबूती प्रदान करता है।

आज डिजिटल क्रांति ने वित्तीय सेवाओं को घर-घर तक पहुंचाया है। परंतु इसके साथ साइबर अपराध, ऑनलाइन धोखाधड़ी तथा भ्रामक निवेश योजनाओं का खतरा भी बढ़ा है। अत: वित्तीय साक्षरता अब केवल एक विकल्प नहीं, बल्कि जीवन कौशल (Life Skill) बन चुकी है।

युवाओं की भूमिका

विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में वित्तीय शिक्षा को बढ़ावा देना समय की आवश्यकता है। युवा यदि प्रारंभिक अवस्था में ही बजट निर्माण, बचत, निवेश, कर नियोजन तथा उद्यमिता के सिद्धांतों को समझ लें, तो वे भविष्य में अधिक उत्तरदायी एवं सफल नागरिक बन सकते हैं।

युगभारती जैसे पूर्व छात्र संगठनों की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका है कि वे अपने सदस्यों, विद्यार्थियों तथा समाज के विभिन्न वर्गों के बीच वित्तीय जागरूकता के अभियान चलाएं। इससे सामाजिक उत्तरदायित्व और राष्ट्र निर्माण दोनों उद्देश्यों की पूर्ति होगी।

AWOKE India Foundation का योगदान

AWOKE India Foundation विगत कई वर्षों से वित्तीय साक्षरता, निवेशक जागरूकता, साइबर सुरक्षा, वित्तीय समावेशन तथा जिम्मेदार निवेश के क्षेत्र में देशभर में विविध कार्यक्रमों का आयोजन कर रही है। सेबी, विभिन्न शैक्षणिक संस्थानों, उद्योग संगठनों तथा सामाजिक संस्थाओं के सहयोग से आयोजित कार्यक्रमों के माध्यम से हजारों नागरिकों को वित्तीय रूप से सशक्त बनाने का प्रयास किया जा रहा है।

हमारा विश्वास है कि जब समाज का प्रत्येक नागरिक वित्तीय रूप से जागरूक होगा, तभी आत्मनिर्भर परिवार, सशक्त समाज और समृद्ध राष्ट्र का निर्माण संभव होगा।

निष्कर्ष

पंडित दीन दयाल उपाध्याय जी का एकात्म मानववाद हमें यह संदेश देता है कि विकास का वास्तविक अर्थ समाज के प्रत्येक व्यक्ति का उत्थान है। वित्तीय साक्षरता इसी दिशा में एक प्रभावी साधन है, जो व्यक्ति को आर्थिक आत्मनिर्भरता, सुरक्षा और सम्मान प्रदान करती है।

आज आवश्यकता है कि वित्तीय साक्षरता को जन-आंदोलन का स्वरूप दिया जाए। विद्यालयों, महाविद्यालयों, सामाजिक संस्थाओं, उद्योग जगत और शासन-प्रशासन को मिलकर इस दिशा में कार्य करना होगा। जब प्रत्येक नागरिक वित्तीय रूप से सशक्त होगा, तभी दीन दयाल जी के अंत्योदय और एकात्म मानववाद का स्वप्न साकार होगा तथा भारत एक समृद्ध, आत्मनिर्भर और विकसित राष्ट्र के रूप में विश्व के समक्ष नई मिसाल प्रस्तुत करेगा।

"वित्तीय रूप से सशक्त नागरिक ही समृद्ध राष्ट्र की सबसे बड़ी पूंजी हैं।"

आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः। (अथर्ववेद 11.5.3) आचार्य शिष्य को वैसे ही अपने भीतर धारण करता है, जैसे माँ गर्भ को।

❖❖❖

(ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं वि रक्षति। (अथर्ववेद 11.5.17) संयम और तप से ही राजा राष्ट्र की रक्षा करता है।)

परीक्षा जीतने का विज्ञान

डॉ. उमेश्वर पांडेय (1994 बैच)



विभागाध्यक्ष (HOD), एल.पी.एस. इंस्टिट्यूट ऑफ कार्डियोलॉजी, कानपुर। अध्यक्ष, कार्डियोलॉजी सोसाइटी ऑफ इंडिया-उत्तर प्रदेश चैप्टर (UPCSI)

"Topper और एक औसत student में फ़र्क़ अक्सर talent का नहीं होता, फ़र्क method का होता है। मेहनत तो दोनों करते हैं जीतता वह है जिसकी मेहनत की दिशा सही है।"

जब मैंने medical entrance और उसके बाद की postgraduate व super-speciality परीक्षाएं दीं, तब मैंने एक बात बहुत क़रीब से समझी- ये परीक्षाएं केवल ज्ञान की नहीं, strategy, stamina और nerve की परीक्षाएं हैं। NEET हो, JEE हो, CA हो, CLAT हो या UPSC - हर साल लाखों प्रतिभाशाली बच्चे सिर्फ़ इसलिए पीछे रह जाते हैं क्योंकि उन्होंने मेहनत तो बहुत की, पर सही तरीके से नहीं। उनके पास क्षमता थी, पर रणनीति नहीं। यह लेख उन्हीं के लिए है और उन teachers व अभिभावकों के लिए भी, जो उनका मार्गदर्शन करते हैं।

भ्रम तोड़िए : 'ज़्यादा घंटे' बनाम 'सही method'

सबसे पहले एक myth तोड़ते हैं। ज़्यादातर बच्चे यह मानते हैं कि जो जितने घंटे पढ़ेगा, वही जीतेगा। यह आधा सच है, और आधा सच पूरे झूठ से ज़्यादा ख़तरनाक होता है। Cognitive science का स्पष्ट निष्कर्ष है - 'कैसे पढ़ा' यह 'कितने घंटे पढ़ा' से कहीं ज़्यादा निर्णायक है। बारह घंटे passive reading करने वाला बच्चा, छह घंटे active recall करने वाले बच्चे से प्राय: पीछे रह जाता है। मैंने अपने juniors में यह बार-बार देखा है - जो देर रात तक किताब घूरते रहते थे, वे प्राय: उनसे पीछे रहे जो कम पर smart पढ़ते थे।

दो सिद्ध हथियार : Active Recall और Spaced Repetition

Memory पर हुए दशकों के research ने दो techniques को सबसे शक्तिशाली पाया है।

1. Active Recall : किताब बार-बार पढ़ने के बजाय, किताब बंद करके खुद से सवाल पूछो और जवाब याद करने की कोशिश करो। यह 'struggle' ही दिमाग़ में रास्ता बनाती है। याद करने की कोशिश में जो हल्का सा तनाव होता है, वही memory को मज़बूत करता है।

2. Spaced Repetition : किसी topic को एक बार पढ़कर छोड़ देना बेकार है; उसे निश्चित अंतराल पर - एक दिन, एक हफ़्ते, एक महीने बाद - दोहराओ। भूलने से ठीक पहले की गई revision memory को सबसे गहरा बनाती है। यही कारण है कि हम doctors वर्षों बाद भी anatomy नहीं भूलते - हमने उसे बार-बार, अंतराल पर दोहराया।

The Topper's Protocol - चरण-दर-चरण कार्य-पद्धति

जैसे एक surgery से पहले हम पूरा plan बनाते हैं- कुछ भी अचानक नहीं छोड़ते - वैसे ही exam की तैयारी का भी एक disciplined protocol होना चाहिए। ये steps किसी motivational speech से नहीं, सिद्ध विज्ञान और निजी अनुभव से निकले हैं।

Step 1 - Syllabus और pattern को पहले decode करो: लड़ाई में उतरने से पहले नक़्शा देखो। पूरा syllabus और पिछले कई सालों के question papers को गहराई से समझो किस topic से कितने सवाल आते हैं, किसका weightage ज़्यादा है, कौन-सा हिस्सा बार-बार दोहराया जाता है। यह जाने बिना की गई मेहनत दिशाहीन है। समझदार अभ्यर्थी हर topic पर बराबर समय नहीं देता वह weightage के हिसाब से समय बांटता है।

Step 2 - Realistic time-table, hero-worship नहीं: '18 घंटे पढ़ाई' वाली कहानियों के चक्कर में मत पड़ो। हर किसी का stamina अलग है। दिन को subjects में बांटो और कठिनतम subject तब रखो जब आपका mind सबसे fresh हो - ज़्यादातर लोगों के लिए यह सुबह का समय होता है। रोज़ की छोटी, निरंतर प्रगति साल भर में पहाड़ बन जाती है। निरंतरता तीव्रता से बड़ी है।

Step 3 - रटो मत, समझो: हर तथ्य को 'क्यों' और 'कैसे' से जोड़ो। जिस दिन concept की जड़ पकड़ में आ जाती है, उस दिन कठिनतम सवाल भी आसान लगने लगते हैं- क्योंकि आप उन्हें पहली बार देखकर भी हल कर सकते हो। रटा हुआ exam hall के दबाव में सबसे पहले धोखा देता है; समझा हुआ कभी साथ नहीं छोड़ता।

Step 4 - Active recall को daily habit बनाओ: पढ़ने के बाद किताब बंद करके खुद से सवाल पूछो, copy पर answer लिखो, फिर मिलाओ। यह passive दोहराव से कई गुना असरदार है। flashcards बनाओ, खुद की एक 'question bank' तैयार करो। याद रखो - पढ़ना input है, recall output है; और परीक्षा हमेशा output मांगती है।

Step 5 - Mock tests दो, पर analysis ज़्यादा ज़रूरी है : हफ़्ते में कम-से-कम एक पूरा mock test दो, असली परीक्षा के समय और माहौल में। पर असली सोना test देने में नहीं, हर ग़लती का post-mortem करने में है। हर mistake एक मौन teacher है - उसे ध्यान से सुनो। पूछो : यह ग़लती concept की कमी से हुई, लापरवाही से, या समय के दबाव से? तीनों का इलाज अलग है।

Step 6 - Spaced revision का system बनाओ: जो पढ़ा है उसे भूलना natural है, गुनाह नहीं। एक revision schedule बनाओ - पढ़ने के एक दिन बाद, फिर एक हफ़्ते बाद, फिर एक महीने बाद (D+1, D+7, D+30) - ताकि knowledge short-term से long-term memory में shift हो जाए। बिना revision के नया पढ़ना, फूटे घड़े में पानी भरने जैसा है।

Step 7 - Body और mind को मत भूलो: एक doctor होने के नाते मैं ज़ोर देकर कहता हूं- नींद, संतुलित आहार और थोड़ा exercise luxury नहीं, तैयारी का अनिवार्य हिस्सा हैं। नींद के दौरान ही दिन भर का पढ़ा हुआ memory में consolidate होता है- नींद काटकर पढ़ना अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी मारना है। उनींदा दिमाग़ कितना भी पढ़े, retain नहीं करता।

एक case study जो हर साल दोहराई जाती है

सफल अभ्यर्थियों के अनुभव में एक common pattern दिखता है। एक medical aspirant ने सीमित पर भरोसेमंद किताबों पर focus किया, रोज़ खुद से सवाल बनाकर हल किए, और एक 'error diary' रखी जिसमें हर mock की ग़लती दर्ज होती- और परीक्षा से पहले उसने सिर्फ़ वही diary दोहराई। प्रशासनिक सेवा में चुने गए कई लोगों ने यही दोहराया - असफलता के बाद उन्होंने study material नहीं, study method बदला।

निष्कर्ष: संसाधनों का विस्तार नहीं, उनकी गहराई और दोहराव जीत की कुंजी है। दस किताबें एक-एक बार पढ़ने से, एक अच्छी किताब दस बार पढ़ना बेहतर है।

Technology का समझदारी से उपयोग

आज flashcard apps spaced repetition को automate कर देते हैं, online platforms आपकी हर ग़लती का detailed analysis दे देते हैं, और study groups दूरी की बाधा के बिना doubt-solving संभव बना देते हैं। एक छोटे शहर का बच्चा भी आज वही resources पा सकता है जो किसी महानगर के बच्चे के पास हैं।

पर सावधान यह technology दोधारी तलवार है। एक hand में यह सबसे बड़ा सहायक है, दूसरे hand में social media और अंतहीन content सबसे बड़ा distraction। एक notification आपकी एक घंटे की एकाग्रता तोड़ सकता है। अनुशासित उपयोग ही फ़र्क़ पैदा करता है।

जिन गड्ढों में अच्छे-अच्छे गिरते हैं

Distraction : Phone और social media एकाग्रता के सबसे बड़े दुश्मन हैं। पढ़ते समय phone दूसरे कमरे में रखो; यह कोई छोटी बात नहीं, यह सबसे बड़ी बात है।

Comparison : दूसरों से लगातार तुलना आत्मविश्वास को अंदर से खा जाती है। हर किसी की यात्रा अलग है। अपनी race अपने आप से दौड़ो, कल के अपने आप से।

Burnout : नींद और सेहत की अनदेखी short-term में तेज़ी देती है, long-term में collapse। यह वैसा ही है जैसे credit card से ख़र्च करना - ब्याज बाद में चुकाना पड़ता है।

Method से ज़्यादा घंटों पर ज़ोर : बिना दिशा की मेहनत सिर्फ़ थकान देती है, परिणाम नहीं। बैठे रहने और पढ़ने में फ़र्क़ है।

Perfectionism का जाल : एक topic को 'पूरी तरह' ख़त्म करने के चक्कर में बाक़ी syllabus छूट जाता है। पहले पूरा syllabus एक बार, फिर गहराई - यही समझदारी है।

निष्कर्ष: परीक्षा अंततः धैर्य की परीक्षा है

भविष्य की परीक्षाएं रटने को और कम, और analysis व application को और ज़्यादा महत्त्व देंगी। इसलिए वही जीतेगा जो concept की गहराई में उतरेगा और दबाव में अपनी सोच साफ़ रख पाएगा। और सबसे बड़ी बात असफलता अंत नहीं, सीखने का एक पड़ाव है। मैंने medicine में सैकड़ों ऐसे students देखे हैं जो एक बार गिरकर दोबारा खड़े हुए और अंत में सबसे आगे निकले। एक परीक्षा का परिणाम आपकी पूरी क्षमता का फ़ैसला नहीं करता। धैर्य, अनुशासन और आत्मविश्वास यही असली syllabus है, और यही जीवन भर काम आता है।

"Selection list में नाम आना एक दिन की खुशी है। पर तैयारी के दौरान जो discipline आप अपने अंदर बनाते हो, वह पूरी ज़िंदगी आपके साथ चलता है। इसलिए परीक्षा से बड़ा इनाम है - वह इंसान जो आप परीक्षा की तैयारी में बन जाते हो।"

पं. दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय, कानपुर

रवि गुप्त (हाईस्कूल बैच 1979)



पंडित दीन दयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय, नवाबगंज, कानपुर, न तो मात्र यह एक पता है और न ही मात्र कोई शिक्षण संस्थान। ये हमारे अग्रजों का हमारे अभिभावकों का स्वर्णिम स्वप्न था कि समाज को अनेक दीन दयाल देने हैं। तभी तो दक्षिणमुखी हनुमान प्रभु जी को स्थापित किया गया। विद्यालय में सिर्फ पाठ्यक्रम ही नहीं, जीवन मूल्यों की शिक्षा दी गयी हम सभी को। मुझे स्मरण है कि जब मैं दसवीं कक्षा में था तो आचार्य श्री ओम् शङ्कर जी हमारी कक्षा में बताते थे कि रामायण हमें संसार में कैसे रहना है, उस जीने के तरीके को सिखाती है। और गीता हमें मृत्यु से भय मुक्त करके सुख पूर्वक संसार से विदा होने का। आचार्य श्री द्वारा बताया गया एक उद्धरण हमेशा याद रहता है कि सामान्य से नरेंद्र इतने गरिमामयी विवेकानन्द कैसे बने ?

गुरु रामकृष्ण के प्रति थी उनकी अगाध श्रद्धा। जिसे वे अक्सर जताते भी रहते थे। रामकृष्ण गुरु रूप में प्रसन्न भी रहते थे। एक दिन बात यहां अटक गई कि किसी से भी हो मगर सब शरीर से प्रेम तो करते हैं। क्या है कोई ऐसा जो शरीर के अपशिष्ट से भी उतना ही प्रेम कर पाता हो? उस समय गुरु रामकृष्ण के गले में कैंसर था, रामकृष्ण जीर्ण हो चले थे तो शिष्यों ने वहीं उनकी शयन शय्या के नीचे ही एक तसला रख रखा था, जिसमें गुरु रामकृष्ण गले में आया अपशिष्ट थूक दिया करते थे और प्रात: उसे कोई न कोई शिष्य बाहर ले जा कर साफ कर लाया करता था। तो जब बात आई कि क्या कोई गुरु के शरीर के अपशिष्ट से भी उतना ही प्रेम कर सकता है??... अनायास ही नरेंद्र ने वो अपशिष्ट वाला तसला उठाया और कंठ गत कर लिया। बाकी सारे शिष्य बस देखते ही रह गए उनके मुंह खुले के खुले थे। गुरु के नेत्र भर आए। संभवत: वही दिन था नरेंद्र के विवेकानन्द बन जाने का। गुरु और गोविंद में सदैव ही गुरु सर्वोच्च है। ऐसे उद्धरणों, ऐसी शिक्षा से मानवों का निर्माण किया जाता था दीन दयाल विद्यालय में।

दीन दयाल विद्यालय क्या है? इसकी अनुभूति इस विद्यालय से निकलने के बाद हुई।

इस विद्यालय से टीसी ले कर जब अन्य विद्यालय में प्रवेश लिया तो पहले माह में ही समझ आ गया कि मां की ममता और अनुशासन से निकल कर किसी अलग ही निष्ठुर संसार में आ गए हैं। यहां शिक्षक उत्तीर्ण होने के लिए ट्यूशन पढ़ने की अनिवार्यता बता रहे थे तो आस-पास के क्षेत्रों के अराजक तत्व अक्सर स्कूल में घुस कर विद्यालय प्रबंधन के समक्ष ही मारपीट करते थे।

पूर्व में जो अनुभव दीन दयाल विद्यालय में पढ़ते समय हुए थे, ये ठीक उससे विपरीत थे।

दीन दयाल विद्यालय में पढ़ते समय की एक घटना है कि विद्यालय के पीछे के बड़े से मैदान में हर मुहर्रम को लड़ाई-झगड़े, उत्पात होते थे। उस वर्ष भी हुआ। कक्षाएं चल रही थीं और हम सबको विशाल कक्ष में एकत्र कर लिया गया। उस मारपीट, उपद्रव में से कुछ व्यक्ति घायल अवस्था में विद्यालय परिसर में आ गए थे तो शिक्षकों ने उन्हें प्राथमिक उपचार दिया। पुलिस द्वारा स्थिति पर नियंत्रण कर लिए जाने के पश्चात हम छात्रों को जब घर भेजा गया तो अच्छी तरह स्मरण है कि मेरे जैसे दूर से आने वाले छात्रों को छोड़ने एक-एक शिक्षक उनके साथ गए थे।

इमरजेंसी की यादें आज तक मस्तिष्क में हैं कि कैसे द्वेष वश हमारे विद्यालय के सुंदर से राउंड शेप गार्डन को तत्कालीन सरकार द्वारा बुलडोजर चलवा कर खुदवा दिया गया था और हमें अत्यंत स्नेह करने वाले हमारे गुरुजन अचानक ही दिखने बंद हो गए थे। बाद में पता चला कि कुछ को कारागृह में रखा गया और कुछ भूमिगत हो गए थे... ऐसे गुरुजनों को तो साष्टांग नमन।

गुरुजन के बोए बीज आज फलदार वृक्ष बन चुके हैं। देख कर आनंद की अनुभूति होती है जब पता चलता है कि यहां से शिक्षा प्राप्त अनेक छात्र उच्च पदों पर हैं। कई तो विदेश में हैं परन्तु विद्यालय से निरंतर संपर्क में हैं। अनेक इंजीनियर हैं, डॉ. हैं, व्यवसायी हैं।

अत्यंत गर्व होता है अपने माता पिता की दूरदृष्टि पर कि उन्होंने हमें यहां अध्ययन हेतु भेजा। गुरुजन और मां-पिता जी का ये ऋण है हम सब पर।

चींटी

प्रो. शुभेन्द्र सिंह परिहार (1989 बैच)



पिछले एक सप्ताह से मैं Jodhpur में हूं। परिस्थितियां कुछ ऐसी हैं कि एक शांत और लगभग एकांत गेस्ट हाउस में रह रहा हूं। राजस्थान की भीषण गर्मी अपने पूरे प्रभाव में है और गेस्ट हाउस में प्राय: मैं अकेला ही रहता हूं। पिछले दो दिनों से मैंने देखा कि किचन में चींटियों का असामान्य आतंक बढ़ गया है। पहले तो लगा कि शायद कहीं भोजन के कण रह गए होंगे, इसलिए पूरी सफाई की, लेकिन उनका आना कम नहीं हुआ। तब थोड़ा ध्यानपूर्वक निरीक्षण किया तो पता चला कि एक बंद शक्कर के पैकेट के भीतर ही चींटियों का विशाल समूह प्रवेश कर चुका है और वही इस पूरे "आक्रमण" का केंद्र था। आश्चर्य इस बात का था कि पैकेट खुला भी नहीं था, फिर भी चींटियों ने अपना रास्ता खोज लिया था। सफाई के बाद कुछ राहत तो मिली, पर लगा कि शायद कुछ चींटियां अंदर की ठंडक और सुविधा के कारण वहीं रहना पसंद कर रही होंगी, ठीक वैसे ही जैसे हम मनुष्य कठिन मौसम में सुरक्षित स्थान ढूंढते हैं।

अगली सुबह जब गौरैयों और अन्य पक्षियों की चहचहाहट सुनाई दी तो मन में अचानक विचार आया कि ये आपस में कैसी बातें करते होंगे। पक्षियों का ध्वनियों के माध्यम से संवाद करना अपने आप में एक पूरा विज्ञान है। वे अलग-अलग स्वरों से खतरे, भोजन, दिशा और भावनाओं तक का आदान-प्रदान कर लेते हैं। इसी जिज्ञासा ने मन में एक और प्रश्न जगा दिया कि यदि पक्षी आवाज़ से संवाद करते हैं तो चींटियां कैसे बात करती होंगी। खोज करने पर पता चला कि चींटियां रासायनिक संकेतों यानी फेरोमोन्स के माध्यम से अपनी पूरी कॉलोनी से संवाद करती हैं। वे रास्ते बनाती हैं, भोजन की सूचना देती हैं, खतरे का संकेत भेजती हैं और स्पर्श के माध्यम से भी एक-दूसरे से संपर्क करती हैं। यह जानकर आश्चर्य हुआ कि इतने छोटे जीवों की दुनिया कितनी संगठित और व्यवस्थित होती है।

फिर मन में एक बिल्कुल मानवीय और थोड़ी हास्यास्पद जिज्ञासा उठी कि इतनी शक्कर खाने पर क्या चींटियों को डायबिटीज़ नहीं होती होगी। आगे पढ़ने पर पता चला कि चींटियां अत्यधिक सक्रिय जीव होती हैं। वे लगातार चलती रहती हैं, अपने वजन से कई गुना अधिक भार उठाती हैं और निरंतर श्रम करती रहती हैं। उनकी सारी शक्कर ऊर्जा में परिवर्तित हो जाती है और मनुष्यों की तरह शरीर में अतिरिक्त रूप से जमा नहीं होती। उस क्षण लगा कि प्रकृति कितनी सहज भाषा में जीवन का बड़ा सिद्धांत समझा देती है। यदि मीठा खाने की इच्छा है तो उतनी मेहनत करने की क्षमता भी होनी चाहिए, क्योंकि बिना श्रम के ऊर्जा अंतत: बोझ बन जाती है।

मेरी दैनन्दिनी

हरि कान्त मिश्र (1976 बैच)



सन् 1974 की बात है। मैं तब नवम कक्षा का छात्र था। जीवन की दहलीज़ पर खड़े हम सभी विद्यार्थियों के मन में भविष्य को लेकर अनेक सपने, प्रश्न और आकांक्षाएं उमड़ रही थीं। इन्हीं विचारों को आकार देने के लिए हमें अपनी दैनन्दिनी में यह लिखना था कि हम जीवन में क्या बनना चाहते हैं और किस दिशा में आगे बढ़ना चाहते हैं। यह मात्र एक लेखन अभ्यास नहीं था, बल्कि अपने सपनों को शब्द देने, अपनी जीवन-दृष्टि को पहचानने और भविष्य की मंज़िल निर्धारित करने का एक महत्त्वपूर्ण पड़ाव था। शायद हममें से किसी को भी उस समय यह आभास नहीं था कि दैनन्दिनी के उन सरल शब्दों में हमारे भविष्य की दिशा और नियति के बीज छिपे हुए हैं।

आचार्य जी के निर्देशानुसार मैंने भी अपनी आकांक्षाएं लिखीं-

1. एक बड़ा वैज्ञानिक बनना।
2. एक बड़ा प्रोफेसर बनना।

प्रत्येक विद्यार्थी को अपनी दैनन्दिनी आचार्य जी को प्रस्तुत करनी होती थी। वे उसे पूरी कक्षा के सामने पढ़ते, अपनी टिप्पणियां देते और यह समझने का प्रयास करते कि विद्यार्थी ने उस लक्ष्य को चुनने के पीछे क्या सोच रखी है।

जब मेरी बारी आई, तो उन्होंने 'बड़ा वैज्ञानिक' शब्द पढ़ा और मुस्कराते हुए कहा, "वैज्ञानिक अपने आप में ही एक महान और विशिष्ट पद है, फिर 'बड़ा' विशेषण जोड़ने की आवश्यकता क्यों है?" मैंने सम्मानपूर्वक उनकी बात स्वीकार की, परन्तु उस समय इतना साहस नहीं जुटा पाया कि अपने मन की बात खुलकर कह सकूं। शायद मैं संकोची था, शायद यह डर था कि कहीं सहपाठी मुझे अत्यधिक महत्त्वाकांक्षी या अवास्तविक सपने देखने वाला न समझें।

18 मई 1974 का दिन भारतीय इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों में अंकित है। इसी दिन बुद्ध पूर्णिमा के पावन अवसर पर भारत ने पोखरण में अपना पहला परमाणु परीक्षण किया। समाचार-पत्र और पत्रिकाएं भारतीय वैज्ञानिकों की उपलब्धियों और राष्ट्र की इस ऐतिहासिक सफलता से भरी हुई थीं। यह घटना मेरे किशोर मन पर गहरा प्रभाव छोड़ गई। भारतीय वैज्ञानिकों की प्रतिभा, समर्पण और राष्ट्रसेवा ने मुझे अत्यंत प्रेरित किया, और कुछ ही समय बाद वही प्रेरणा मेरी दैनन्दिनी में व्यक्त उस स्वप्न का आधार बनी।

सन् 1976 में विद्यालय से शिक्षा पूर्ण करने के बाद मैंने स्नातक और स्नातकोत्तर की पढ़ाई पूरी की। ईश्वर की कृपा और गुरुओं के आशीर्वाद से मुझे रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन (DRDO) में वैज्ञानिक के रूप में कार्य करने का अवसर मिला। मेरे बचपन का स्वप्न साकार हो चुका था।

समय बीतता गया। लगभग बीस वर्ष बाद, वर्ष 1994 में, डीआरडीओ में अनेक परियोजनाओं पर कार्य करने के पश्चात एक दिन मुझे कुछ चुनिंदा वैज्ञानिकों के साथ एक विशेष सरकारी दायित्व हेतु बुलाया गया। हमें यह नहीं बताया गया था कि हम कहां जा रहे हैं और न ही इस गोपनीय मिशन का उद्देश्य स्पष्ट किया गया था।

लंबी और थकाऊ यात्रा के बाद हम एक सैन्य ठिकाने पर पहुंचे। कुछ समय विश्राम के पश्चात हमें एक निर्धारित स्थान की ओर ले जाया गया। कुछ ही क्षणों में मेरे आश्चर्य की कोई सीमा नहीं रही। मेरी भावनाओं का ठिकाना नहीं रहा, जब मैंने

स्वयं को उस स्थान पर खड़ा पाया जिसे 'पोखरण पॉइंट ज़ीरो' कहा जाता है-वही स्थान जहां भारत का पहला परमाणु परीक्षण सम्पन्न हुआ था।

उस क्षण मैं भाव-विभोर हो उठा। एक विद्यार्थी के रूप में जो सपना मैंने कभी अपनी दैनन्दिनी में लिखा था, वह मेरे सामने साकार था। मेरे साथ उपस्थित अन्य वैज्ञानिक पहले परमाणु परीक्षण के सहभागी रह चुके थे और आगामी मिशन को लेकर अत्यंत उत्साहित थे। वह क्षण मेरे लिए केवल एक वैज्ञानिक उपलब्धि नहीं था, बल्कि अपने स्वप्न, संकल्प और विश्वास की शक्ति का साक्षात्कार था।

आज पीछे मुड़कर देखता हूं तो अनुभव होता है कि दैनन्दिनी में लिखे गए वे शब्द केवल आकांक्षाएं नहीं थे; वे संकल्प के बीज थे। प्रभु की कृपा, आचार्यों के मार्गदर्शन और सतत प्रयासों ने उन्हें वास्तविकता में बदल दिया। उस क्षण मुझे अपने विद्यालय द्वारा दिए गए संस्कार, मूल्य और शिक्षाएं बार-बार स्मरण हो रही थीं।

एक रोचक संयोग यह भी है कि पोखरण-2 का ऐतिहासिक परीक्षण भी बुद्ध पूर्णिमा के दिन, 11 मई 1998 को सम्पन्न हुआ। मानो इतिहास स्वयं कह रहा हो - "**Buddha is Smillng.**"

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते। (भगवद्गीता 4.38) इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र कुछ भी नहीं है।

❖❖❖

आचार्यात् पादमादत्ते, पादं शिष्यः स्वमेधया। (परंपरागत सुभाषित) शिष्य एक-चौथाई ज्ञान गुरु से, एक-चौथाई अपनी बुद्धि से, एक-चौथाई सहपाठियों से और बाकी समय के साथ पाता है।

'युगभारती' और 'मैं'

अजय शंकर दीक्षित (1983 बैच)



मैं अजय शंकर दीक्षित, दीन दयाल विद्यालय, कानपुर के 1983 बैच का सदस्य हूं और वर्तमान में 'बृज कैटरर्स' के नाम से कारपोरेट कैटरिंग करता हूं। हनुमान जी की कृपा से जीवन में कई महत्त्वपूर्ण दायित्वों के निर्वहन का अवसर मिला, जिसमें से एक वर्ष 2007-08 में विद्यालय के पूर्व छात्रों द्वारा संचालित संस्था 'युगभारती' के अध्यक्ष पद के निर्वहन का रहा। जहां ऊर्जावान, कर्मठ महामंत्री प्रिय मोहन कृष्ण मिश्र जी के साथ कार्य करने का अवसर मिला। तत्समय हम लोगों ने कुछ महत्त्वपूर्ण कार्य किये। प्रथमत: तो युगभारती के पंजीकरण का नियमितीकरण किया गया। उसी वर्ष विद्यालय के प्रधानाचार्य और युगभारती के संस्थापक आदरणीय आचार्य श्री ओम् शङ्कर जी सेवानिवृत्त हो रहे थे तो हम सबने उनके सेवानिवृत्ति समारोह करने का विचार किया। किंतु आचार्य जी ने कहा कि यह मेरी सेवानिवृत्ति का अवसर नहीं बल्कि यह तो वह समय है जब मैं युगभारती के लिये पूर्णकालिक कार्य करना प्रारम्भ कर रहा हूं। आचार्य जी की इन्हीं बातों से कार्यक्रम की दिशा बदल गयी और सेवानिवृत्ति समारोह करने की मंशा से आये हम सभी युगभारती सदस्य जुट गए अपने प्रथम पूर्णकालिक संरक्षक के स्वागत समारोह को मूर्त रूप देने में। वर्ष 2007-08 में युगभारती के सक्रिय सदस्य आज की तुलना में बहुत कम थे। हमलोगों ने विद्यालय से जुड़े विभिन्न लोगों से सम्पर्क साधना प्रारम्भ कर दिया। हमलोग प्रबन्ध तन्त्र के सदस्यों से मिले। कई लोगों से सकारात्मक ऊर्जा मिली, आशीर्वाद मिला तो कुछ ने हतोत्साहित भी किया। एक बार तो यहां तक सुनने को मिला कि आप 4-6 लोगों की बैठक करने वाली युगभारती के द्वारा किस प्रकार से कार्यक्रम किया जाएगा? किंतु हम सभी न तो हतोत्साहित हुए और न ही दिग्भ्रमित। हम सभी एकमत से कार्यक्रम को सफल बनाने की योजनाओं पर आगे बढ़ते रहे।

उस समय न तो मोबाइल बहुत प्रचलित था और न ही अन्य स्थानों पर युगभारती के सक्रिय प्रकोष्ठ हुआ करते थे। फिर भी मन में संकल्प साधे, चरैवेति चरैवेति का मंत्र दोहराते हम लोगो ने पूरे देश और विश्व के अन्य देशों में रह रहे पूर्व छात्रों को स्वागत समारोह के लिये आमंत्रित किया। कार्यक्रम की तैयारियों के दौरान यह प्रश्न भी आया था कि स्वागत समारोह में आचार्य जी को स्मृति चिन्ह के रूप में क्या दिया जाये? हनुमान जी की कृपा से एक सुझाव आया कि विद्यालय भवन का प्रतिरूप बनवा कर देना सर्वथा उचित रहेगा। स्थानीय आजाद नगर निवासी एक कलाकार के सहयोग से इस सुझाव को भी मूर्तरूप दिया गया।

फिर वो दिन आया, रविवार 29 जून 2008 जब हनुमान जी की कृपा और आचार्य श्री ओम् शङ्कर जी के प्रति पूर्व छात्रों की श्रद्धा व प्रेम का परिणाम दिखा, विद्यालय का विशाल कक्ष मय बालकनी के पूर्व छात्रों से खचाखच भर गया। बैठने के लिए कुर्सियां कम पड़ गयी थी। इतना भावपूर्ण कार्यक्रम था कि 1975 से 2008 तक के सभी बैचेज से पूर्व छात्र इस स्वागत समारोह में सम्मिलित होने आए, आचार्य श्री ओम् शङ्कर जी का आशीर्वाद लेने आए। पिथौरागढ़ से लेकर कलकत्ता, बंगलोर, मुम्बई आदि देश के कोने-कोने से पूर्व छात्र आये। जिन्हें ट्रेन नहीं मिली वो हवाई जहाज से आए, जिन्हें दोनों नहीं मिले वो अपनी कार से ही चले आये। अद्‌भुत था वो कार्यक्रम, हमारे पूर्णकालिक संरक्षक का स्वागत समारोह।

इस कार्यक्रम से उत्साहित हो एक अन्य कार्यक्रम करने की योजना मन में पल्लवित होने लगी। अपने व्यवसायिक कार्यों के क्रम में आई.आई.टी. कानपुर के एलुमनाई एसोसिएशन के कार्यक्रमों की कैटरिंग का कार्य भी मैं सन 1999 से ही करता था। उस समय वहां का एसोसिएशन संस्थान से उत्तीर्ण हुए विद्यार्थियों के पच्चीस वर्ष पूर्ण होने पर एक सिल्वर जुबली कार्यक्रम

करता था। कई वर्षों तक उक्त कार्यक्रम की कैटरिंग व्यवस्था करने से एसोसिएशन कार्यालय सदस्यों संग मेरे अच्छे सम्बन्ध हो गये और उनकी कार्य प्रणाली को और बेहतर तरीके से समझने का मौका मिला। आई.आई.टी. एलुमनाई कार्यालय के महेश श्रीवास्तव जी के सहयोग से विद्यालय के सभी पूर्व छात्रों की नाम पते की सूची कम्प्यूटर में फीड कराई गई। फिर युगभारती को पूर्व छात्रों के 'रजत-जयंती कार्यक्रम' को किये जाने का प्रस्ताव दिया।

मेरी और युगभारती की परिकल्पना थी कि आई.आई.टी. कानपुर की तरह युगभारती अपने पूर्व छात्रों का भव्य स्वागत करे व उनसे प्रगाढ़ सम्बन्ध बनाये। उस बैच को कोई समाजोन्मुखी बड़ा दायित्व दिया जाये।

अब हम सभी के मन में प्रथम प्रश्न यह उठा कि इस कार्य को कैसे प्रारम्भ किया जाये? तब हम 1983 बैच के इंटरमीडिएट उत्तीर्ण साथियों के द्वारा निर्णय लिया गया कि अपने बैच के रजत-जयंती कार्यक्रम से ही इस कार्य की शुरुआत करते हैं।

लेकिन क्रियान्वयन के स्तर पर यह कार्य इतना सरल भी न था। उस समय तक युगभारती व विद्यालय में से किसी ने भी किसी भी बैच के विद्यार्थियों की न तो कोई व्यवस्थित सूची बनाई थी और न ही कभी सम्पर्क करने का प्रयास किया था। जो निवास के पते विद्यालय के रिकॉर्ड से मिले उनमें बहुत से विद्यार्थी मिले नहीं। सन 1983 में सामान्यत: घरों में फोन भी नहीं होते थे तो सम्पर्क सूत्र मिलना भी कठिन था। तब 2007 में न तो आज की तरह व्हाट्सऐप हुआ करता था और न ही फेसबुक भारत में वर्तमान के स्तर तक प्रचलित था। इसलिए अपने सहपाठियों और सेवानिवृत्त आचार्यों को खोजना और आमंत्रित करना बहुत टेढ़ी खीर होता जा रहा था। फिर भी हमारे बैच के कुछ साथियों ने कमर कसी और हम अपने सहपाठियों के घर-घर गये। जो निवास पर नहीं मिला उनके विषय में परिवारीजन, उनके पड़ोसियों आदि से पता किया कि अब वो कहां हैं? उनके नवीन निवास स्थान की सूचना भेजे जाने के प्रयास प्रारम्भ किये गए। जो शहर में मिला उससे शहर में, जो दूसरे शहरों में बस गए थे उनसे वहां सम्पर्क किया गया। सभी के समवेत प्रयासों से आशातीत सफलता मिली। साठ प्रतिशत मित्र और शत प्रतिशत आचार्य कार्यक्रम में आये। सबसे दूर, असम से विद्यालय के पूर्व प्राचार्य श्री शान्तनु शैन्डे जी आये। एक यादगार कार्यक्रम हुआ। समाचार पत्रों ने खूब सराहा। उस समय इंटर कॉलेजों में ऐसे कार्यक्रम सामान्यत: नहीं होते थे। उस कार्यक्रम की सफलता ऐसे समझी जा सकती है कि उसके बाद तीस वर्ष, पैंतीस वर्ष, चालीस वर्ष पूर्ण करने के कार्यक्रम हम 1983 बैच के साथियों ने भव्य तरीके से किये।

हमारे 1983 बैच के लिए गर्व की बात है कि युगभारती द्वारा अपने सदस्यों के लिये प्रत्येक वर्ष किये जाने वाले रजत-जयंती वर्ष कार्यक्रम का शुभारंभ हम सभी ने किया था और वर्ष दर वर्ष यह कार्यक्रम भावनात्मक रूप से और भव्य होता जा रहा है।

"सर्वोच्च शिक्षा वह है जो हमें केवल जानकारी ही नहीं देती, बल्कि हमारे जीवन को समस्त अस्तित्व के साथ सामंजस्यपूर्ण बनाती है।"

—रवीन्द्रनाथ टैगोर

संस्कारों का मूर्त रूप- महाकुंभ सेवा शिविर

कुमार आनंद अग्रवाल (1987 बैच)



"पुस्तकों में लिखी सूक्तियां तब जीवंत होती हैं जब उन्हें कर्म की कसौटी पर कसा जाता है।" दीन दयाल विद्यालय, कानपुर के प्रांगण में आचार्यों के मुख से सुनी 'नर सेवा ही नारायण सेवा' की बातें अक्सर मन के किसी कोने में गूंजती रहती थीं और हमेशा प्रयास रहता था कि समाजोन्मुखी कार्य किये जाएं।

वर्ष 2019 की बात है। प्रयागराज में आयोजित कुंभ मेले में जाने का सौभाग्य मिला। चारों तरफ शंखध्वनि, हर-हर गंगे का उद्घोष, दूर-दूर तक फैला तंबुओं का शहर और उसमें अपनी आस्था को संजोए चले आ रहे लाखों श्रद्धालु... कुंभ का यह दृश्य जितना विहंगम था, उतना ही मन में एक जिम्मेदारी का अहसास कराने वाला था। कड़ाके की ठंड में जब मैंने दूर-दराज के गांवों से आए बुजुर्गों और परिवारों को आश्रय की तलाश में देखा, तो मेरे भीतर विद्यालय में मिले सेवा के वो संस्कार जाग उठे जो आचार्यों ने हमारे भीतर बोए थे। उसी पल संकल्प ने आकार लिया कि इस महामेले में हमें केवल मूकदर्शक नहीं, बल्कि समाज का सेवक बनना है। कुंभ मेला परिसर में शिविर लगाने की योजना बनने लगी। परिवारीजन और साथी सहयोगियों के द्वारा प्रयास शुरू हुए। लेकिन वो प्रयास मूर्त रूप न ले पाए। हम सफल नहीं हुए लेकिन हां, यह समझ आ गया था कि इस योजना के सफल क्रियान्वयन में हमारी उम्मीदों से अधिक आवश्यकता पड़ेगी, प्रतिबद्धता की, संसाधनों की।

समय अपनी गति से चल पड़ा। मन के किसी कोने में कसमसाते कुंभ शिविर की योजना को हकीकत में बदलने का एक विराट अवसर आया। महाकुंभ का बुलावा आया। समाज के लिए कुछ कर गुजरने की वही अभिलाषा और गुरुओं का आशीर्वाद पाथेय बना। हम निकल पड़े त्रिवेणी के तट पर भूखे-प्यासे श्रद्धालुओं की सेवा का एक छोटा सा आशियाना सजाने... सेवा शिविर लगाने।

पहले हम लोग अमर चाचा जी (श्री अमर नाथ गुप्त जी योग बिल्डर) से मिले, जिन्होंने 25-30 साल इस तरह के शिविर आयोजित किए थे। उनसे बहुत उपयोगी जानकारियां मिलीं, जो बाद में हमारे लिए बहुत सहायक सिद्ध हुईं।

प्रयागराज के श्री राम जी अग्रवाल जी को हम लोगों ने निवेदन किया कि वह अपने परिवार के लिये आवंटित भूमि को हम लोगों को दे दें। ईश्वरीय व्यवस्था ही कहिए, उन्होंने भूमि और सभी ठेकेदार उपलब्ध कराए। उनके साथ नक्शा और लगने वाली विभिन्न वस्तुओं की लिस्ट बनाई गयी। दिसंबर-2024 में हमलोग 4 बार मेला अधिकारी से मिलकर अपने शिविर को सेक्टर-6 से संगम के पास किसी दूसरे सेक्टर में आवंटित करने के लिए गये। वह एक बार मिले लेकिन कुछ हुआ नहीं।

अंतत: 03 जनवरी 2025 को हम लोगों की एक टीम 2 छोटे ट्रकों में टीन की शीट्स, जीन के कपड़े के थान, ढेरों बल्लियां, बहुत सारे रजाई- गद्दे, एक स्कूटर आदि सामान लेकर प्रयागराज रवाना हुई। इसको ट्रक में लोड करने के लिए 2 श्रमिक बुलाए गये, मेहनती युवक थे वो। फिर वह प्रयागराज उसी ट्रक में गये और शिविर समाप्ति के बाद ही वापस आए, पूरे 45 दिन बाद।

लेकिन यह शिविर कई परीक्षाओं के साथ ही गुजरा। जिस दिन हमने कानपुर से प्रयागराज के लिये सामान सहित ट्रक रवाना किये थे उसी के अगले दिन 04 जनवरी को जीएसटी विभाग ने हमारे सर्वथा लीगल डाक्यूमेंट्स के साथ भिवंडी ब्रांच से गुवाहाटी ब्रांच जा रहे एक ट्रक मैटिरियल को गोरखपुर के पास सीज कर दिया। उसका आदेश कराके छुड़ाने में 7-9 दिन लग गये। ध्यान भटका, लेकिन अब लगता है ईश्वरीय व्यवस्था का हिस्सा रहा होगा यह भी। जब नीयत साफ हो और गुरुओं का मार्गदर्शन साथ हो, तो बड़े से बड़ा संकल्प भी सिद्ध हो जाता है। इस बार महाकुंभ के पावन अवसर पर कुछ ऐसा ही संयोग बना। मन में समाज के लिए कुछ सार्थक करने की तीव्र इच्छा थी, जिसे हमारे आचार्यों के आशीर्वाद और विद्यालय से मिले संस्कारों ने एक सही दिशा दी। इसी वैचारिक पूंजी के साथ हमने महाकुंभ के विशाल प्रांगण में आने वाले श्रद्धालुओं के ठहरने और विश्राम के लिए एक सेवा शिविर की नींव रखी। हमारी जो टीम ट्रक के साथ गयी थी वह रेत पर उसी टिन को बिछाकर अगले

तीन दिन तक (3 जनवरी से 6 जनवरी तक) सोई। जब तक एक कक्ष तैयार नहीं हो गया। ईश्वर जैसे हमें आवश्यक शारीरिक और मानसिक शक्ति प्रदान कर रहा था। अबतक हम लोगों को विश्वास हो गया था कि यह प्रयास निश्चित ही सफल होगा।

13 जनवरी तक शिविर एक आकार लेने लगा था। राम जी अग्रवाल ने 76 वर्ष की अवस्था में उस ठंड में पूरा सुपरविजन किया। 17 जनवरी को जब लगने लगा कि सबकुछ व्यवस्थित हो रहा है तो जल-संकट आ गया। पूरा सेक्टर-6 धरने पर बैठ गया। दो दिन बीते लेकिन अब बिजली, पानी, भोजन सब उपलब्ध था, हर हर महादेव। इस दिन मुझे पता लगा कि यह 144 वर्षों में आनेवाली नक्षत्रीय व्यवस्था के गणित से महाकुंभ है।

हमारा सेवा शिविर मेरी आंखों के सामने तैयार खड़ा था। यह केवल बांस-बल्लियों और तिरपाल से बना एक ढांचा नहीं था, बल्कि हमारे संस्कारों की एक जीवंत प्रयोगशाला थी...

ईश्वर की कृपा से एक अच्छी रसोई की 4 लोगों की टीम भी मिल गयी। जो पूरे 30-32 दिन वहीं रही और हर समय गर्म भोजन / जलपान के लिए तत्पर। क्या नहीं बनाया उन लोगों ने? तंदूरी रोटी, जलेबी, इडली, सब्जी सहित ढेरों स्वादिष्ट आहार और हां, वो जायकेदार चाय भी।

हम लोगों को बहुत आनंद आ रहा था। हमारा परिवार कुल मिलाकर 30 दिन तक शिविर में अतिथियों का स्वागत करने के लिए उपलब्ध रहा। हम लोगों ने रुद्राभिषेक किया, भजन किये। अलग-अलग प्रांतों से तीर्थयात्री आए। बहुत सारे लोग शिविर के भरोसे ही आने की हिम्मत जुटा पाए। इसी बहाने कुछ युगभारती सदस्यों और उनके परिवारों को और करीब से जानने का अवसर मिला। कई बार तो यह भी हुआ कि कुछ परिचित लोग प्रयागराज आए शिविर तक नहीं आ पाए, जहां तक पहुंचें वहीं स्नान किया और वापस चले गये। ईश्वर ने उनकी तीर्थयात्रा के लिए इस शिविर को एक छोटा सा केमियो रोल दे दिया।

सब्जी, दूध, पानी, गैस सिलेंडर आदि दैनिक जरूरतों की आपूर्ति बनाए रखना एक बहुत आनंददायक और रोचक गतिविधि होती थी। कभी स्कूटर की अनुमति होती, कभी नहीं होती। प्रयागराज के बालसन चौराहे जाना होता था। लेकिन न कोई थकान और न ही कभी उत्साह में कमी जैसा कुछ अनुभव हुआ।

कुंभ में एक द्वैत चलन देखा-

1. गांव से आए हैं केवल अपने ईष्ट के भरोसे थके तो खुले आसमान के नीचे रात व्यतीत कर ली। घर की स्त्रियों ने स्नान करके अपने सबसे अच्छे सुंदर वस्त्र पहनकर मां गंगा की आरती-अर्चना की। एक दिया, कुछ फूल, एक-दो रुपये के सिक्के और मां गंगा का आशीर्वाद मान बहुत सारा सिंदूर / सुलभ श्रृंगार कर अपने को धन्य माना। उसका कोई और है भी नहीं सिवाय उसके ईष्ट के अव्यावहारिक लोग हैं। आस्था और सामानों, दोनों की गठरी भारी है। चलने में कष्ट नहीं होगा ?

2. एक और समाज है वह ईश्वर के भरोसे नहीं आया है वह अपने अर्जित सामर्थ्य के भरोसे आया है। वह 'लोकल' के सहकर्मी, रिश्तेदार, शासन - प्रशासन में पैठ के भरोसे आया है। उसने सभी को फोन करके एक 'वेल-इन्फार्मड' और वेल-थॉट प्लान बनाया है। इस प्लान में उसके रिसोर्सेज की धमक है। उसके लिये मात्र आस्था के भरोसे रहना तर्क-संगत नहीं है या फिर कहिए व्यावहारिक नहीं है। सबने "इजी टू चेंज" वस्त्रों की छोटी पोटली बना रखी है। आस्था की पोटली भी उसी छोटी साइज की है। एक्चुअली इस तरह से दोनों मैनेजबल है।

विद्यालय के दिनों में आचार्य जी ने बताया था कि महादेवी वर्मा जी ने ईश्वर को न पाने के विरह को द्वैत माना, परन्तु यहां का द्वैत महादेवी के द्वैत से इतर है। अब है कि नहीं, राम जी जानें। खैर...

कुंभ शिविर के आयोजन के लिए हम महादेव के आदेश, आचार्यों और विद्यालय द्वारा पल्लवित संस्कारों और माता-पिता के द्वारा अर्जित पुण्यों को एक मात्र प्रेरणा मानते हैं। महादेव ने हम लोगों को अपने प्रयोजन में एक रोल दिया, यह आशीर्वाद आजीवन आनंदित करता रहेगा।

ईश्वर से नित प्रार्थना करता हूं कि प्रत्येक कुंभ में हमें यूं ही सेवा शिविर आयोजित करने का सौभाग्य मिलता रहे।

विद्यालयों में स्वास्थ्य और शिक्षा में संबंध

अजय खन्ना (1987 बैच)



(सचिव) श्रीमती मीरा रानी सामाजिक उत्थान संस्थान, कानपुर, संस्थापक, "स्कूल स्वास्थ्य कार्यक्रम"

स्वास्थ्य और शिक्षा एक दूसरे के पूरक हैं। किसी भी छात्र के सर्वांगीण विकास के लिए अच्छा स्वास्थ्य और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा दोनों आवश्यक हैं। स्वस्थ छात्र ही पढ़ाई में बेहतर ध्यान लगा सकता है, नई बातें आसानी से सीख सकता है और अपनी क्षमताओं का पूर्ण विकास कर सकता है।

विद्यालय छात्रों के जीवन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, यहां केवल ज्ञान ही नहीं दिया जाता, बल्कि स्वस्थ जीवनशैली की आदतें भी विकसित की जाती हैं। स्वच्छ वातावरण, पौष्टिक भोजन, नियमित व्यायाम, योग तथा वाक्य तथा खेलकूद से स्वस्थ रहने वाले विद्यार्थी नियमित रूप से विद्यालय में उपस्थित रहते हैं और उनकी सीखने की क्षमता भी अधिक होती है।

दूसरी ओर शिक्षा भी स्वास्थ्य को सुधारने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शिक्षित व्यक्ति स्वास्थ्य संबंधी जानकारी को बेहतर ढंग से समझता है और स्वस्थ जीवनशैली अपनाता है। विद्यालयों में स्वास्थ्य शिक्षा के माध्यम से बच्चों को स्वच्छता, पोषण, रोगों की रोकथाम तथा मानसिक स्वास्थ्य के बारे में जागरूक किया जाता है।

विद्यालयों में स्वास्थ्य परीक्षण, स्वच्छ पेयजल, व्यक्तिगत स्वच्छता, सुरक्षित शौचालय, पौष्टिक मध्याह्न भोजन, पोषण स्तर में सुधार तथा खेल सुविधाएं उपलब्ध कराकर छात्रों के स्वास्थ्य को बढ़ावा दिया जा सकता है। "स्कूल स्वास्थ्य कार्यक्रम" में शिक्षक की भूमिका छात्रों के शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक विकास को सुनिश्चित करने में अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

अंततः कहा जा सकता है कि स्वास्थ्य और शिक्षा में गहरा संबंध है। स्वस्थ विद्यार्थी ही बेहतर शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं और शिक्षित व्यक्ति ही स्वस्थ समाज के निर्माण में योगदान दे सकता है। इसलिए विद्यालयों में स्वास्थ्य एवं शिक्षा दोनों पर समान रूप से ध्यान देना आवश्यक है।

"स्वास्थ्य और शिक्षा अपनाएं, खुशहाल जीवन की राह बनाएं!"

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया। (भगवद्गीता 4.34) ज्ञान को विनम्रता, बार-बार प्रश्न पूछने और सेवा से प्राप्त करो।

विवेकानन्द समिति- शिक्षा, संस्कार और संवेदना का अभियान

विजय कुमार दीक्षित (1987 बैच)



संस्थापक- विवेकानन्द समिति

विचारों का बीजारोपण- "जहां उम्मीद खत्म होती है, वहीं से शिक्षा के माध्यम से नई शुरुआत होती है।" दीन दयाल विद्यालय, कानपुर से शिक्षा प्राप्त करने के बाद यह विचार गहरे ही कहीं मेरे मन में बैठ गया था। विद्यालय से प्राप्त शिक्षा, संस्कार और आचार्यों के मार्गदर्शन से इतना तो तय हो गया था कि शेष जीवन मात्र अपने लिए नहीं, अपने परिवार के लिये नहीं वरन समाज के प्रति अपने उत्तरदायित्वों के निर्वहन के साथ ही बीतेगा।

वो एक घटना-

कानपुर से इंटरमीडिएट करने के बाद इंजीनियरिंग की शिक्षा हेतु बीआईटी झांसी में मैंने दाखिला लिया। उन दिनों जब मैं कॉलेज की मेस कमेटी का अध्यक्ष हुआ करता था, अजीब से घटनाक्रम शुरू हुए। भोजनालय के बर्तन चोरी होने लगे। एक रात मैं छत पर टहल रहा था तो मेस के पीछे अंधेरे में एक लड़का नजर आया। मैंने आवाज लगाई तो वो भागा। मेरी आवाज सुनकर मेस के कुछ कर्मचारी उसके पीछे दौड़े और उसे पकड़ लिया। जब उस लड़के से पूछताछ की गई तो वस्तुस्थिति जानकर मैं भीतर तक हिल गया। वो लड़का रात के अंधेरे में भोजनालय की नाली से निकलने वाली जूठन को इकट्ठा कर रहा था ताकि वह अपना पेट भर सके। इस घटना ने मुझे उद्वेलित कर दिया। कॉलेज के आसपास के गांवों में जाकर पता चला कि गरीबी के पांव चहुं ओर पसरे हैं। बस वहीं यह निश्चय किया कि ऐसे वंचित समाज के लिये कुछ ठोस कार्य करना है और इन विचारों को सम्बल मिल रहा था दीन दयाल विद्यालय से प्राप्त शिक्षा और संस्कारों का। विचारोपरांत कॉलेज के कुछ साथियों के सहयोग से आरम्भ हुआ वंचित समाज, सेवा बस्तियों से जुड़ने का क्रम। प्रथमत: उनके लिये कॉलेज के मेस से ही भोजन का प्रबंध प्रारम्भ किया गया और फिर मेस में कार्य कर रहे कर्मचारियों को साक्षर बनाने का कार्य किया।

विवेकानन्द समिति की स्थापना-

समय अपनी तेज गति से चल रहा था, मैंने इंजीनियरिंग की पढ़ाई पूर्ण की और नौकरी के लिये कानपुर आ गया। नौकरी के साथ-साथ कई सामाजिक संगठनों के साथ जुड़कर कार्य भी किया। किंतु ऐसा हमेशा लगता था कि मैं समाज के प्रति अपने दायित्वों का निर्वहन पूरी तरह से नहीं कर पा रहा हूं। गाहे-बगाहे झांसी कॉलेज की उस रात की घटना मानस पटल पर उभर कर मुझे झकझोर जाती थी। इसी ऊहापोह में वर्ष 2007 में विवेकानन्द समिति की स्थापना की और प्रयास नाम से विवेकानन्द समिति के बैनर तले पर्यावरण जागरूकता को प्राथमिकता में रख कार्य प्रारम्भ किया।

उड़ान- पर्यावरण जागरूकता की दृष्टि से ढेरों विद्यालयों में जाना, वहां प्रार्थना सभा में विद्यार्थियों को पर्यावरण के प्रति जागरूक करने का कार्य गति पकड़ने लगा। दो वर्ष बीत गए। वर्ष 2009 की बात है जब एक दिन कानपुर के गोविंद नगर क्षेत्र के काला बाबा आश्रम स्थित सरस्वती शिशु मंदिर की प्रार्थना सभा में जाना हुआ। प्रार्थना सभा के बाद पाया कि पांच विद्यार्थी प्रधानाध्यापक कक्ष के बाहर खड़े हैं और उन विद्यार्थियों को विद्यालय शुल्क न जमा करने के कारण परीक्षा में बैठने की अनुमति

नहीं दी जा रही है। प्रधानाचार्य जी से वार्ता के क्रम में मैंने निर्णय किया कि उन सभी बच्चों का शुल्क मैं जमा कर दूंगा ताकि उन्हें परीक्षा में सम्मिलित होने की अनुमति मिल सके। इस घटना के बाद से वर्षों से मेरे अंदर उमड़ रहे विचारों को मूर्तरूप देने की योजना को पंख लग गए और विवेकानन्द समिति के अंतर्गत उड़ान नामक प्रकल्प शुरू कर दिया। जिसके अंतर्गत यह निश्चय किया गया कि वंचित बस्तियों, फुटपाथ पर रहने, भीख मांगने वाले गरीब बच्चों की शिक्षा का भार अब यह समिति उठाएगी।

समिति का आधार- दीन दयाल विद्यालय से प्राप्त संस्कारों और आचरण आधारित शिक्षा ने वंचित एवं शोषित वर्ग के प्रति सेवा और संवेदना का भाव जाग्रत किया। स्वामी विवेकानन्द के विचारों से प्रेरित होकर यह विश्वास दृढ़ हुआ कि समाज से जो कुछ प्राप्त हुआ है, उसे समाज को लौटाना ही जीवन का वास्तविक उद्देश्य है। इन्हीं प्रेरणाओं के आधार पर स्थापित विवेकानन्द समिति आज शिक्षा के माध्यम से वंचित बच्चों के जीवन में आशा, आत्मविश्वास और बेहतर भविष्य का संचार करने का निरंतर प्रयास कर रही है।

शिक्षा के माध्यम से बदलती जिंदगियां-

समिति का कार्य केवल आंकड़ों तक सीमित नहीं है, बल्कि उन बच्चों की मुस्कान में दिखाई देता है जिनके जीवन में कभी निराशा के अलावा कुछ नहीं था। आर्थिक अभाव, पारिवारिक संकट और विपरीत परिस्थितियों से जूझ रहे अनेक बच्चों ने आज शिक्षा के माध्यम से अपने जीवन की नई शुरुआत की है।

कृष्ण और शिवानी जैसे बच्चे, जिन्होंने माता-पिता को खो दिया और अपनी वृद्ध दादी के साथ मंदिर के बाहर भीख मांगकर जीवन बिताने को मजबूर थे, आज विद्यालय में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। उनकी आंखों में अब भीख प्राप्त करने की इच्छा नहीं, बल्कि भविष्य के सुनहरे सपने दिखाई देते हैं।

माही, जिसकी पढ़ाई आर्थिक और पारिवारिक संकटों के कारण रुक गई थी, आज फिर विद्यालय जा रही है। नया बस्ता और किताबें हाथ में लेकर उसके चेहरे पर लौटी मुस्कान ही समिति के प्रयासों की सबसे बड़ी सफलता है।

लक्ष्मी, जो सड़क किनारे रहने वाले परिवार से आती है और जिसके जीवन में अभाव ही अभाव था, आज शिक्षा की पहली सीढ़ी पर कदम रख चुकी है। उसकी आंखों में शिक्षा के प्रति जो चमक है, वही इस बात का प्रमाण है कि हर बच्चा अवसर मिलने पर आगे बढ़ सकता है।

इसी प्रकार नंदिनी शुक्ला की कहानी संघर्ष से सफलता तक की प्रेरणादायक यात्रा है। आर्थिक कठिनाइयों के कारण जिसकी पढ़ाई रुकने वाली थी, आज वही नंदिनी एक विद्यालय में अध्यापक बनकर बच्चों को शिक्षा दे रही है। यह केवल एक छात्रा की सफलता नहीं, बल्कि शिक्षा की शक्ति का जीवंत उदाहरण है।

कुछ दिनों पहले अंजली के घर गया था मैं। घर क्या कहें, सड़क किनारे काली पन्नी और टट्टर की सहायता से बनी एक झोपड़ी। उस झोपड़ी में सड़क के कुछ आवारा कुत्तों के समीप लैपटॉप पर अंजली को काम करते देख आत्मसंतुष्टि हुई। अंजली बी.टेक कर रही है, उसकी एक छोटी बहन पॉलिटेक्निक, एक बहन ग्यारहवीं और छोटा भाई नौवीं कक्षा में हैं। समिति के सहयोग से बिना पिता की ये संतानें निर्बाध रूप से शिक्षा प्राप्त कर रही हैं। ऐसे ही एक खाली प्लॉट में पन्नी, टट्टर और टीन शेड से बनी झोपड़ी में रहने वाला दीपक अबकी बी.टेक अंतिम वर्ष का छात्र है, उसका भाई रजत बीसीए कर रहा है, अभिषेक पॉलिटेक्निक कर रहा है, छोटी बहन ग्यारहवीं में है। यह सभी समिति के सहयोग और परमपिता के आशीर्वाद से अपने जीवन पथ पर तेजी से आगे बढ़ रहे हैं।

समिति का कार्यक्षेत्र-

विवेकानन्द समिति शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर बच्चों को सहयोग प्रदान करती है-

झुग्गी-बस्तियों के बच्चों को शिक्षा से जोड़ना।

विद्यालयों में प्रवेश, पुस्तकें, बैग, स्टेशनरी तथा आवश्यकता अनुसार कोचिंग की व्यवस्था करना।

आर्थिक रूप से कमजोर विद्यार्थियों को इंटरमीडिएट, पॉलिटेक्निक, बीए, बीएससी, बी.टेक सहित अन्य व्यावसायिक शिक्षा हेतु आर्थिक एवं शैक्षणिक सहयोग प्रदान करना।

आवश्यकता अनुसार लैपटॉप एवं अन्य शैक्षणिक संसाधन उपलब्ध कराना।

नैतिकता, संस्कार और व्यक्तित्व विकास हेतु विभिन्न कार्यक्रम आयोजित करना।

बच्चों की प्रगति पर अभिभावक की तरह निरंतर ध्यान रखना तथा अभिभावक-अध्यापक बैठकों में सहभागिता करना।

आज समिति के सहयोग से लगभग 250 बच्चे विभिन्न विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। अनेक विद्यार्थी तकनीकी एवं स्नातक शिक्षा पूर्ण कर रोजगार प्राप्त कर चुके हैं।

पनकी गंगागंज स्थित कपाड़िया बस्ती, जिसे परंपरागत रूप से भिक्षावृत्ति करने वालों की बस्ती के रूप में जाना जाता है, वहां के लगभग 50 बच्चे आज समिति के सहयोग से शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं और विद्यालय की विभिन्न खेलकूद एवं सांस्कृतिक प्रतियोगिताओं में पुरस्कार भी प्राप्त कर रहे हैं।

वर्तमान उपलब्धियां-

समिति के सहयोग से प्राथमिक शिक्षा प्रारम्भ करने वाले 06 विद्यार्थी आज बी.टेक एवं 1 विद्यार्थी पॉलिटेक्निक पूर्ण कर विभिन्न क्षेत्रों में सफलतापूर्वक नौकरी कर रहे हैं।

02 विद्यार्थी ग्रेजुएशन पूर्ण कर नौकरी कर रहे हैं।

वर्तमान में अध्ययनरत बच्चों में से 04 विद्यार्थी बी.टेक कर रहे हैं, 07 विद्यार्थी पॉलिटेक्निक कर रहे हैं, 06 विद्यार्थी ग्रेजुएशन कर रहे हैं, 02 विद्यार्थी बीसीए कर रहे हैं।

"शिक्षा केवल ज्ञान नहीं देती, बल्कि आत्मनिर्भरता और सम्मानपूर्ण जीवन का मार्ग भी प्रशस्त करती है।"

समाज में सकारात्मक परिवर्तन-

समिति का उद्देश्य केवल बच्चों को शिक्षित करना नहीं, बल्कि उन्हें आत्मनिर्भर, संस्कारित और सामाजिक उत्तरदायित्वों के प्रति जागरूक नागरिक बनाना है। कपाड़िया बस्ती जैसे क्षेत्रों में, जहां कभी भिक्षावृत्ति जीवन का प्रमुख साधन थी, आज अनेक बच्चे विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं और विभिन्न गतिविधियों में अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन कर रहे हैं। महापुरुषों की जयंती, प्रेरक कार्यक्रम, सेमिनार और मार्गदर्शन सत्र उनके व्यक्तित्व निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

सम्मान और उपलब्धियां-

समिति को समाज सेवा के क्षेत्र में अनेक मंचों से सम्मान प्राप्त हुए हैं। विशेष रूप से संत ईश्वर अवार्ड- 2018 समिति के कार्यों की राष्ट्रीय स्तर पर मिली महत्त्वपूर्ण पहचान है।

निष्कर्ष-

विवेकानन्द समिति, सीमित संसाधनों के बावजूद पूर्ण मनोयोग, समर्पण और संवेदनशीलता के साथ आर्थिक रूप से पिछड़े बच्चों के जीवन में शिक्षा के माध्यम से सकारात्मक परिवर्तन लाने का इस विश्वास के साथ ईमानदार प्रयास कर रही है कि हर वह बच्चा जो आज शिक्षा प्राप्त कर रहा है, वह कल समाज के लिए आशा का दीपक बनेगा। क्योंकि "शिक्षा वह प्रकाश है जो सबसे अंधेरे जीवन को भी उजाले से भर सकती है।"

समाज के सभी सहयोगी, शिक्षक, अभिभावक और शुभचिंतक इस परिवर्तन यात्रा में मेरे महत्त्वपूर्ण भागीदार हैं। आपका सहयोग और विश्वास ही इन बच्चों के सपनों को नई उड़ान देता है।

'मैं' से 'हम' की यात्रा

मृणाल गौड़ (2003 बैच)



Mrigun Solutions & Mrigun Business Solutions LLP, Noida

विद्यालय केवल वह स्थान नहीं होता जहां हम विषयों का ज्ञान अर्जित करते हैं। वह हमारे भीतर जीवन को देखने की दृष्टि, निर्णय लेने का विवेक और कठिन समय में सही मार्ग पर टिके रहने का साहस भी पैदा करता है। वर्षों बाद पीछे मुड़कर देखता हूं तो लगता है कि मेरे जीवन की अनेक महत्त्वपूर्ण सीखें उसी विद्यालय की देन हैं।

2008 में Mechanical Engineering की शिक्षा पूरी करने के बाद लगभग 17 वर्षों तक Engineering Sales, Corporate Solutions और Business Development के क्षेत्र में काम करने का अवसर मिला। भारत के अधिकांश राज्यों में कार्य किया और कुछ Gulf Countries के Projects से भी जुड़ा। इन वर्षों में तकनीकी ज्ञान से कहीं अधिक लोगों को समझने, परिस्थितियों के साथ चलने और अवसरों को पहचानने का अनुभव मिला।

आज पिछले एक वर्ष से Mrigun Business Solutions नामक Consulting Firm का संचालन कर रहा हूं। मेरे लिए यह केवल एक व्यावसायिक प्रयास नहीं, बल्कि अपने अनुभव को समाज के लिए उपयोगी बनाने की एक कोशिश है। मेरी इच्छा है कि अधिक से अधिक लोगों को उनके अनुभव और कौशल के अनुरूप सही संस्थानों में अवसर मिल सकें और Oil & Gas, Refinery, EPC, Power तथा Infrastructure जैसी Engineering Companies को योग्य एवं कुशल Professionals उपलब्ध कराए जा सकें।

इसके साथ ही एक और उद्देश्य मेरे लिए विशेष महत्त्व रखता है- उन महिलाओं को पुन: Career का अवसर उपलब्ध कराना, जिन्हें पारिवारिक जिम्मेदारियों के कारण अपनी Jobs छोड़नी पड़ीं। नई पीढ़ी के साथियों को अपने साथ जोड़कर उन्हें व्यावहारिक अनुभव देना और उनसे निरंतर सीखते रहना भी इसी यात्रा का हिस्सा है।

जब सफलता भी संतोष न दे-

कई वर्षों तक MNCs में बड़े पद और अच्छे वेतन के साथ काम किया। बाहरी दृष्टि से सब कुछ ठीक था, लेकिन भीतर कहीं एक खालीपन था। संतोष नहीं था। धीरे-धीरे मन में प्रश्न उठने लगा- "फिर क्यों करूं?" काम में मन नहीं लगता था। ऐसा लगता था जैसे केवल अपने लिए आगे बढ़ने की यात्रा अधूरी है। तभी श्रीमद्भगवद्गीता का एक श्लोक भीतर कहीं गूंजा-

"सक्ता: कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत।
कुर्याद्विद्वांस्तथासक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम्॥" (गीता 3:25)

और यही वह मोड़ था, जब जीवन की दिशा बदलने लगी। लगा कि अब केवल अपने लिए नहीं, बल्कि दूसरों के लिए भी कुछ करना है। इस भाव को कबीर की सहज वाणी से भी महसूस किया जा सकता है कि "प्रेम गली अति साँकरी, तामें दो न समाय।" जब जीवन के केंद्र में केवल 'मैं' रहता है, तो दूसरों के लिए स्थान सीमित हो जाता है। लेकिन जैसे-जैसे 'मैं' का विस्तार 'हम' में होता है, जीवन का अर्थ भी व्यापक होने लगता है। शायद मेरे जीवन की यह यात्रा भी इसी परिवर्तन की यात्रा है-अपने लिए उपलब्धियां अर्जित करने से लेकर दूसरों के लिए अवसर पैदा करने तक।

विद्यालय से मिली तीन अमूल्य सीख

विद्यालय के प्रधानाचार्य जी की सदाचार वेला में कही गई अनेक बातें आज भी स्मृतियों में जीवित हैं। उनमें से तीन बातें मैंने जीवन के लिए जैसे लिख ली थीं।

1. **हस्ताक्षर हिंदी में-** हमें अपनी जड़ों और अपनी पहचान पर गर्व करना चाहिए। आज के समय में अलग दिखने की होड़ के बीच गीता का यह संदेश और भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है-

"श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः॥" (गीता 3:35)

अपने स्वभाव, अपनी क्षमता और अपने कर्तव्य के अनुरूप आगे बढ़ना ही वास्तविक सफलता है।

2. **व्यक्ति से व्यक्तित्व बनो-** यह वाक्य मेरे जीवन का एक निरंतर मार्गदर्शक रहा है। केवल किसी पद पर पहुंचना या उपलब्धियां अर्जित करना पर्याप्त नहीं। महत्त्वपूर्ण यह है कि हमारा व्यक्तित्व दूसरों के लिए कितना उपयोगी बनता है। आज तक इसी दिशा में काम कर रहा हूं और जीवनभर करता रहना चाहता हूं।

3. **संगठन में शक्ति है-** विद्यालय के संस्कारों से निकले अनेक छात्रों ने बड़ी उपलब्धियां हासिल की हैं। अनेक अभी अपनी मंजिल की ओर बढ़ रहे हैं और कुछ अपनी राह तलाश रहे हैं। हम सब अलग-अलग परिस्थितियों और आयु वर्ग के हो सकते हैं, लेकिन जब अग्रज, सहपाठी और अनुज सही समय पर एक-दूसरे का हाथ थाम लेते हैं, तब संघर्ष अकेले का नहीं रह जाता। मेरी अपनी यात्रा इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है।

संघर्ष के दिनों में मिला साथ

आज व्यावसायिक और औद्योगिक जगत में वर्षों से स्थापित व्यक्ति के लिए काम प्राप्त करना अपेक्षाकृत सहज हो सकता है। अनुभव, आर्थिक संसाधन और संपर्क उसका मार्ग आसान बनाते हैं। लेकिन किसी नए व्यक्ति के लिए शुरुआत करना आसान नहीं होता। योग्य और समर्पित होने के बावजूद उसे अनेक बाधाओं, लालफीताशाही और अनिश्चितताओं से गुजरना पड़ सकता है। ऐसे समय में मन कई बार हार मानने लगता है। लगता है कि रास्ता बदल लेना चाहिए। कभी-कभी तो ऐसा भी महसूस होता है कि इस संघर्ष को छोड़कर पीछे हट जाना ही बेहतर होगा। ऐसे ही एक कठिन दौर में गीता का एक और संदेश जीवन का संबल बना-

"हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्।
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः॥" (गीता 2:37)

अर्थ स्पष्ट था-परिस्थितियां चाहे जैसी हों, यदि मार्ग सही है तो संघर्ष से पीछे नहीं हटना चाहिए और फिर वही हुआ, जो विद्यालय में सीखा था-संगठन की शक्ति।

कठिन समय में अनेक अग्रजों ने सहायता का हाथ बढ़ाया। मोहन भैया, विजय मित्तल भैया और आशीष भैया (1991 बैच) ने सही लोगों से मिलवाया, मार्ग प्रशस्त किया और सही समय पर सही आर्थिक निर्णय लेने में सुझाव दिए। अनुराग भैया (1983 बैच) ने एक बड़ा Contract दिलवाया और अनुराग त्रिवेदी (2011 बैच) ने साथ काम करने का प्रस्ताव स्वीकार किया।

सहपाठियों का सहयोग भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं था। कठिन समय में उन्होंने मेरा साहस बढ़ाया, मेरे साथ खड़े रहे और आवश्यकता पड़ने पर आर्थिक सहयोग देने से भी पीछे नहीं हटे। नाम गिनाने बैठूं तो सूची बहुत लंबी हो जाएगी। इतने सारे आत्मीय लोग हैं कि सबका उल्लेख संभव नहीं। लेकिन मेरे मन का आभार उन सभी तक अवश्य पहुंचेगा।

अब यात्रा केवल मेरी नहीं है-

आज मैं Engineering Companies को Technical और Professional Manpower उपलब्ध कराने का कार्य कर रहा हूं। अपने इन्हीं अग्रजों, अनुजों और सहपाठियों के साथ मिलकर समाज में Employment Generate करने का एक छोटा-सा प्रयास कर रहा हूं। पीछे मुड़कर देखता हूं तो महसूस होता है कि करियर ने मुझे बहुत कुछ दिया, लेकिन विद्यालय के संस्कारों ने यह सिखाया कि उस उपलब्धि का सबसे सुंदर उपयोग दूसरों के जीवन में अवसर पैदा करना है।

शायद यही 'मैं' से 'हम' तक की यात्रा है और शायद यही किसी विद्यालय की सबसे बड़ी सफलता भी है कि उसके छात्र केवल अपने लिए सफल न हों, बल्कि अपनी सफलता को दूसरों के लिए अवसर में बदलने लगें।

श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्। (भगवद्गीता 4.39) श्रद्धा रखने वाले को ही ज्ञान मिलता है।

नास्ति विद्यासमं चक्षुः। (महाभारत, शान्तिपर्व) विद्या के समान कोई दूसरी आँख नहीं है।

कालिदास

पुराणमित्येव न साधु सर्वम्। (मालविकाग्निमित्रम् 1.2) कोई चीज़ केवल पुरानी होने से अच्छी नहीं हो जाती। विवेक से परखो।

शिक्षा का जीवन मूल्यों पर प्रभाव

अंकित तिवारी (2004 बैच)



शिक्षा, परिवार, समाज और अगली पीढ़ी के बीच जीवन-मूल्यों की कड़ी

शिक्षा का उद्देश्य केवल पढ़-लिखकर अच्छी नौकरी प्राप्त करना या आर्थिक रूप से सफल होना नहीं है। शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्माण करना है। वह हमें ज्ञान के साथ विवेक, सफलता के साथ जिम्मेदारी और अधिकारों के साथ कर्तव्यों का बोध कराती है। सही शिक्षा हमें यह समझने की क्षमता देती है कि जीवन की सार्थकता केवल व्यक्तिगत उपलब्धियों में नहीं, बल्कि परिवार, समाज और आने वाली पीढ़ियों के प्रति हमारी भूमिका में भी निहित है।

आज सामाजिक परिवेश तेजी से बदल रहा है। संयुक्त परिवारों की जगह छोटे परिवार ले रहे हैं, बच्चे शिक्षा और रोजगार के लिए दूसरे शहरों या देशों में जा रहे हैं और जीवन की गति पहले से कहीं अधिक तेज हो गई है। ऐसे समय में पुराने जीवन-मूल्यों की प्रासङ्गिकता कम नहीं हुई है, बल्कि उन्हें नए संदर्भ में समझने की आवश्यकता और बढ़ गई है।

सबसे महत्त्वपूर्ण मूल्यों में से एक है—माता-पिता के प्रति हमारी जिम्मेदारी।

हमारे माता-पिता ने हमारे बचपन और युवावस्था को बनाने में अपना जीवन लगा दिया। उन्होंने हमारी शिक्षा, स्वास्थ्य और भविष्य के लिए अनेक त्याग किए। इसलिए जब वे वृद्ध होते हैं और उन्हें हमारी आवश्यकता होती है, तब उनकी सेवा करना केवल नैतिक कर्तव्य नहीं, बल्कि हमारे संस्कारों और कृतज्ञता की अभिव्यक्ति भी है।

वृद्धावस्था में माता-पिता को केवल आर्थिक सहायता की आवश्यकता नहीं होती। उन्हें भावनात्मक सुरक्षा, सम्मान, संवाद और अपनेपन की आवश्यकता होती है। कई बार उनकी सबसे बड़ी चिंता यह नहीं होती कि उनके पास कितनी सुविधाएं हैं, बल्कि यह होती है कि परिवार में उनकी भूमिका और उपयोगिता क्या रह गई है।

यहीं बदलते सामाजिक परिवेश में हमारी एक महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी सामने आती है—माता-पिता के जीवन को अर्थपूर्ण बनाए रखना।

जब बच्चे अपनी पढ़ाई और नौकरी के कारण अलग शहरों में रहने लगते हैं, तब माता-पिता का सामाजिक और पारिवारिक दायरा धीरे-धीरे छोटा हो सकता है। पहले संयुक्त परिवार में रोजमर्रा की जिंदगी में उनकी सक्रिय भूमिका होती थी। बच्चों और पोते-पोतियों के साथ समय बिताना, परिवार के निर्णयों में भाग लेना और घर की गतिविधियों में योगदान देना उनके जीवन का स्वाभाविक हिस्सा था। छोटे परिवारों और दूरियों के कारण यह भूमिका कम हो सकती है।

ऐसे में केवल यह कहना पर्याप्त नहीं कि "हम उनकी आर्थिक जरूरतें पूरी कर रहे हैं।" हमें यह भी सोचना चाहिए कि उनके जीवन में उद्देश्य, सम्मान और सहभागिता कैसे बनाए रखें। उनसे बातचीत करना, उनके अनुभवों को सुनना, परिवार के महत्त्वपूर्ण निर्णयों में उनकी राय लेना, पोते-पोतियों के साथ उनका जुड़ाव बनाए रखना और उनकी रुचियों को प्रोत्साहित करना उनके जीवन को अर्थपूर्ण बना सकता है।

बढ़ती उम्र के साथ माता-पिता के साथ रहना इसलिए महत्त्वपूर्ण हो जाता है। हर व्यक्ति के लिए शारीरिक रूप से साथ रहना संभव नहीं हो सकता, लेकिन जहां संभव हो, वहां जीवन के निर्णयों में इस पहलू को महत्त्व देना चाहिए। साथ रहना केवल उनकी देखभाल नहीं है; यह अगली पीढ़ी को भी यह सिखाता है कि परिवार में बुजुर्गों का स्थान क्या है।

मेरे जीवन में इस विचार को समझने की प्रेरणा मेरे एक वरिष्ठ, मनीष कृष्ण, के जीवन से मिली। उन्होंने अपने व्यस्त पेशेवर जीवन के बावजूद अपने माता-पिता की सेवा और उनके साथ समय बिताने को महत्त्वपूर्ण माना। उनके व्यवहार को देखकर मुझे यह एहसास हुआ कि जीवन-मूल्य केवल किताबों में पढ़ने की चीज नहीं हैं; उन्हें अपने निर्णयों और व्यवहार में उतारना पड़ता है।

मनीष जी को देखकर मुझे यह समझने का अवसर मिला कि माता-पिता की सेवा केवल एक नैतिक जिम्मेदारी नहीं, बल्कि जीवन को सार्थक बनाने का एक माध्यम भी है। उनके जीवन में मैंने देखा कि करियर और पारिवारिक जिम्मेदारियों के बीच संतुलन बनाया जा सकता है, बशर्ते हम अपनी प्राथमिकताओं को सही ढंग से पहचानें।

उनसे मिली प्रेरणा ने मुझे अपने काम करने के तरीके पर भी विचार करने के लिए प्रेरित किया। जब तकनीक और काम की प्रकृति घर से काम करने की सुविधा देती है, तो वर्क फ्रॉम होम केवल एक पेशेवर सुविधा नहीं रह जाता। यह परिवार के साथ अधिक समय बिताने और वृद्ध माता-पिता के करीब रहने का माध्यम भी बन सकता है।

ऑफिस आने-जाने में लगने वाला समय बचाकर परिवार को दिया जा सकता है। आवश्यकता पड़ने पर माता-पिता के साथ रहा जा सकता है और उनके दैनिक जीवन में अधिक सक्रिय भूमिका निभाई जा सकती है। निश्चित रूप से हर नौकरी में वर्क फ्रॉम होम संभव नहीं है, लेकिन जहां विकल्प उपलब्ध हो, वहां व्यक्तिगत सुविधा के साथ-साथ पारिवारिक जिम्मेदारियों को भी निर्णय का हिस्सा बनाना चाहिए।

लेकिन शिक्षा और जीवन-मूल्यों का प्रभाव केवल अपने परिवार तक सीमित नहीं रहना चाहिए। बदलते सामाजिक परिवेश में समाज निर्माण में हमारा योगदान भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है।

समाज केवल सरकार या संस्थाओं से नहीं बनता। समाज का निर्माण हमारे रोजमर्रा के व्यवहार से होता है। हम अपने बच्चों को कैसे संस्कार देते हैं, बुजुर्गों के साथ कैसा व्यवहार करते हैं, सार्वजनिक स्थानों पर कैसी जिम्मेदारी दिखाते हैं, कमजोर और जरूरतमंद लोगों के प्रति कितने संवेदनशील हैं—इन सबका सामूहिक प्रभाव समाज के चरित्र पर पड़ता है।

शिक्षा हमें अपने अधिकारों के बारे में बताती है, लेकिन उससे भी महत्त्वपूर्ण है कि वह हमें अपने सामाजिक कर्तव्यों का बोध कराए। यदि शिक्षित व्यक्ति केवल अपने व्यक्तिगत विकास के बारे में सोचता है और समाज के प्रति उसकी कोई जिम्मेदारी नहीं है, तो शिक्षा का उद्देश्य अधूरा रह जाता है।

हमें बदलते समाज के साथ स्वयं को भी बदलना होगा, लेकिन बदलाव का अर्थ अपनी जड़ों को छोड़ना नहीं होना चाहिए। आधुनिकता और परंपरा को विरोधी मानने की आवश्यकता नहीं है। हम आधुनिक तकनीक, आधुनिक शिक्षा और आधुनिक कार्यशैली को अपनाते हुए भी अपने परिवार, संस्कार और सांस्कृतिक मूल्यों से जुड़े रह सकते हैं।

यही बात अगली पीढ़ी को अपनी जड़ों से जोड़ने के संदर्भ में और अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है।

आज के बच्चे वैश्विक दुनिया में बड़े हो रहे हैं। उनके मित्र, मनोरंजन, शिक्षा और ज्ञान के स्रोत केवल उनके आसपास का समाज नहीं, बल्कि पूरा विश्व है। यह निश्चित रूप से एक सकारात्मक अवसर है, लेकिन इसके साथ अपनी पहचान और जड़ों से जुड़े रहने की चुनौती भी है।

बच्चों को अपनी जड़ों से जोड़ने का सबसे प्रभावी माध्यम केवल किताबें नहीं, बल्कि परिवार है। दादा-दादी और नाना-नानी के साथ उनका समय बिताना, परिवार की कहानियां सुनना, अपने पूर्वजों के संघर्षों को जानना, स्थानीय संस्कृति और भाषा को समझना तथा परिवार के मूल्यों को अनुभव करना—ये सभी उन्हें अपनी पहचान से जोड़ते हैं।

यदि हम अपने बच्चों को बुजुर्गों से दूर कर देंगे, तो हम केवल एक पीढ़ी को दूसरी पीढ़ी से अलग नहीं कर रहे होंगे, बल्कि अनुभव और इतिहास की एक पूरी शृंखला को भी कमजोर कर रहे होंगे। एक बच्चे के लिए उसके दादा-दादी की कहानी किसी किताब से अधिक जीवंत हो सकती है। वह उसे परिवार के इतिहास के साथ-साथ धैर्य, संघर्ष, त्याग और जीवन के अनुभवों की शिक्षा देती है।

इसलिए माता-पिता की सेवा केवल वर्तमान पीढ़ी के प्रति हमारी जिम्मेदारी नहीं है। यह एक प्रकार से मूल्यों की विरासत को अगली पीढ़ी तक पहुंचाने का माध्यम भी है।

जब बच्चे देखते हैं कि उनके माता-पिता अपने वृद्ध माता-पिता का सम्मान और सेवा करते हैं, तो वे स्वयं भी वही व्यवहार सीखते हैं। इस प्रकार जीवन-मूल्य भाषणों से नहीं, व्यवहार से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचते हैं।

अंततः शिक्षा का वास्तविक प्रभाव हमारी डिग्रियों या पदों से नहीं, बल्कि हमारे जीवन के निर्णयों से दिखाई देता है। क्या हम सफलता के साथ अपने माता-पिता के लिए समय निकाल पाते हैं? क्या हम उनकी वृद्धावस्था को सम्मान और उद्देश्य दे पाते हैं? क्या हम बदलते सामाजिक परिवेश में समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी निभाते हैं? और क्या हम अपनी अगली पीढ़ी को आधुनिकता के साथ अपनी जड़ों से भी जोड़ पाते हैं?

इन प्रश्नों के उत्तर ही हमारी शिक्षा की वास्तविक सफलता को परिभाषित करते हैं।

शिक्षा हमें जीवन जीने का साधन देती है, लेकिन जीवन-मूल्य हमें यह सिखाते हैं कि उस जीवन को सार्थक कैसे बनाया जाए।

माता-पिता ने हमारे जीवन की नींव रखी। हमारी जिम्मेदारी है कि उनकी वृद्धावस्था को सम्मान और अर्थ दें। समाज ने हमें बहुत कुछ दिया है; हमारी जिम्मेदारी है कि हम उसके निर्माण में अपना योगदान दें। और आने वाली पीढ़ी हमारी विरासत है; हमारी जिम्मेदारी है कि उसे आधुनिक दुनिया के साथ अपनी जड़ों से भी जोड़े रखें।

यही शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य है—एक बेहतर व्यक्ति, एक मजबूत परिवार, एक संवेदनशील समाज और अपनी जड़ों से जुड़ी हुई अगली पीढ़ी का निर्माण।

श्लिष्टा क्रिया कस्यचिदात्मसंस्था, सङ्क्रान्तिरन्यस्य विशेषयुक्ता। (मालविकाग्निमित्रम्, अंक 1) किसी को विद्या स्वयं आती है, किसी में उसे सिखाने की विशेष कला होती है। जिसमें दोनों हों, वही श्रेष्ठ शिक्षक है।

मिशन निडर

संदीप शुक्ल (1983 बैच)



विद्यालय केवल शिक्षा प्राप्त करने का केंद्र नहीं होता, बल्कि वह संस्कार, सामाजिक उत्तरदायित्व और राष्ट्र निर्माण की भावना का भी केंद्र होता है। अपने विद्यालय तथा आदरणीय आचार्य श्री ओम् शङ्कर जी द्वारा निरंतर दिए गए संस्कारों और समाज के प्रति अपने दायित्व को निभाने की प्रेरणा से एक ऐसे विचार का जन्म हुआ, जिसने आगे चलकर "मिशन निडर" (मिशन निडर : आत्मविश्वास, आत्मरक्षा और जागरूकता की ओर एक सशक्त अभियान) के रूप में आकार लिया। यह केवल एक संस्था नहीं, बल्कि समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाने का एक सशक्त जनआंदोलन है।

मिशन निडर की स्थापना श्रीमती शिखा शुक्ला जी के साथ मिल कर एवं उनकी समर्पित टीम द्वारा इस उद्देश्य के साथ की गई कि हमारे समाज की बेटियां और विद्यार्थी मानसिक, शारीरिक तथा भावनात्मक रूप से इतने सक्षम बनें कि वे जीवन की प्रत्येक चुनौती का साहसपूर्वक सामना कर सकें। इस अभियान का मूल उद्देश्य "गर्ल्स एम्पावरमेंट" अर्थात बालिकाओं को आत्मविश्वासी, जागरूक, आत्मनिर्भर और सुरक्षित बनाना है।

आज का समय अभूतपूर्व अवसरों के साथ-साथ अनेक नई चुनौतियां भी लेकर आया है। विद्यार्थियों को केवल शैक्षणिक प्रतिस्पर्धा ही नहीं, बल्कि मानसिक तनाव, सामाजिक दबाव, साइबर अपराध, ऑनलाइन ठगी, साइबर बुलीइंग, अनुचित व्यवहार और आत्मविश्वास की कमी जैसी अनेक समस्याओं का भी सामना करना पड़ रहा है। ऐसी परिस्थितियों में केवल ज्ञान पर्याप्त नहीं है; आवश्यक है सही निर्णय लेने की क्षमता, आत्मबल और साहस।

मिशन निडर इसी दिशा में कार्य करता है। यह विद्यार्थियों को केवल आत्मरक्षा के कुछ उपाय नहीं सिखाता, बल्कि उनके भीतर आत्मसम्मान, आत्मविश्वास, नेतृत्व क्षमता, सही-गलत की पहचान और विपरीत परिस्थितियों में संयमपूर्वक निर्णय लेने का गुण विकसित करता है।

निडर होने का अर्थ यह नहीं कि मनुष्य को कभी भय न लगे। निडर होने का वास्तविक अर्थ है- भय को स्वयं पर हावी न होने देना और हर परिस्थिति का विवेक, साहस तथा आत्मविश्वास के साथ सामना करना।

मिशन निडर का विश्वास है कि प्रत्येक विद्यार्थी के भीतर असीम संभावनाएं छिपी होती हैं। आवश्यकता केवल उन्हें पहचानने और सही दिशा देने की होती है। जब एक छात्र या छात्रा स्वयं पर विश्वास करना सीख जाता है, तब वह केवल अपना जीवन ही नहीं बदलता, बल्कि समाज के लिए भी प्रेरणा बन जाता है।

विद्यालयों में आयोजित मिशन निडर की कार्यशालाएं दो महत्त्वपूर्ण चरणों में संपन्न होती हैं।

प्रथम चरण में देश के प्रतिष्ठित मोटिवेशनल स्पीकर्स विद्यार्थियों के भीतर आत्मविश्वास, सकारात्मक सोच, मानसिक दृढ़ता और जीवन के प्रति उत्साह का संचार करते हैं। संवाद, प्रेरक उदाहरणों और जीवन मूल्यों के माध्यम से विद्यार्थियों को यह समझाया जाता है कि कठिन परिस्थितियां सफलता की राह में बाधा नहीं, बल्कि अवसर होती हैं।

द्वितीय चरण में विभिन्न प्रतिष्ठित मार्शल आर्ट संस्थानों के अनुभवी प्रशिक्षक बालिकाओं को व्यावहारिक आत्मरक्षा का प्रशिक्षण देते हैं। इस प्रशिक्षण की विशेषता यह है कि इसमें किसी विशेष उपकरण या हथियार पर निर्भरता नहीं होती। विद्यार्थियों को सिखाया जाता है कि यदि कभी कोई संकटपूर्ण परिस्थिति उत्पन्न हो, तो वे अपने आसपास उपलब्ध सामान्य वस्तुओं का उपयोग करते हुए स्वयं की सुरक्षा कैसे कर सकती हैं तथा सुरक्षित स्थान तक कैसे पहुंच सकती हैं।

समय के साथ मिशन निडर ने अपनी कार्यशालाओं में साइबर सुरक्षा (Cyber Security) को भी प्रमुख स्थान दिया है। वर्तमान डिजिटल युग में इंटरनेट हमारे जीवन का अभिन्न हिस्सा बन चुका है। शिक्षा, बैंकिंग, संचार, मनोरंजन और सामाजिक जीवन-सब कुछ ऑनलाइन हो रहा है। लेकिन सुविधा के साथ साइबर अपराधों का खतरा भी लगातार बढ़ रहा है।

इसी कारण मिशन निडर विद्यार्थियों को सुरक्षित डिजिटल जीवन के लिए जागरूक बनाता है। कार्यशालाओं में उन्हें मजबूत पासवर्ड बनाने, फर्जी लिंक और मैसेज की पहचान करने, ऑनलाइन फ्रॉड से बचने, व्यक्तिगत जानकारी की सुरक्षा करने तथा किसी भी साइबर अपराध की स्थिति में घबराने के बजाय सही कानूनी एवं तकनीकी सहायता लेने की जानकारी दी जाती है।

मिशन निडर का उद्देश्य केवल जानकारी देना नहीं, बल्कि विद्यार्थियों में ऐसी सोच विकसित करना है जिससे वे स्वयं सुरक्षित रहें और दूसरों को भी जागरूक बना सकें।

आज आवश्यकता इस बात की है कि समाज मिलकर ऐसी पीढ़ी तैयार करे जो केवल शिक्षित ही नहीं, बल्कि संस्कारित, विश्वासी, सजग और साहसी भी हो। यदि हमारे बच्चे स्वयं पर विश्वास करना सीख जाएं, अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठाना सीख जाएं और सही समय पर सही निर्णय लेना सीख जाएं, तो न केवल उनका भविष्य सुरक्षित होगा बल्कि समाज भी अधिक सुरक्षित और सशक्त बनेगा।

मिशन निडर का लक्ष्य आने वाले वर्षों में इस अभियान को कानपुर से आगे बढ़ाकर भारत के अनेक शहरों तक पहुंचाना है, ताकि प्रत्येक बालिका और प्रत्येक विद्यार्थी स्वयं को सुरक्षित, सम्मानित और विश्वासी महसूस कर सके। यह केवल एक कार्यशाला नहीं, बल्कि एक सामाजिक चेतना है, जो भयमुक्त, जागरूक और आत्मनिर्भर भारत के निर्माण की दिशा में निरंतर आगे बढ़ रही है।

आइए, हम सभी इस संकल्प के साथ आगे बढ़ें कि हम स्वयं भी निडर बनेंगे, अपने परिवार और समाज को भी जागरूक बनाएंगे तथा आने वाली पीढ़ी को ऐसा वातावरण देंगे जहां हर बच्चा और हर बेटी आत्मविश्वास के साथ अपने सपनों को साकार कर सके।

"डर पर विजय ही सच्ची विजय है, और आत्मविश्वास ही सबसे बड़ी शक्ति है।"

इसी विश्वास के साथ-मिशन निडर, एक सुरक्षित, सशक्त और आत्मनिर्भर भारत की ओर।

आ परितोषाद्विदुषां न साधु मन्ये प्रयोगविज्ञानम्। (अभिज्ञानशाकुन्तलम् 1.2) जब तक विद्वान संतुष्ट न हों, तब तक अपने ज्ञान को सफल मत मानो।

ज्ञाने मौनं क्षमा शक्तौ। (रघुवंशम् 1.22) ज्ञान होने पर मौन रहना और शक्ति होने पर क्षमा करना सच्चा गुण है।

भारत को विश्वगुरु बनने के लिए अपनी जड़ों की ओर लौटना होगा

प्रतीक पांडे (2007 बैच)



शंघाई आने के बाद जब अपनी बेटी के लिए स्कूल तलाशना शुरू किया, तो भारतीय और चीनी शिक्षा व्यवस्था के बीच एक महत्त्वपूर्ण अंतर दिखाई दिया। दोनों देशों में समानता मुख्यत: प्रतिस्पर्धी परीक्षाओं तक सीमित नजर आती है। भारत में JEE और NEET जैसी परीक्षाएं हैं, तो चीन में Gaokao-एक ऐसी परीक्षा जिसकी तैयारी के लिए वहां के माता-पिता बच्चों को स्कूल के शुरुआती वर्षों से ही तैयार करना शुरू कर देते हैं।

लेकिन शिक्षा का वास्तविक अंतर इससे कहीं गहरा है।

1950 के दशक में चीन ने अपनी जड़ों की ओर लौटने और अपनी शिक्षा व्यवस्था को अंधाधुंध पश्चिमीकरण से बचाने का निर्णय लिया। प्राथमिक शिक्षा में सार्वजनिक विद्यालयों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही, जहां बच्चों में स्वच्छता, अनुशासन, व्यवस्था, नैतिकता, जीवन-कौशल और सामाजिक जिम्मेदारी जैसे मूल्यों को विकसित करने पर विशेष जोर दिया गया। आगे की माध्यमिक और उच्च शिक्षा को अधिक वैज्ञानिक तथा अनुसंधान-केंद्रित बनाया गया।

पिछले दो-तीन दशकों में चीन ने अपने विश्वविद्यालयों को विश्वस्तरीय शोध के केंद्रों के रूप में विकसित करने पर विशेष ध्यान दिया। आज वैश्विक शोध प्रकाशनों और शीर्ष विश्वविद्यालयों की सूची में चीन की बढ़ती उपस्थिति इस दीर्घकालिक प्रयास का परिणाम है।

यह परिवर्तन रातों-रात नहीं हुआ। इसके पीछे दीर्घकालिक सोच, बड़े नीतिगत निर्णय और समाज की सामूहिक भागीदारी रही। एक साझा भाषा और राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के माध्यम से देश को एक सूत्र में बांधने का प्रयास भी इसी व्यापक दृष्टिकोण का हिस्सा था।

इसका अर्थ यह नहीं है कि चीन पर पश्चिमी प्रभाव नहीं है। वैश्वीकरण के दौर में कोई भी समाज पूरी तरह बाहरी प्रभावों से अछूता नहीं रह सकता। फर्क यह है कि चीन ने अपने मूल सामाजिक और शैक्षिक ढांचे को पश्चिमी मॉडल की नकल बनने से काफी हद तक बचाए रखा। शायद यही कारण है कि वह आज दुनिया की प्रमुख आर्थिक और विनिर्माण शक्तियों में शामिल है।

सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि चीन ने विकास के लिए केवल बाहर की ओर नहीं देखा; उसने अपने भीतर भी झांका। उसने अपनी परिस्थितियों, अपनी क्षमताओं और अपनी जड़ों से शक्ति लेने का प्रयास किया। भारत के लिए भी यह एक महत्त्वपूर्ण सबक हो सकता है।

विश्वगुरु बनने का अर्थ केवल पश्चिमी मॉडल को अपनाना या आधुनिकता की दौड़ में सबसे आगे निकलना नहीं है। आधुनिकता और वैश्वीकरण आवश्यक हैं, लेकिन अपनी पहचान, अपनी ज्ञान-परंपरा और अपनी सामाजिक आवश्यकताओं की कीमत पर नहीं।

भारत को दुनिया से सीखना चाहिए, लेकिन अपनी दिशा स्वयं तय करनी चाहिए। हमें अपने भीतर झांकना होगा, अपनी जड़ों को समझना होगा और अपनी शिक्षा व्यवस्था तथा विकास मॉडल को अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप पुनर्गठित करना होगा।

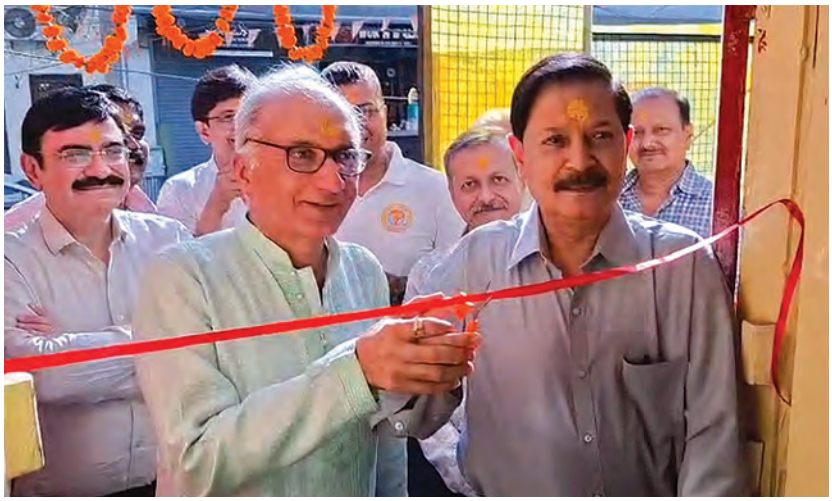
दुनिया से जुड़ना जरूरी है, लेकिन अपनी जड़ों से जुड़े रहना उससे भी अधिक जरूरी है। शायद भारत के विश्वगुरु बनने की यात्रा की शुरुआत यहीं से हो सकती है।

युगभारती आवासीय कार्यालय, कानपुर

दिनांक छह अप्रैल 2025 को राम नवमी के शुभ दिवस पर युगभारती के केन्द्रीय कार्यालय का उद्घाटन गुमटी नम्बर 5, कानपुर में विद्यालय के प्रथम बैच के छात्र एवं युगभारती सदस्य श्री विनय अजमानी व शशि शर्मा जी के द्वारा संरक्षक आचार्य श्री दीपक जी, अध्यक्ष श्री वीरेंद्र त्रिपाठी जी, महामंत्री डॉ. मोहन कृष्ण जी, अभय गुप्त जी, डॉ. प्रवीण सारस्वत जी, प्रवीण अग्रवाल जी, अजय शंकर जी, डॉ. मनोज अवस्थी जी, मनीष कृष्ण जी, निर्भय नौलखा जी आदि युगभारती सदस्यों की उपस्थिति में हुआ।

यह एक पूर्ण आवासीय कार्यालय है, जिसमें बाहर से आने वाले सदस्यों के ठहरने की सुविधा उपलब्ध है। परिसर में आवास, रसोईघर तथा अन्य आवश्यक मूलभूत सुविधाएं उपलब्ध हैं। युगभारती का कोई भी सदस्य आवश्यकता पड़ने पर प्रबन्धकारिणी समिति के पदाधिकारियों की पूर्व अनुमति एवं अनुमोदन के उपरांत यहां ठहर सकता है।

अध्यक्ष — श्री वीरेन्द्र त्रिपाठी, महामंत्री — डॉ. मोहन कृष्ण मिश्र
कार्यालय का पता- 119/59A-1, नसीमाबाद, कानपुर, सम्पर्क सूत्र- +91 76070 02395, +91 76070 05548















THE WORLD'S MOST ICONIC
TRANSFORMATIONS HAVE A NAME

MedLinks

Hair. Skin. Wellness.



Where **Skin. Hair. Aesthetics.** Meet **Global Standard**
From **Mary Kom's** confidence-enhancing transformation
to **Matthew Hayden, Virender Sehwag** & **Simon Doull's**
hair journeys and the timeless presence of **Gulshan Grover.**

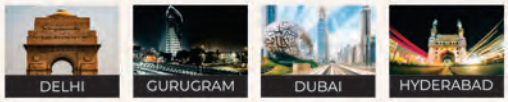
MedLinks has become synonymous with
expertise, precision and transformation.

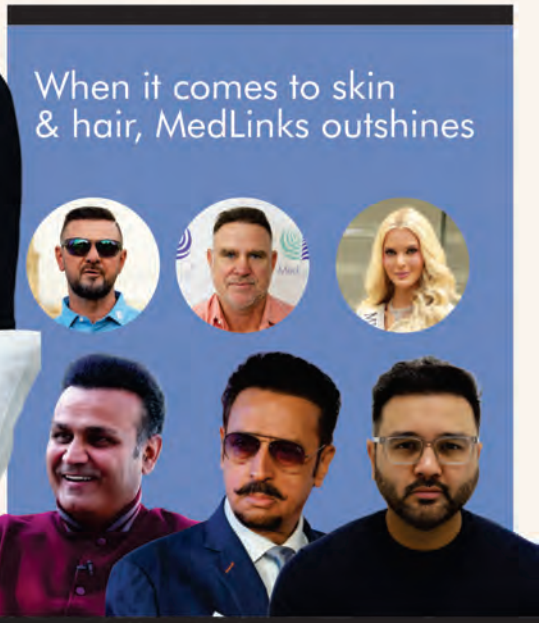
Services

SKIN AESTHETICS
HAIR TRANSPLANT
TRICHOLOGY
BODY & WELLNESS



TAKING INDIAN AESTHETICS TO THE GLOBAL STAGE





TO BOOK AN
APPOINTMENT: **+91 9560500888**

B1/10, Africa Ave, Block B 1, Safdarjung Enclave, New Delhi, Delhi 110029 | 25, NW Avenue (Club Road) 1st Floor Punjabi Bagh, New Delhi - 110026 | 5P, 1st Floor, Sector-43 Gurugram - 122009

www.medlinks.in www.hairtransplantdelhi.org

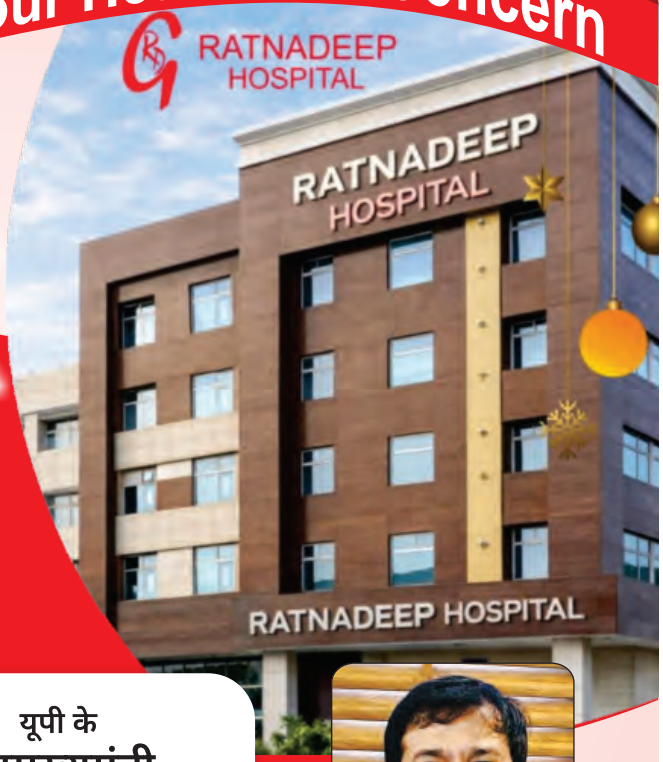
Ratnadeep Hospital

Your Health Our Concern



QCI
QUALITY COUNCIL OF INDIA

NABH
PRE ACCREDITED



विधानसभा अध्यक्ष
श्री सतीश महाना जी द्वारा सम्मान प्राप्त ।

- **ECHS, CGHS Empanelled**
- **Facilities Of All TPA's**



यूपी के
उपमुख्यमंत्री
श्री ब्रजेश पाठक जी
द्वारा
मेडिकल एक्सीलेंस अवार्ड
प्रदान किया गया।



डॉ.प्रदीप त्रिपाठी
DIRECTOR
MBBS, MS (Ortho),
Joint Replacement Surgeon

Sarvodaya Nagar, Kanpur 7233900037, 7233900038
0512-2220111, 0512-2500111 www.ratnadeephospital.com

स्वस्थ भव

(युगभारती स्वास्थ्य परामर्श केंद्र- स्वास्थ्य सेवा की ओर एक सार्थक पहल)

शिक्षा, स्वास्थ्य स्वावलम्बन एवं सुरक्षा जैसे चार प्रमुख आयामों पर कार्य करने वाली हमारी संस्था युगभारती द्वारा स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में सकारात्मक पहल करते हुए कानपुर, उ0प्र0 में "स्वस्थ भव- युगभारती स्वास्थ्य परामर्श केंद्र" की शुरुआत की गई। इस स्वास्थ्य केंद्र का उद्देश्य जरूरतमंद लोगों को सहज एवं गुणवत्तापूर्ण चिकित्सा परामर्श उपलब्ध कराना तथा समाज के विभिन्न वर्गों तक स्वास्थ्य सेवाओं की पहुंच सुनिश्चित करना है।

08 नवंबर 2025 को स्वरूप नगर, कानपुर स्थित फ्रेंड्स कॉलोनी, 113/2B में उपलब्ध स्थान पर विधिवत हवन एवं पूजन के साथ इस स्वास्थ्य केंद्र का शुभारंभ किया गया। इसके पश्चात यहां नियमित स्वास्थ्य परामर्श की व्यवस्था प्रारंभ हुई। 'स्वस्थ भव' केंद्र में सोमवार से शुक्रवार तक प्रतिदिन शाम 4 बजे से 5:30 बजे तक OPD संचालित की जाती है। यहां कानपुर के प्रतिष्ठित चिकित्सकों द्वारा मरीजों को स्वास्थ्य संबंधी परामर्श प्रदान किया जाता है।

इसी क्रम में 'स्वस्थ भव' केंद्र की स्वास्थ्य सेवा को जनसामान्य तक पहुंचाने के उद्देश्य से 05 अप्रैल 2026, रविवार को मेगा OPD एवं स्वास्थ्य शिविर का आयोजन किया गया। शिविर में लगभग 130 मरीजों ने पंजीकरण कराया। शिविर में मरीजों को नि:शुल्क चिकित्सकीय परामर्श के साथ बीपी, ब्लड शुगर एवं ECG जैसी आवश्यक जांच की सुविधा भी उपलब्ध कराई गई। चिकित्सकों के परामर्श के अनुसार मरीजों को तीन दिनों की दवाएं भी नि:शुल्क प्रदान की गईं। शिविर में विभिन्न चिकित्सा विशेषज्ञों ने अपनी सेवाएं दीं। इनमें बाल रोग विशेषज्ञ डॉ. विनीत अग्रवाल, नेत्र विशेषज्ञ डॉ. गौरव आनंद, हड्डी रोग विशेषज्ञ डॉ. हिमांशु बाजपेयी, डॉ. स्नेहाशीष मुखर्जी, दंत विशेषज्ञ डॉ. अभिनव कुशवाहा तथा वरिष्ठ फिजिशियन डॉ. सुशील कुमार एवं डॉ. सुरेन्द्र सेंगर प्रमुख रहे। इस अवसर पर युगभारती के अध्यक्ष वीरेन्द्र त्रिपाठी, वरिष्ठ सदस्य डॉ. प्रवीण सारस्वत, अभय गुप्त, अजय शंकर दीक्षित, शैलेन्द्र पांडेय एवं मनीष कृष्ण सहित संस्था के अनेक सदस्य उपस्थित रहे। पंजीकरण एवं दवा वितरण की व्यवस्था में मनोज नेगी, अक्षय अवस्थी, रेनू पांडे, प्रवीण अग्रवाल, राहुल खन्ना एवं अजित अग्रवाल ने सहयोग प्रदान किया।

स्वस्थ भव प्रकल्प के संयोजक डॉ. प्रवीण सारस्वत ने बताया कि स्वरूप नगर स्थित केंद्र में OPD को नियमित रूप से संचालित करने का प्रयास किया जा रहा है। यहां पंडित दीन दयाल उपाध्याय विद्यालय से शिक्षा प्राप्त तथा कानपुर के प्रतिष्ठित चिकित्सक समय-समय पर मरीजों को स्वास्थ्य परामर्श प्रदान करेंगे।

युगभारती का यह प्रयास केवल चिकित्सा परामर्श उपलब्ध कराने तक सीमित नहीं है, बल्कि समाज के जरूरतमंद वर्ग तक स्वास्थ्य सेवाओं को पहुंचाने और "स्वस्थ समाज — सशक्त समाज" की भावना को मजबूत करने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है। संस्था का उद्देश्य है कि अधिक से अधिक लोग इस सेवा से जुड़ें और समय पर स्वास्थ्य संबंधी उचित परामर्श प्राप्त करें। आने वाले समय में इस केंद्र के माध्यम से स्वास्थ्य जागरूकता एवं चिकित्सा सेवा के क्षेत्र में और अधिक कार्य करने की योजना है।

स्वस्थ भव, स्वस्थ समाज की दिशा में युगभारती की एक सार्थक पहल है।

OPD समय: सोमवार से शुक्रवार, शाम 4:00 बजे से 5:30 बजे तक

परामर्श हेतु संपर्क: 76070 02398, 76070 05548, 76070 02395




स्वस्थ भव
युग-भारती स्वास्थ्य परामर्श केन्द्र
परामर्श का समय : सोमवार से शुक्रवार
समय : अपराह्न 4 बजे से 5:30 बजे तक
परामर्श के लिए सम्पर्क करें : +91-7607002398
113/2 B फ्रेंड्स कॉलोनी, स्वरूप नगर, कानपुर


STITCHING ESSENTIALS


स्वस्थ भव
निःशुल्क स्वास्थ्य परामर्श शिविर
वरिष्ठ चिकित्सों द्वारा निःशुल्क परामर्श
आयुष्मान कार्डधारकों का मोतियाबिंद आपरेशन निःशुल्क किया जायेगा।
सम्पर्क करें : +91-7607002398
यहाँ अपना
नाम






स्वस्थ भव

युगभारती-शिव शक्ति प्राकृतिक ऑक्सीजन बैंक

"कौन कहता है कि आसमां में सुराख नहीं हो सकता, एक पत्थर तो तबीयत से उछालो यारों!"

कानपुर शहर के बीचोबीच ब्रह्मनगर चौराहे के समीप स्थित बेहाल पड़े गीता पार्क में जहाँ गंदगी का ही साम्राज्य हुआ करता था। वर्ष में एक बार रामलीला के दौरान होने वाली सफाई के बाद वर्ष भर जो पार्क गूदड़ का कार्य करने वालों की अराजकता और सीसामऊ जैसे व्यस्त बाजार के सार्वजनिक खुले मूत्रालय जैसे स्वरूप को ही अपनी नियति मान चुका था। वहां नजर पड़ी युगभारती पूर्व अध्यक्ष अजय शंकर दीक्षित जी की। अजय जी के अथक प्रयासों और शिव शक्ति सेवा संस्थान के सहयोग से युगभारती ने पर्यावरण संरक्षण प्रकल्प के अंतर्गत इस पार्क के सुंदरीकरण के साथ-साथ यहां वृहद वृक्षारोपण का संकल्प 03 मई 2026 को किया और प्राकृतिक ऑक्सीजन बैंक की परिकल्पना को मूर्त रूप देने का प्रयास प्रारम्भ कर दिया। अजय जी के दृढ़ निश्चय, जनसमुदाय के सहयोग और युगभारती के प्रयासों से गीता पार्क के उस हिस्से में जहाँ 03 मई 2026 के पूर्व एक भी पौधा नहीं हुआ करता था, जो सीसामऊ बाजार का सार्वजनिक मूत्रालय था, जहां गूदड़ का कार्य करने वालों की ही गंदगी बिखरी रहती थी, उस स्थान, उस प्राकृतिक ऑक्सीजन बैंक में सुंदरीकरण के साथ आज 15 अगस्त 2026 तक 1600 छोटे-बड़े पौधे रोपित किये जा चुके हैं। युगभारती के इस प्रयास को समुदाय ने भी खूब सराहा और समाचार पत्रों ने भी...

गीता पार्क की पूर्व की स्थिति







प्रयास के बाद की स्थिति









पर्यावरण के लिए शुरू किया ऑक्सीजन अभियान

कानपुर। पर्यावरण संरक्षण एवं हरित भविष्य के निर्माण की दिशा में युग भारती एवं शिव शक्ति सेवा संस्थान संयुक्त रूप से ''एक प्रयास ऑक्सीजन बैंक का'' अभियान का शुभारंभ रविवार को गीता पार्क में किया। मुख्य अतिथि गुलशन धूपड़ और विशिष्ट अतिथि संजीव दीक्षित ने उत्साहवर्धन किया। संयोजक अजय शंकर दीक्षित ने बताया कि पर्यावरण संरक्षण प्रत्येक नागरिक का नैतिक दायित्व है। नीम के वृक्ष रामबाग के 80 वर्ष के आनंद किशोर शुक्ल ने लगाए। डॉ. प्रवीण सारस्वत, विनय अजमानी, अवध बिहारी मिश्र, आरपी सिंह सेंगर, वीएन अवस्थी आदि रहे।



4 दैनिक जागरण, Kanpur, 1 May 2026

Focus daily, improve constantly. @DailyImprove

www.inextlive.com/

GREEN INITIATIVE

60 साल के अजय ने छोटे बच्चों की टीम के साथ शुरू किया बड़ा बदलाव

गर्मी की तपती धूप में एक पार्क में बैठकर वो सोच रहे थे कि काश किसी ने इस पार्क में बड़े-पेड़ लगाए होते तो आज मैं छाया में बैठ सकता था. पार्क में मवेशी और सुअर को लोटते देख मन में खयाल आया कि यहां तो बच्चों को खेलना चाहिए था, काश प्रशासन ने इस पर ध्यान दिया होता. और अगले ही पल इस काश का उत्तर खुद के दिल से निकला और उन्होंने डिसाइड किया कि कोई और क्यों, शुरुआत हम ही करते हैं. और इस तरह रामबाग में रहने वाले अजय शंकर ने गीता पार्क में सफाई और हरियाली का बीड़ा खुद ही उठा लिया. 60 साल के अजय शंकर साथ खड़े हुए गली मुहल्ले के छोटे-छोटे बच्चे और शुरू हो बदलाव की कहानी...

Save Parks Save Lives

kanpur@inext.co.in

KANPUR (30 April): आई नेक्स्ट की टीम जब पार्क पहुंची तो कई छोटे-छोटे बच्चे पार्क के एक कोने में सफाई में लगे थे. किसी के हाथ में झाड़ू था तो कोई आस-पास का कूड़ा बिन रहे थे. पार्क के दूसरे हिस्से में बड़ी-बड़ी झाड़ियां भी खड़ी थीं और वहां कुछ बच्चे हाथ में कुल्हाड़ी और खुरपी लेकर उसकी सफाई में लगे थे. पार्क के दूसरे हिस्से में कुछ यूथ हाथ में फावड़ा लेकर खुदाई और सफाई में लगे थे. तो एक हिस्से में एक ईसान कुछ पौधों को लगा रहा था और एक महिला पेड़ में पानी डाल रही थी. बच्चे, युवा और महिलाएं सभी सिर्फ इस बात के लिए एक साथ काम कर रहे थे कि उनके मुहल्ले का पार्क सुंदर हो जाए.

ऐसे हुई शुरुआत

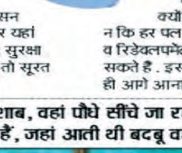
आखिर यह पॉसिब्ल कैसे हो रहा था, यह जानने के लिए हमने बात की अजय शंकर पांडेय से. इन्हें अगर पार्क की सफाई में लगी टीम का कैप्टन कहा जाए तो गलत न होगा. उन्होंने बताया कि वह पुणे काम से गए थे. वहां उन्होंने देखा की एक व्यक्ति ने पहाड़ों के बीच सैकड़ों पेड़ लगाने का काम शुरू किया था. वहीं से उन्हें प्रेरणा मिली. वो वापस कानपुर आए तो सोचा शुरुआत खुद ही करते हैं. पार्क में उस समय भीषण गंदगी थी. लोग शौच तक पार्क के अंदर ही कर देते थे. सुअर और मवेशियों ने अड्डा बना लिया था. झाड़ियों का जंगल था वो कहीं लोगों ने इसका यूज कूड़ाघर के रूप में करना शुरू कर दिया था. फिर फैसला किया कि आज से ही शुरुआत करते हैं.



अपनी टीम के साथ अजय शंकर.

थोड़ी जिम्मेदारी प्रशासन भी उठा ले तो बदल जाए सूरत

अजय शंकर कहते हैं कि उनके इस इनीसिएटिव को लोकल के बच्चों और लोगों का तो साथ मिला, लेकिन अगर प्रशासन भी इतना ही गंभीरता दिखा दे तो यह बदलाव की एक मिशाल बन जाए. उनका कहना है कि यहां कई अराजक तत्व आकर नशा भी करते हैं, न तो कोई माली है न ही कोई चौकीदार. अगर प्रशासन थोड़ा भी सहयोग कर दे और यहां बीच बीच में मॉनिटरिंग कर, सुरक्षा और स्वच्छता पर काम करे तो सूरत बदल जाए.



ये तो शुरुआत है, आगे बहुत काम करना है

अजय शंकर दीक्षित ने बताया कि गीताबाग से तो सिर्फ मैंने शुरुआत की है अगर लोगों की सपोर्ट मिला तो सिटी के उन सभी पार्क को स्वच्छ और सुंदर बनाने पर काम किया जाएगा. जोकि सालों से बदहाल पड़े हैं. बसर्ते उसकी देख-रेख करने की जिम्मेदारी स्थानीय लोगों को उठानी होगी. क्योंकि वह पहल कर सकते हैं कि हर पल वहां लगाए जाने वाले पौधे व रिडेवलपमेंट वर्क की निगरानी कर सकते हैं. इसके लिए स्थानीय लोगों को ही आगे आना पड़ेगा.

जहां लोग करते थे पेशाब, वहां पौधे सींचे जा रहे. जहां लोटते थे सुअर वहां बच्चे खेल रहे हैं, जहां आती थी बदबू वहां गुलाब महक रहे



पार्क एक हिस्से में किया गया पौधरोपण.



जहां लोटते थे सुअर, वहां बच्चे खेल रहे हैं

वर्तमान में उनके साथ स्थानीय बच्चे, महिलाएं व यूथ जुड़े गए हैं. जो डेली सुबह व शाम अपना श्रमदान करते हैं. उन्होंने बताया कि जहां एक माह पहले इस पार्क में गंदे जानवर लोटते थे, वहीं अब यह नन्हें बच्चे फुटबॉल व अन्य स्पोर्ट्स गेम खेलते दिखाई देते हैं. उन्होंने कूड़ा बिनने वाले बच्चों के हाथों में किताबें और फुटबॉल, बैट व बॉल थमा दी है.



महिला ने पानी देने की उठाई जिम्मेदारी

उन्होंने बताया कि पार्क में रैंकडों पौधों को बैरीकेडिंग कर लगाया गया है. जिनकी देखरेख और डेली पानी देने की जिम्मेदारी स्थानीय महिलाओं ने उठाई है. अजय शंकर बताते हैं कि जहां पर पौधे लगाकर ऑक्सीजन बैंक डेवलप किया जा रहा है. वहां स्थानीय लोग टॉयलेट व शौच कर जाते थे. अब वहीं स्थानीय सुंदर बगीचे के रूप में डेवलप हो चुका है.

KANPUR CALLING!

हमें व्हट्सएप्प करें 9839507720

अगर आप या आपका कोई मिलने वाला इसी तरह का कोई काम कर रहा हो तो उसकी जानकारी हमें दिए गए नंबर पर शेयर करें...

मासूम बच्चों की फौज का कमाल

अजय बताते हैं कि जैसे ही मैंने पार्क के एक कोने को साफ करने की कोशिश की, मुहल्ले के कुछ बच्चे जोकि कूड़ा बिनने का काम करते थे, वो भी आ गए. अजय ने उन बच्चों से कहा कि अगर खेलने और बैठने के लिए अच्छा पार्क चाहते हो तो तुम सब भी मेरे साथ इसकी सफाई में लग जाओ. फिर मासूम बच्चों की पूरी पलटन आ गई सफाई करने. आज सफाई करते-करते करीब 20 दिन हो गए और पार्क धीमे धीमे साफ होने लगा है.



पार्क में सफाई करते मासूम बच्चे.



खुदाई कर झाड़ियां हटाते लोग.



पार्क की सफाई में जुटे युवा.

युगभारती चित्रमाला


पं० दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय, नवाबगंज, कानपुर
हादश कक्षा १९८१


पं० दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय, नवाबगंज, कानपुर
इण्टरमीडिएट १९८४-८५






युग भारती
(इन्द्रप्रस्थ प्रकोष्ठ)
पं० दीनदयाल उपाध्याय सनातन धर्म विद्यालय, कानपुर
के पूर्व छात्रों द्वारा संचालित संस्था


युग - भारती
राष्ट्रीय अधिवेशन-2025



रजत जयंती वर्ष कार्यक्रम बैच 1982



रजत जयंती वर्ष कार्यक्रम बैच 1984



रजत जयंती वर्ष कार्यक्रम बैच 1982



रजत जयंती वर्ष कार्यक्रम बैच 1986



रजत जयंती वर्ष कार्यक्रम बैच 1988



रजत जयंती वर्ष कार्यक्रम बैच 1989



रजत जयंती वर्ष कार्यक्रम बैच 1990



होली मिलन कार्यक्रम 2024



होली मिलन कार्यक्रम 2026



लखनऊ अधिवेशन 2024



ओरछा अधिवेशन 2025



ओरछा अधिवेशन में बैच 96



ओरछा अधिवेशन 2025


युग भारती
शिव शक्ति
प्राकृतिक आक्सीजन बैंक
एक प्रयास ऑक्सीजन बैंक का
उद्घाटन समारोह
युग भारती व शिव शक्ति सेवा संस्थान
GREEN INITIATIVE



युग भारती सेवा



वंदना

सतीश चंद्र गुप्त (1991 बैच)



[बृहन्नला (लोप सर्ग) : पांडव अज्ञातवास में जाने के पहले कुल ऋषि धौम्य के साथ ईश-वंदना कर रहे हैं।]

"हे विनायक!" आपका हम ध्यान इस विधि से धरें
कि पितृ भी यदि शत्रु बनकर कंठ को खंडित करें,
ग्रह गजानन, वक्रतुंड या एकदंत ही बस बचे,
पर व्यथित ना हों तनिक भी, मान्यता अर्जित करें।

बन सकें हम विघ्न-नाशक शोक-हारक जगत के।
लोक हित को नत समर्पित, हों सहायक प्रगति के।
अल्प साधन, मूष वाहन, परिक्रमा पर विश्व की,
लक्ष्य साधे युक्ति से, परि-बंध तोड़ें नियति के॥1॥

"शंभु शंकर करुण सागर दान हम यह मांगते -
रूढ़ि-मर्दन हेतु तांडव-शक्ति हे नटराज दे।
ध्वंस कर अन्याय को हम धर्म का संबल बनें।
अबल का बल सिद्ध हों तू त्रिशूल कर में आज दे।

क्षीर मंथन से अमिय की लालसा सब ही करें,
पर गरल यदि हो प्रकट निर्द्वन्द्व वह भी पी सकें।
कंठ में ही रोक लें विष, उर कभी न विषाक्त हो,
जूट से निर्मल निकलकर पावनी गंगा बहें॥2॥

"शारदे मां हम सृजन की साधना में रत रहें,
कल्पना कोंपल खिलें और पल्लवित-पोषित रहें।
प्रखर चेतन बुद्धि बल का तुम हमें वरदान दो,
ज्ञान और विज्ञान को विकसित करें, विस्तार दें।

प्रार्थना करते कला साधन नहीं हो, साध्य हो,
प्रेरणा सरिता से सिंचन अनवरत निर्बाध हो।
साधना ही सिद्धि हो, धन-ख्याति का माध्यम नहीं।
सृजन की जिस भी विधा में रुचि जगे, आराध्य हो॥3॥

"हे दिवाकर! तेज तुझ सम जगत ज्योतिर्मय करे,
कर्म हों पावन हमारे, अग्नि में उतरें खरे।
पवन अपनी शक्ति देना, प्राण बन जग में बहें।
धर्म पालन की सुरभि उड़ व्योम के पहुंचे परे।

नमन धरती तू हमें है विविध विधि से पालती।
नमन वर्षा, नमन सरिता, सींचती, तू तारती।
पोषती है प्रकृति जैसे, हम भी संरक्षण करें,
उस सरीखे हम बनें यह ही यथोचित आरती॥4॥

"मातृ-भूमि प्रणाम तुझको, और तेरे पुराण को।
स्वेद का हर कण समर्पित देश के निर्माण को।
जन्मभूमि स्वर्ग से बढ़ राम ने भी यह कहा,
सर्वदा तुझपर निछावर हम करें मन-प्राण को।

सब सुखी हों, सब निरोगी, कष्ट से हर त्राण हो।
दिग्दिगंत विनष्ट दुर्मति, कलुषता निष्प्राण हो।
साहचर्य समाज समरस शांति का साम्राज्य हो।
व्याप्त हो चहुं ओर मंगल, सर्व जन कल्याण हो॥5॥

शिक्षा

ओम् शङ्कर
संस्थापक एवं संरक्षक युगभारती



शिक्षा उच्चारण-शास्त्र ज्ञान का मूल स्रोत,
मानव-जीवन के संस्कार का आर्षगोत,
शिक्षा ही सृष्टि सुधा की अमर कहानी है,
शिक्षाविद कुशल कलाओं वाला ज्ञानी है।

शिक्षा मानव के आदिज्ञान का व्यक्त भाव,
शिक्षा यशस्विता के प्रति निर्मित अबुझ चाव,
शिक्षा पुरुषार्थ पराक्रम का उद्‌बोधन है,
शिक्षा कौशल कर्मठता का संबोधन है॥

शिक्षा मानव की ममता का दैवी विधान,
संसारी विधिक व्यवस्था का यह संविधान,
शिक्षा सहयोग समन्वय की परिभाषा है,
शिक्षा जीवन से हर निराश की आशा है॥

शिक्षा उत्साह अनादि आदि का दर्शन है,
जग जीवन के सर्जना-ज्ञान का अर्जन है,
शिक्षा शरीर की प्राणशक्ति का अनुभव है,
शिक्षित के लिए सहज यह विभव-पराभव है॥

शिक्षा समाज परिवार व्यक्ति का संयोजन,
शिक्षा संबंधों का परिभाषित नामकरण,
शिक्षा सशक्त व्यक्तित्व भक्ति का योजन है,
शिक्षा मानवता का सांस्कृतिक प्रयोजन है॥

शिक्षा अथ से इति तक की राह सुझाती है,
शिक्षा ही मानव-मन की तृषा बुझाती है,
शिक्षा जगती के सिद्धिबोध का साधन है,
शिक्षा आजीवन सरस्वती आराधन है॥

शिक्षा स्वरूप के सहित स्वात्म का दर्शन है,
सभ्यता व्यवस्था-युत सौन्दर्य प्रदर्शन है,
शिक्षा भुजबल के साथ आत्मबल का हुलास,
वह समय पड़े पर प्रखर बुद्धिबल का विलास॥

शिक्षा संसारी सत्य तत्व का चिंतन है,
संसारी लोकव्यवस्था का अनुमंथन है,
शिक्षा हर अंधियारे की अद्‌भुत सूर्यकिरण,
मानव-मेधा को समझाती है जन्म-मरण॥

शिक्षा जननी का दूध जन्मभू की सुगंध,
शिक्षा चारों पुरुषार्थों का पावन प्रबंध,*
शिक्षा तन मन विवेक का सहज समन्वय है,
शिक्षा जीवन के उलझाओं का अन्वय है॥

शिक्षक विचारको मनीषियो! संकल्प करो,
निज सत्य सनातन पर मन में विश्वास भरो,
अध्येता स्वाध्यायी बनकर चर्चारत हो,
सच्ची शिक्षा का पहले खुद में स्वागत हो॥

**महाकाव्य*

हमारा विद्यालय, हमारा अभिमान

सुनील तनेजा (1981 बैच)



बूजी के पावन सपनों का,
यह सुंदर साकार रूप।
ज्ञान, संस्कार और सेवा से,
जगमग रहता इसका स्वरूप।।

सनातन धर्म की शिक्षा पाकर,
यहां खिलते हैं नन्हे प्राण।
सत्य, प्रेम और परिश्रम से,
बनता सबका जीवन महान।।

छात्रावास की छाया में सब,
रहते जैसे एक परिवार।
सुख-दुख बांटें, साथ बढ़ें,
प्रेम भरा सबका व्यवहार।।

गुरुवर ज्ञान-दीप जलाते,
मिटता अज्ञान का अंधकार।
शिक्षा, संस्कृति और सदाचार से,
होता जीवन का श्रृंगार।।

प्रात:काल की वंदना गूंजे,
मन में भर दे नव विश्वास।
खेल, कला और विज्ञान सिखाएं,
फैले उन्नति का प्रकाश।।

अनुशासन जिसकी पहचान है,
परिश्रम जिसका है सम्मान।
हर छात्र के उज्ज्वल भविष्य का,
यह करता है निर्माण।।

राष्ट्रभक्ति की पावन गाथा,
गूंजे इसके आंगन में।
भारत मां के सच्चे सपूत,
तैयार होते हैं जीवन में।।

हे विद्यालय! तुझे नमन,
तू शिक्षा का पावन द्वार।
तेरे चरणों में खिलता रहता,
ज्ञान-संस्कारों का संसार।।

दीन दयाल जी के आदर्शों
का है तू अनुपम अभियान।
हे दीन दयाल विद्यालय! तुझ पर,
हम सबको है अभिमान॥

TECHNOVATION
CONSULTANCY SERVICES

Skill Training | IT / ITES | Goods Services

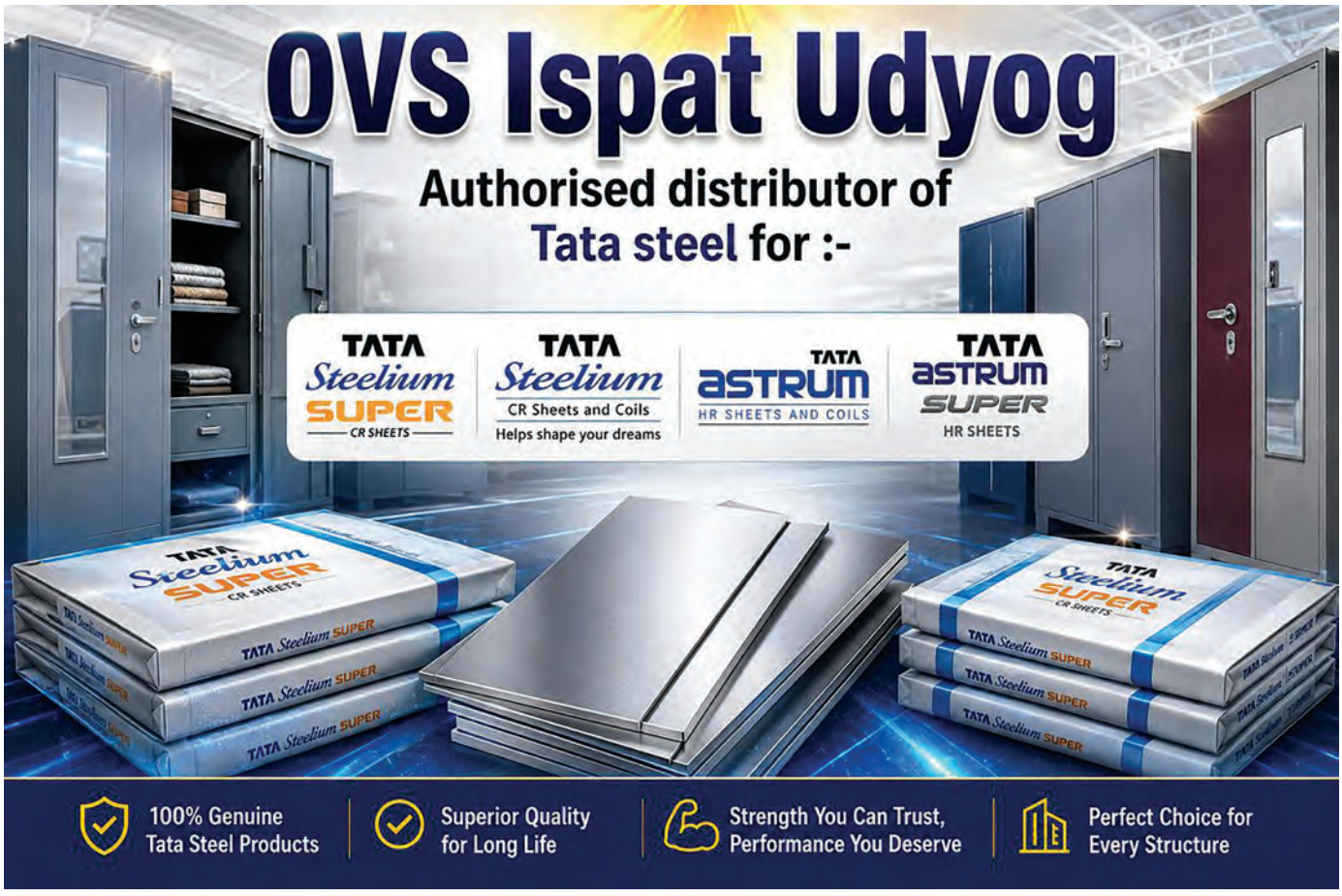
ANKIT JHA
DIRECTOR

9009785162

ankitjha.techonvation.cs@gmail.com

Office Address:
Flat No. 003, UNI Homes, Block C-2,
Bairagarh Chichli, Kolar Road,
Bhopal - 462042

TECHNOVATION
CONSULTANCY SERVICES



Global Coil Solutions

YOUR TRUSTED PARTNER IN

LUBRICANTS, FLUXES & BRAZING SOLUTIONS

High performance solutions for efficient and reliable coil manufacturing.



LUBRICANTS | FLUXES | BRAZING SOLUTIONS

Best Wishes from

Global Coil Solutions

anandsharma@globalcoils.in

OAK India Private Ltd.

MACHINERY & SOLUTIONS FOR THE

AIR CONDITIONING INDUSTRY

- HIGH QUALITY COILS & COMPONENTS
- RELIABLE PERFORMANCE & DURABILITY
- SUPPORTING A COOLER TOMORROW



Best Wishes from

Oak India Pvt Ltd.

anandsharma@oakindia.in | www.oakindia.in

भक्ति

विवेक गुप्त (बैच 1985)



भक्ति तो है सरिता,
निर्मल उसका बहाव।
शीतल है स्पर्श उसका,
जो मिटाए हर घाव।।

हर स्वरूप उसका,
सरल और सुगंधित।
जो जीवन को करता,
पावन और आनंदित।।

मधुर मुस्कान भक्ति की,
हर श्रृंगार है करती।
ये दिल से निकले तो,
हल्का भार है करती॥

छोटी सी भी भक्ति,
सबको देती संदेश।
इसके कारण दिल में,
प्रेम का होता प्रवेश॥

भक्ति दीप बनकर,
कर्तव्य पथ प्रशस्त करती।
ज्ञान-प्रकाश देकर,
अंधकार ध्वस्त करती।।

जो इसको पाकर,
साथ निष्ठा निभाता है।
वो ही अमरत्व की ओर,
अनवरत बढ़ता जाता है।।

मुस्कुराना प्रभु-भक्ति और,
रब की इबादत है।
हमको अब सत्य और,
इंसानियत की आदत है।।

मैं तो आजकल हमेशा,
मुस्कुराते चलता हूं।
प्रभु-भक्ति तो अब मैं,
दिन-रात करता हूं।।

ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्मापि नरं न रञ्जयति। (भर्तृहरि, नीतिशतक 3) थोड़े ज्ञान के घमंडी को ब्रह्मा भी नहीं समझा सकते।

Beyond Grades: Developing Internal Standards Through Education

Sanjay Kumar (1981 Batch)



The theme, "अशिक्षा, प्रत्येक समस्या की जड़ है और शिक्षा ही प्रत्येक समस्या का समाधान है," raises an important question for me and makes me reflect upon the quality and deeper purpose of education.

Is education mainly about learning and reproducing facts, gaining qualifications, securing employment and becoming economically independent? These are certainly important outcomes. However, should education stop there? Should it not also help us develop as whole human beings by shaping our judgement, values, beliefs and sense of responsibility?

In other words: Should education also help us develop our internal standards?

Education, Employability and the Skills Beyond a Degree

While reflecting on the relationship between education and employability, I began looking at different job advertisements. I noticed that the academic requirement was often written in a single line, for example:

"The applicant must possess a BSc in a relevant discipline."

However, the same advertisement usually listed several other essential and desirable qualities. Employers wanted people who could communicate clearly, work effectively within a team, manage pressure, meet deadlines, solve unfamiliar problems, adapt to change, show initiative and take responsibility.

This suggests that knowledge of an academic discipline alone does not guarantee employability or professional success.

A person may possess an excellent qualification but still struggle to communicate, cooperate, manage disagreement or respond constructively when a plan fails. Another person may have many original ideas but may not know how to organise, explain or sustain those ideas until they produce a meaningful outcome.

People therefore need more than subject knowledge. They also need clear communication, sound judgement, empathy, creativity, resilience, flexibility and responsibility. These capacities help people become effective professionals, problem-solvers, innovators, entrepreneurs, leaders and nation-builders.

From Information to Insight

We sometimes say: "The root of every problem is ignorance, and education is its cure."

This should not be understood as a simple slogan or an absolute statement. Many human problems are complex and have social, economic, political and historical causes. However, ignorance, half-knowledge, narrow thinking and lack of awareness often allow these problems to continue.

Corruption may be supported by weak ethical standards. Environmental destruction may arise when scientific knowledge is separated from responsibility towards nature. Communal conflict and caste

prejudice can be strengthened by distorted history, fear and an inability to understand another person's experience. Unemployment is not only a shortage of jobs; it may also reflect a gap between academic qualifications and practical, adaptable skills.

When education is reduced to obtaining a degree or securing a job, it may become too narrow. When education helps students understand a subject deeply, examine cause and effect and connect knowledge with real life, it becomes a powerful source of change.

If the problem is ignorance, the solution is not simply more information. It is insight—the ability to understand information, question it and use it responsibly.

From Knowledge to Original Contribution

While reflecting on this, I think of people such as Steve Jobs in the United States and Kunal Shah in India. They did not follow entirely conventional educational routes, yet they became known for identifying problems, developing original ideas and converting those ideas into products and enterprises that influenced everyday life.

This does not mean that formal education is unnecessary. Many highly educated people have made extraordinary contributions in science, medicine, engineering, education, technology and public service.

The important question is not whether conventional or unconventional education is better. The deeper question is: What enables a person to transform knowledge into an original idea and then convert that idea into meaningful action?

Having an idea is only the beginning. Many people may have similar ideas. What makes the difference is the ability to communicate the idea, engage other people, remain committed, manage criticism, learn from failure and continue when success is uncertain.

This is where internal standards become important.

Internal standards are the values, beliefs and expectations that guide a person from within. External standards include marks, prizes, praise, approval, status and fear of consequences. These have an important place, particularly during childhood. However, a person cannot depend upon external rewards throughout life.

An internal standard allows a young person to say:

- "No one may notice the quality of my work, but I still want to do it properly."
- "Others may be doing this, but it does not fit the person I want to become."
- "My idea has failed, but I will reflect, improve it and try again."
- "My abilities can help me succeed, but I also have a responsibility to use them constructively."

Internal standards help us decide not only what we are capable of doing, but also what we should do.

Knowledge gives us the skills required to perform a task or enter a profession. Internal standards guide us in deciding how, why and for whose benefit our knowledge and skills should be used. This is what can lead to responsible innovation, ethical leadership and meaningful contribution.

Mahatma Gandhi: An Internal Standard in Action

A simple and powerful example of an internal standard can be seen in Mahatma Gandhi's commitment to satya, or truth, and ahimsa, or non-violence.

Non-violence was not merely an idea that Gandhi discussed. It became a guiding standard through which he attempted to organise his life, decisions and public action.

Many people may have believed in non-violence. However, Gandhi converted this belief into a sustained social movement.

Was this path easy? Certainly not.

It required significant self-control, courage, communication, reflection and persistence. It required him to remain committed during criticism, opposition, uncertainty and suffering.

Gandhi's influence did not come simply from holding an idea. It came from organising his life and actions around that idea and bringing other people together towards a shared purpose.

His life should not be presented as an example of human perfection. An internal standard does not mean that a person never makes mistakes. It provides a reference point through which mistakes can be examined and direction can be restored.

Gandhi's internal standard guided his actions and left a recognisable mark on the history of India and the world.

The Deeper Responsibility of Education

The deeper purpose of education should therefore include helping children develop internal standards from the earliest stages of life.

Information is now increasingly available on demand. Students can access facts, explanations, lectures and demonstrations within seconds. The responsibility of a school can no longer be limited to delivering information.

Schools must also help young people learn to:

- separate facts from misinformation and propaganda;
- question information rather than accept it blindly;
- connect different ideas;
- communicate clearly and listen to others;
- understand different perspectives;
- make ethical choices;
- work collaboratively;
- manage uncertainty, stress and failure;
- reflect upon their decisions; and
- convert knowledge into responsible action.

True education should develop critical thinking so that students can examine evidence rather than simply follow popular opinion. It should develop empathy and dialogue so that differences do not immediately become hatred or conflict. It should develop scientific thinking so that superstition and misinformation can be challenged. It should develop practical skills and enterprise so that young people can become not only job-seekers, but also job-creators.

Education should also help students understand themselves. Reflection, philosophy, ethics and opportunities for quiet thought can support young people in managing stress, greed, envy and social pressure. Inner balance is not separate from achievement; it influences how achievement is pursued and used.

Schools as Developmental Ecosystems

I do not claim to be an educationist. However, as I reflect upon my childhood experiences and my professional work as a paediatric occupational therapist, I increasingly recognise the important role schools play in creating an ecosystem in which internal standards can develop.

I believe that every student has potential and that no student deliberately wants to do badly. However, students do not all need the same conditions to demonstrate their abilities.

Each child grows within a different ecosystem, shaped by family experiences, relationships, culture, language, opportunities, individual differences and ways of responding to the world.

Human development does not follow a perfectly straight line. A student may demonstrate mature thinking during a calm classroom discussion but struggle to use the same ability when feeling embarrassed, criticised, pressured or overwhelmed.

This does not necessarily mean that the student lacks the ability. It may mean that the student cannot access or use it successfully under those particular conditions.

A supportive educational ecosystem therefore asks not only:

"What can this student do?"

It also asks:

"Under what conditions can this student perform, participate and contribute successfully?"

The Role of Teachers

Teachers are a central part of this ecosystem. They do much more than deliver lessons or complete a syllabus. Through their relationships, observations and responses, they help students understand themselves and gradually take responsibility for their learning and behaviour.

Teachers can observe how a student manages disappointment, communicates an idea, listens to different viewpoints, works within a team and responds when an idea is challenged. They should therefore ask not only:

"Does this student have the skill?"

They should also ask:

"Under what conditions can this student use the skill successfully?"

This shift moves us away from judging students only through visible performance. It helps us understand what each student needs in order to think, communicate, participate and contribute more effectively.

From Internal Standards to Nation-Building

India needs knowledgeable doctors, engineers, teachers, scientists, entrepreneurs, artists, administrators and public servants. However, it also needs people who can think independently, work across differences, make ethical decisions and convert original ideas into solutions that serve society.

Nation-building begins when students learn to notice real problems and believe that those problems can be improved.

It may begin when a student notices food being wasted at school. It may begin when another student identifies a difficulty faced by a person with a disability. It may begin when a group develops an idea to protect the environment, support older people or improve learning for others.

Knowledge helps students understand such problems. Internal standards encourage them to take responsibility and act upon what they understand.

The question should therefore not be limited to: "Which career will this student enter?"

We should also ask:

- "What problem might this student help solve?"
- "What original idea might this student create?"
- "What value might this student add?"
- "How might this student contribute to the community and the nation?"

Conclusion

Grades are important. They can open doors to further education, respected professions and economic independence.

However, grades cannot determine what a person will do after the door has opened.

Internal standards guide whether a person will merely occupy a position or use it to create value. They guide whether a person will follow established ideas or have the courage to develop original ones. They guide whether success will remain personal or become a contribution to the wellbeing of others.

The true purpose of education is therefore not only to produce successful professionals. It is to develop self-directed human beings who can transform information into insight, knowledge into wisdom, ideas into action and personal achievement into social contribution.

Such students will not simply search for their place in the world.

They will help build a better world through the strength of their values, the originality of their ideas and the courage to make those ideas real.

Grades may open the door. Internal standards determine what a person does after the door has opened.

यदा किञ्चिज्ज्ञोऽहं द्विप इव मदान्धः समभवम्। (भर्तृहरि, नीतिशतक 8) जब मैं थोड़ा जानता था, तो हाथी की तरह घमंड में अंधा था। विद्वानों से सीखने पर समझ आया कि मैं मूर्ख हूँ।

FENA

BETTER PRODUCTS, CLEANER WORLD



फेना डिटर्जेंट पाउडर



फेना डिटर्जेंट बार



फेना पावरमैक्स डिटर्जेंट



फेना इम्पैक्ट वॉश पाउडर


फेना इम्पैक्ट वॉश बार

फैबरिक केयर



निप डिशवॉश पाउडर



निप डिशवॉश बार (पीला)



निप डिशवॉश बार (हरा)



निप डिशवॉश राउंड टब



निप डिशवॉश जेल



कॉप फ्लोर और टॉयलेट क्लीनर



फेमस ब्यूटी सोप - सैन्डल



फेमस ब्यूटी सोप - रोज़



फेमस ब्यूटी सोप - लेमन



फेमस ब्यूटी सोप - जेसमिन



फेमस लिक्विड हैंडवॉश

होम केयर

पर्सनल केयर

MADE IN INDIA WITH PRIDE

फेना ही लेना

50+ YEARS OF RESEARCH IN THE SCIENCE OF WASHING

Product Images are for representation purpose only. Actual may differ.

Fena POWERWASH | Fena Impact Wash | NIP NATURE & SHAKTI | COP | FAMUS BEAUTY SOAP | HANDWASH

Fena (P) Limited, A-237, Okhla, Phase-1, New Delhi-20, India | 011- 69057100 | response@fena.com | www.fena.com

LIFE LINE TECHNOCRATES PVT. LTD.

SOLUTION OF ALL ELECTRICAL (H.T. & L.T.) & FACILTY MANAGEMENT UNDER ONE ROOF

A.M.C.	OPERATION & MAINTENANCE	I.T.C.	E.P.C.
TESTING- H.V. & L.V.	RETROFITTING	TRANSFORMER OIL DEHYDRATION	ELECTRICAL THERMOGRAPHY
TURNKEY PROJECTS	ENERGY AUDIT	CABLING	EARTHING
SYSTEM INTEGRATION	SYSTEM DESIGNING	REPAIRING & SERVICING	SPARES

TRANSFORMERS -POWER & DISTRIBUTION	CABLE TESTING	PANELS- H.T. & L.T.	SF6 CIRCUIT BREAKERS
VACCUM CIRCUIT BREAKERS (V.C.B.)	AIR CIRCUIT BREAKERS (A.C.B.)	RELAY'S - TESTING	PRESSURE PUMPS
POWER FACTOR PANELS	EARTHING TESTING	ELECTRICAL MOTORS	ELECTRICAL PUMPS

Head Office : 95 , New Arya Nagar, Patel Marg Chowk , Ghaziabad -(U.P.) -201001
Mob. : 9599298800 / 01 / 02 / 03 & 9810257900 e mail : saurabh@lifelinetechgroup.com GSTIN: 09AACCL3745Q1ZW

India's Higher Education at a Crossroads : Are We Losing Sight of Teaching in the Race for Research?

By Professor Shubhendra Singh Parihar (1989 Batch)



India's higher education system is passing through one of the most significant transformations in its history. The implementation of the National Education Policy (NEP) 2020, the expansion of multidisciplinary education, flexible degree structures, Academic Bank of Credits, and the growing influence of accreditation and ranking systems such as NAAC and NIRF have fundamentally altered the priorities of universities and colleges across the country.

At first glance, the transformation appears promising. Student enrolment in higher education has reached an all-time high of 4.33 crore, compared to 3.42 crore in 2014-15. The Gross Enrolment Ratio (GER) has increased from 23.7 percent to 28.4 percent during the same period, reflecting greater access to higher education. The government has also set an ambitious target of achieving a 50 percent GER by 2035.

However, beneath these encouraging numbers lies a growing concern: Is India's higher education system becoming excessively research-centric at the cost of teaching quality and student employability?

The Research Race

Over the past decade, academic research has emerged as one of the most influential parameters in institutional rankings. NIRF, international rankings, NAAC assessments, and accreditation frameworks increasingly reward publications, citations, patents, and funded projects. Consequently, universities—particularly private institutions—have begun placing immense pressure on faculty members to publish in journals indexed in Scopus, ABDC, Web of Science, and even prestigious FT-50 journals.

While such expectations are reasonable for research-intensive institutions like the Indian Institutes of Technology, Indian Institutes of Management, and leading central universities, the same framework has been indiscriminately applied across institutions with vastly different missions and capabilities.

Faculty members who were once celebrated for their teaching excellence, student mentoring, and industry engagement now find themselves struggling to meet publication targets. Many spend more time preparing research manuscripts than developing classroom pedagogy, mentoring students, or building industry connections.

Simultaneously, a new generation of faculty entering academia often possesses stronger research credentials but limited classroom experience. The result is a growing imbalance between research productivity and teaching effectiveness.

Expansion Without Quality

India's higher education sector has witnessed unprecedented expansion. According to the All India Survey on Higher Education (AISHE), the country now has more than 1,100 universities and over 45,000 colleges. Hundreds of new universities have been established in the last decade alone.

The expansion has increased access, but it has also intensified competition for students. To sustain enrolment levels, many institutions have expanded seat capacity aggressively. As a consequence, academically stronger students are spread across a larger number of institutions, while many colleges admit students primarily on the basis of their ability to pay fees rather than academic preparedness.

This has created a dual challenge:

- Declining student preparedness at entry level.
- Reduced faculty attention toward teaching and mentoring.

The combined effect is reflected in the employability concerns repeatedly raised by industry bodies and employers. Despite rising enrolment figures, many graduates struggle to meet workplace expectations regarding communication, analytical thinking, problem-solving, and professional skills. Studies on graduate employability have consistently highlighted a mismatch between higher education outcomes and industry requirements.

The Hidden Crisis of Research Quality

Another unintended consequence of publication pressure is the deterioration of research quality.

When faculty performance evaluations become heavily dependent on publication counts, quantity often begins to overshadow quality. Across many institutions, researchers face pressure to publish quickly rather than meaningfully. This has encouraged the growth of superficial studies, repetitive surveys, poorly validated datasets, and research with limited practical relevance.

Many academics privately acknowledge the prevalence of questionable data collection practices, excessive extrapolation, and studies conducted merely to satisfy institutional requirements. Such research may contribute to publication statistics but often provides little value to society, industry, policymakers, or local communities.

The fundamental purpose of research—to solve real-world problems and generate new knowledge—is at risk of being diluted by an excessive emphasis on publication metrics.

Where Are We Going Wrong?

The problem may not lie in promoting research. Research is essential for innovation, national competitiveness, and knowledge creation. The challenge arises when a single framework is used to evaluate all institutions irrespective of their mission.

Not every institution is designed to be a research university.

Some institutions excel at undergraduate teaching. Others focus on professional education, skill development, community engagement, or regional workforce development. Yet ranking and accreditation frameworks often encourage all institutions to pursue similar research-driven objectives.

This "one-size-fits-all" approach may be producing unintended distortions.

The Missing Link: Undergraduate Education

Perhaps the most neglected aspect of the debate is undergraduate education.

A significant gap exists between school education and higher education. Many students entering colleges struggle with language proficiency, analytical reasoning, quantitative skills, and learning discipline.

Faculty members often spend considerable effort addressing foundational deficiencies before they can begin advanced instruction.

Unless undergraduate education becomes the central focus of reform, improvements in research output alone will not enhance national human capital.

India's demographic dividend can become an economic advantage only if higher education institutions produce competent graduates who are employable, adaptable, and capable of lifelong learning.

A Way Forward

India requires a differentiated higher education ecosystem.

Research universities should be encouraged and funded to produce world-class research. Teaching-focused universities should be rewarded for student learning outcomes, graduate employability, mentoring quality, and industry engagement. Community and regional colleges should be evaluated on their contribution to local development and workforce readiness.

Ranking and accreditation systems must evolve to recognize these diverse missions rather than measuring all institutions through a largely uniform framework.

The future of Indian higher education depends not only on the number of research papers published but also on the quality of graduates entering society and the workforce.

As India moves toward the ambitious goals envisioned under NEP 2020, policymakers, regulators, and academic leaders must remember a simple truth: a nation cannot publish its way to prosperity if it neglects the quality of teaching and the development of its youth.

The challenge before India is not choosing between research and teaching. The challenge is achieving excellence in both.

सुखार्थिनः कुतो विद्या, विद्यार्थिनः कुतः सुखम्। (चाणक्य नीति) सुख चाहने वाले को विद्या कहाँ, और विद्या चाहने वाले को सुख कहाँ।

अजरामरवत् प्राज्ञो विद्यामर्थं च चिन्तयेत्। (हितोपदेश, प्रस्ताविका 3) विद्या और धन ऐसे कमाओ, मानो तुम कभी बूढ़े नहीं होगे और कभी मरोगे नहीं।

क्षणशः कणशश्चैव विद्यामर्थं च साधयेत्। (संस्कृत सुभाषित) विद्या हर क्षण के उपयोग से और धन हर कण बचाकर प्राप्त करो।

हमारे विशिष्ट सहयोगी

बैच	नाम	बैच	नाम
1975	अजय अग्रवाल	1985	गोविंद शंकर पांडे
1988	जयन्त सोमानी	1996	अम्बरीष दीक्षित
1999	डॉ. पंकज चतुर्वेदी	1977	विनय अग्रवाल
1983	योगेश मिश्र	1978	हेम कुमार जैन
1978	धर्मवीर त्रेहान	1983	आनंद कुमार गुप्त
1989	डॉ. अपूर्व रंजन शर्मा	1983	सौरभ सिंघल
1988	शिव प्रकाश खरे	1983	सिद्ध नाथ गुप्त
1989	डॉ. शलभ गुप्त	1984	बालेन्द्र प्रताप सिंह
1986	डॉ. प्रवीण भागवत	1995	अश्वनी कुमार गुप्त
1977	नवीन भार्गव	1988	डॉ. संतोष कुमार मिश्र
1991	विकास मिश्र	1982	संदीप बंसल
1977	विजय कुमार अग्रवाल	1988	मनीष कृष्णा
1975	शशि शर्मा	2001	अभय किशन
1991	आदर्श पुरवार	1993	आलोक पांडे
1992	अमित गुप्त	1977	आनंद शर्मा
1986	अवधेश कुमार गौतम	1992	गोपाल कृष्ण सिन्हा
1989	हर निशिथ सहाय	1976	हरि कांत मिश्र
1987	कर्नल पवन पांडे	1988	प्रभाकर बिसेन
1988	प्रदीप दीक्षित	1983	प्रदीप श्रीवास्तव
2007	प्रतीक पांडे	1982	डॉ. प्रवीण सारस्वत
1978	राजीव शर्मा	1982	राजेश सहिजवानी
1977	रमेश कुमार गुप्त	1986	संजय डिमरी
1985	शैलेश गुप्त	1987	सुभाशीष गुप्त

1995	उत्कर्ष द्विवेदी	1992	वैभव श्रीवास्तव
1985	विवेक गुप्त	1988	अनुपम मिश्र
1977	अमित सेठ	1978	दीपक सक्सेना
1982	राजेश कुमार गुप्त	1985	संजय कुमार सिंह
2005	कीर्तिमान मिश्र	1975	नवीन चन्द्र गुप्त
1989	सुनील निगम	1998	यज्ञदत्त मिश्र
1991	संदीप बोडास	1988	डॉ. बृजेश बाजपेयी
1997	डॉ. जलज कुमार	1988	प्रशांत शुक्ल
1988	डॉ. राकेश कुमार शुक्ल	1988	रंजन खन्ना
1983	संजय गौड़	1991	शिशिर कांत
1988	विवेक सचान		

तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु। (शुक्ल यजुर्वेद 34.1) मेरा मन शुभ संकल्पों वाला हो।

गीता और महाभारत (व्यास)

अधिवेशन आयोजन समिति

क्र. सं.	बैच	नाम
1.	1977	संजय गर्ग
2.	1977	रमेश कुमार गुप्त
3.	1977	आनंद शर्मा
4.	1981	विजय मित्तल
5.	1985	जितेंद्र सरावगी
6.	1986	शुभेंदु शेखर अवस्थी
7.	1986	हेमंत खरे
8.	1986	संजय शर्मा
9.	1987	शुभाशीष गुप्त
10.	1988	शिव प्रकाश खरे
11.	1990	प्रकाश चंद्र त्रिपाठी
12.	1992	अमित कुमार गुप्त
13.	1993	आलोक पांडेय
14.	1995	अश्विनी गुप्त
15.	1997	अखिल तिवारी
16.	1997	अंशुमन गुप्त
17.	1998	राणा प्रताप सिंह
18.	1999	अभय शुक्ला
19.	2000	उदित सिंह
20.	2006	जागृत गुप्त
21.	2012	प्रशांत मिश्र
22.	2016	सचिन पाठक
23.	1988	मनीष कृष्ण (केंद्रीय प्रबन्धकारिणी द्वारा नामित)

युग-भारती प्रबंधकारिणी समिति



आचार्य श्री ओमशंकर जी
संस्थापक एवं संरक्षक



आचार्य श्री दीपक जी
उप संरक्षक

संरक्षक मंडल



विनय अजमानी



ओमप्रकाश मोटवानी



डॉ प्रवीण सारस्वत



डॉ मलय चतुर्वेदी



अजयशंकर दीक्षित

मुख्य कार्यकारी



वीरेंद्र कुमार त्रिपाठी
अध्यक्ष



प्रवीण अग्रवाल
उपाध्यक्ष



डॉ मोहन कृष्ण मिश्र
महामंत्री



अभय गुप्त
कोषाध्यक्ष



मनीष कृष्णा
संगठन सचिव



डॉ पवन मिश्र
योजना सचिव



डॉ शैलेन्द्र पांडेय
व्यवस्था सचिव



अखिल तिवारी
आई टी सचिव



प्रो शुभेन्द्र सिंह परिहार
मंत्री



प्रो मनोज अवस्थी
सह-कोषाध्यक्ष



निर्भय सिंह नौलखा
सह-संगठन सचिव

क्षेत्र संयोजक



विजय मित्तल
इंद्रप्रस्थ क्षेत्र



पुनीत श्रीवास्तव
अवध क्षेत्र



प्रो पवन त्रिवेदी
देव भूमि क्षेत्र



दृश्यमुनि चकमा
उत्तर पूर्व क्षेत्र



डॉ अरुण कुमार मिश्र
सौराष्ट्र क्षेत्र



प्रदीप श्रीवास्तव
मध्य भारत क्षेत्र



विवेक भागवत
पश्चिम भारत क्षेत्र



प्रदीप कुमार पांडेय
दक्षिण भारत क्षेत्र

विशेष आमंत्रित सदस्य



नवीन भार्गव CA
महा लेखापरीक्षक

युगप्रभा सोपान

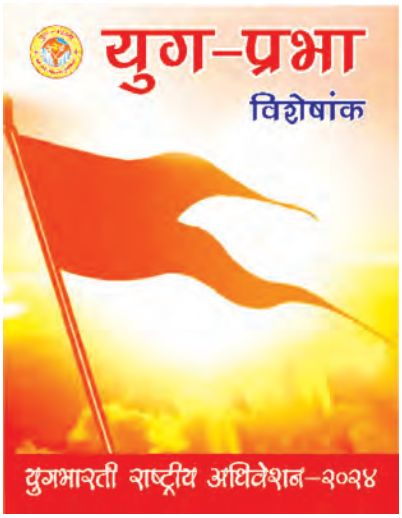

युग - प्रभा
प्रथम रश्मि

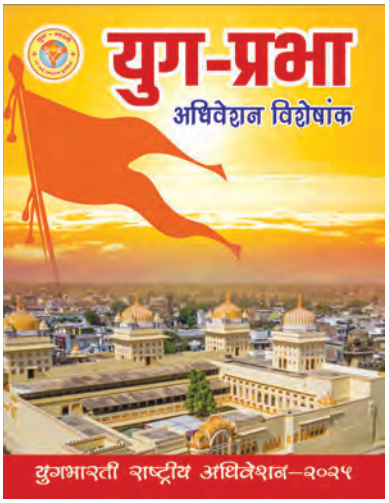

युग-प्रभा
द्वितीय रश्मि


युग-प्रभा
तृतीय रश्मि


युग प्रभा
"स्मारिका"
शैक्षिक गोष्ठी


युग-प्रभा
युग-भारती
युग-भारती


युग-प्रभा
विशेषांक
युगभारती राष्ट्रीय अधिवेशन-२०२४


युग-प्रभा
अधिवेशन विशेषांक
युगभारती राष्ट्रीय अधिवेशन-२०२५

मिल्कोमोर
पशु आहार



दूध बहेगा,
मुनाफा बढ़ेगा..



निर्माता
कपिला
कृषि उद्योग लि.

सम्पर्क करें
9310500105

विश्वसनीयतम उत्पाद | सबसे ज़्यादा पोषण 75% | अच्छा स्वास्थ्य | ज़्यादा दूध | लंबी आयु

GAMP Technologies & Saiyam Healthcare

Pharmaceutical Expertise — From Advice to Action

The pharmaceutical industry today demands more than compliance on paper. Regulators and customers expect **sound science, robust processes, data integrity and consistent quality** which is the philosophy behind **GAMP Technologies Pvt. Ltd. and Saiyam Healthcare**.

Founded in Panchkula in 2015 by **Dr. Govind S. Pandey**, GAMP Technologies brings together more than three decades of pharmaceutical experience in **R&D, manufacturing, quality, regulatory affairs, engineering, training and consultancy**.

Dr. Pandey has held senior responsibilities with organizations including **Wockhardt, Cadila, Intas, Mylan, Ranbaxy, Panacea Biotec and Alkem**, giving GAMP a strong foundation of practical industry experience. He is also a **Six Sigma Black Belt** in process optimisation and problem solving.



Dr. Govind S. Pandey
Batch 1985
Director, GAMP Technologies Pvt. Ltd.
and Saiyam Healthcare

From R&D to Manufacturing

GAMP provides pharmaceutical companies with support in **Product development, GMP readiness, Quality systems, Regulatory compliance, Pharma Projects & engineering, Technology transfer and Training**.

That consulting and technical experience is complemented by **Saiyam Healthcare**, GAMP's manufacturing arm at **Kurali, Punjab**.

Saiyam operates a pharmaceutical manufacturing facility focused on **tablets and capsules, including hormonal solid-dosage products**, where containment, cleaning validation and cross-contamination control are particularly important.

GAMP AT A GLANCE

Established: 2015 | Base: Panchkula, Haryana
Manufacturing: Saiyam Healthcare, Kurali, Punjab
Focus: R&D Quality Regulatory Engineering Manufacturing Training Consultancy

One Group. One Quality Philosophy.
GAMP Technologies and Saiyam Healthcare are bringing pharmaceutical expertise, regulatory understanding and manufacturing experience together — turning knowledge into practical solutions and quality into everyday operations

